पैरों में पंख बाँध कर

रामवृक्ष बेनीपुरी

प्रकाशक

लोक सेवक प्रकाशन

प्रथम संस्करण १०००	साढ़े चार रुपया	सम्वत् २००६

मुद्रक

रामनिधि त्रिपाठी

शिवराम प्रेस, मच्छोदर, काशी

विषय-सूची



लेखक अपने एक मित्र के साथ

पैरों में पंख बाँधकर

क : उड़ता चल, कबूतर !

१६ अप्रैल, ५१
पटना—दिल्ली

यह देखिये, मेरे पैरों में पंख लग गये, मैं उड़ रहा हूँ। हाँ, मेरे पैरों में पंख बँध गये हैं, मैं उड़ रहा हूँ, उड़ा जा रहा हूँ।

यह, मैं इस एरोड्रम के ऊपर हूँ। वह ताड़ अब मेरे बहुत नीचे है। धरती की सीमायें जैसे सिमटी जा रही हैं। अब वे छिटपुट खेत नहीं, एक मुसल्लम धारीदार चादर हैं। वह गंगा का कछार। तेज धूप की तिलमिलाहट में ऐसा लग रहा है कि हिमालय की सीढ़ी का पहला ज़ीना हो वह !

नीचे की सारी चीज़ें छोटी होती जा रही हैं। ताड़-खजूर, आम-नीम—सब मिलकर झरबेरी की छोटी-छोटी झुरमुटें ऐसी। पृथ्वी अब शतरंज की एक लम्बी बिसात लगती है—किसी अनसिखुए की बनाई—धारियाँ टेढ़ी-मेढ़ी, खाने छोटे-बड़े। किन्तु शतरंज की बिसात की तरह ही लुभावनी। जहाँ-तहाँ के गाँव उसकी गोटियाँ हैं—कोई शाह, कोई किश्ती, कोई प्यादा।

यह सोनभद्र—यहाँ से उसकी धारा हमारी पुरानी धार बागमती की पतली धारा ही सी तो मालूम पड़ती है।

ज्यों-ज्यों ऊँचे चढ़िये, भेदभाव मिटते जाते हैं। सीमायें नष्ट होती जाती हैं। एकरूपता बढ़ती जाती है।

किन्तु, मैं दर्शन की ओर कहाँ बहका जा रहा हूँ ? चेतना झटका देती है, स्मृतियाँ पीछे पटक देती हैं !

पैरों में पंख बाँधना कौन नहीं चाहता ? बचपन से ही तो उड़ने की कोशिश कर रहा हूँ। शारीरिक असमर्थता जाग्रति में जिसे रोकती रही, अंतर्मन ने स्वप्न में उस साध को कितनी बार पूरा किया !

मेरे गाँव के निकट के ही एक भलेमानस को एक हाथी था। ननिहाल जाते समय मेरे बाबा ने मेरी सवारी के लिए एक बार उसकी मँगनी की थी। मैं उसपर चढ़ा था। ऊँचे आसन पर झूमते हुए जाने में कम आनन्द नहीं आया था। किन्तु वह हाथी बाहरी मन को जितना आनन्द नहीं दे पाया, अंतर्मन में वह उतना ही भय चिटा गया।

प्रायः ही स्वप्न में उस हाथी को देखता—और भी भयंकर रूप में—कई सूँड़, कितने बड़े-बड़े दाँत ! वह अपने पैरों तले कुचलने के लिए मुझे खदेड़ता। मैं भागता। मेरे नन्हें पैर; कहाँ तक भागते ? किन्तु यह क्या ? अचानक मेरे पैरों में पंख फूट आते, मैं उड़ने लगता—सर-सर-सर !

अंतर्मन ने बहिर्मन को ऐसा अभिभूत किया कि मन में उड़ने की साध दिन-दिन बलवती होती गई। जब विज्ञान ने साधन जुटाये, तब तो और भी छटपटी बढ़ी !

कई बार सोचा, क्यों न दस-पाँच रुपये लगाकर पटना शहर पर एक चक्कर देकर उसे पूरा ही कर लूँ। मित्रों के भी बार-बार आग्रह हुए।

किन्तु कलाकार का हौसला ! अरे, कौआ-उड़ान भी कोई उड़ान है ? खायेंगे गेहूँ, नहीं तो रहेंगे ऐहूँ।

कि १९४७ में आचार्य नरेन्द्रदेव ने लिखा, मैं यूरोप-यात्रा में जा रहा हूँ, साथ चलिये, पासपोर्ट लीजिये।

तो बस ले लिया पासपोर्ट और ले लिया पासपोर्ट संसार भर का। जब पासपोर्ट के अफसर ने संसार के सारे देशों के नाम दरखास्त में देखे, तो वह मुस्कुराया।

और, मुस्कुराते रहे मेरे दोस्त। और संयोगवश जब वह यात्रा न हो सकी, तो उनकी मुस्कुराहट परिहास में परिणत हो गई।

किन्तु, मैं तो बर्नार्ड शा का हामी। उसने अँगरेजों के बारे में एक जगह लिखा है—इस कौम के दिल में कोई इरादा जगता है, तो यह इस तरह उसे छुपाये-दबाये रखती है कि एक दिन यह इरादा एक ज्वलंत विश्वास में परिणत हो जाता है और इस विश्वास की अखंड ज्योति उसमें इतनी शक्ति पैदा कर देती है कि वह जो चाहती है, करके ही दम लेती है।

मित्र हँस रहे थे, पासपोर्ट की लिखावट धीमी पड़ती जाती थी, उसमें चिपकाये फोटो के चेहरे से भी अपने चेहरे में फर्क पाने लगा था ! किन्तु इरादा दिन-दिन पुष्ट होता जाता था। चर्चायें बन्द; विश्वास की आग अब धुएँ के बदले चिनगारियाँ चमकाती थी।

कि यह क्या हुआ ?

अभी उस दिन भोर-भोर—मेरी भोर ८ बजे के बाद होती है—पड़ा था कि भाई ब्रजनन्दन आज़ाद पहुँचे और हाथ में एक तार रखते हुए बोले—विलायत जाने की तैयारी करो।

यह तार ब्रिटिश इन्फौरमेशन सर्विसेज का था, जो छः भारतीय पत्रकारों को अपने खर्च से विलायत भ्रमण को ले जा रही थी।

यह तीन अप्रील की बात है और आज उन्नीस अप्रील है। ये सोलह दिन—कैसे कटे ?

"कैसे जा सकेंगे आप ? आप पर यह जिम्मेवारी, वह जिम्मेवारी।"

"ज़रूर जाओ भाई, कोई ऐसा मौका भी छोड़ता है ?"

दूसरी बात कहने वाले बहुत लोग थे, किन्तु पहली बात दो ही व्यक्ति ने कही—तो भी उन दोनों की बात का उल्लंघन क्या मैं आसानी से कर सकता था ?

मना करने वालों में एक थे जयप्रकाश जी, जिन्हें दैनिक "जनता" की चिन्ता थी और चिन्ता थी आगामी आम चुनाव की। रानी कहती थी,

साढ़े सात साल तुम जेल में रहे, मैंने काट दिये, क्योंकि परिवार छोटा था। अब यह बोझ मुझसे दो महीने भी नहीं ढोया जा सकता !

करीब एक सप्ताह अपने ही मन में बारी-बारी से उठने वाले हाँ—ना के बीच झूलता रहा ! किन्तु अचानक एक दिन विश्वास की धूनी ज़ोरों से धधक पड़ी—तय कर लिया, मैं जाऊँगा !

और, आज जा रहा हूँ !

आज जा रहा हूँ—पैरों में पंख बाँधे उड़ा जा रहा हूँ। यह देखिये, हमारा हवाई जहाज तेज़ी से बढ़ा जा रहा है—मैं उसके साथ उड़ा जा रहा हूँ ! कहाँ आरा छूटा; कहाँ बक्सर गया !

किन्तु यह क्या ? शरीर आगे बढ़ता जा रहा है, मन पीछे खिंच रहा है ?

आज एरोड्रम पर का दृश्य ! मेरा सारा परिवार—मेरी सारी मित्र-मंडली ! किससे मिलूँ, कैसे मिलूँ ?

यह मनन बार-बार गले से लिपट रहा है और तुतली बोली में जो कह रहा है, उसकी भाषा न समझूँ, भाव तो रोम-रोम में व्याप्त हो रहे हैं। मेरे गले की मालाओं को इशारे से उतरवाकर अपने गले में डलवाता है और न जाने क्या सोचकर फिर अपने गले से निकलवा कर मेरे गले में डलवाता और किलक पड़ता है !

उधर लल्लन अपनी फरमाइशें कहता जा रहा है और चाहता है कि मनन को गोद से हटाकर मैं उसे गोद में ले लूँ।

प्रभा चहल-पहल देखकर कभी चहक उठती है, कभी उदास विषण्ण बन जाती है। महेन्द्र खोया-खोया-सा लग रहा है और हर जगह मेरे पीछे लगा फिरता है।

देवेन्द्र मेरे सामानों को बुक कराने में व्यस्त है। तीन-चार दिनों से दिन-रात एक कर रखा है इस नौजवान ने ! होठों पर पपरी, चेहरे पर हवाई, किन्तु दौड़ धूप से जैसे थकता नहीं ! वाह बेटे !

यह दुलहिन है—दो बच्चों की माँ होकर भी बच्ची। शान्ति और उर्मिला के साथ, उनकी माँ भी आई हैं—मेरी समधिन ! न जाने घूँघट के भीतर उनके चेहरे पर कौन फूल खिल रहे हैं ?

मित्रों की भीड़। मालाओं की भीड़। किन्तु इन सारी भीड़-भाड़ में मेरी आँखें बार-बार जहाँ जाकर अँटकती और सजल बन जाती हैं, फलतः मैं वहाँ से उन्हें तुरत मोड़ देता हूँ, वह......

वह रानी खड़ी है !

उसे घेरकर स्त्रियों का एक झुण्ड। वे तरह-तरह की बातें कहकर उसे बहला रही हैं। वह सुनती है, गर्दन हिलाती है, कभी होठों पर हास्य की रेखा भी लाती है। किन्तु इस हास्य-रेखा के पीछे क्या है, मैं जानता हूँ, जानता हूँ।

अब चलिये, प्लेन रवाना हो रहा है !

सारी भीड़ प्लेन के सामने। प्रोपेलर ज़ोरों का हवा दे रहा है। दो आदमी सीढ़ी पकड़े उसे हटाने को आतुर खड़े हैं। फिर मालायें; फिर अभिवादन। कोई चरण छू रहा, कोई गले मिल रहा। कमान्डर जल्दी करने को कह रहा; किन्तु आखिरी बार रानी से मिले बिना—

भीड़ चीरकर मैं रानी के निकट गया। उसकी आँखें अश्रु प्रवाह को न रोक सकीं। मैंने उसकी बाँहें पकड़ कर थपथपा दीं, हँसते-हँसते मूक वाणी में ही ऐसा कहा कि घबराना नहीं...! फिर जल्द-जल्द सीढ़ी के ज़ीनों को पार कर......

'ज़रा एक मिनट।' कैमरे में क्लिक की आवाज़। हवाई जहाज सरक रहा है !

हड़हड़हड़हड़। साँय-साँय, साँय-साँय ! एक धक्का, फिर सरसरसर !

प्लेन उड़ा और यह उड़ा जा रहा है। वर्तमान ने भूत को फिर पीछे छोड़ दिया !

चिलचिलाती धूप में नीचे देखता हूँ, कहीं हरियाली नहीं। क्या बिहार की सीमा पीछे छूट गई है ?

अरे, अब तो हमारा प्लेन नीचे उतर रहा है ! हमारे चारों ओर बस्तियाँ हैं, पेड़ हैं, ज़मीन है, जहाँ खेतों की टेढ़ी-मेढ़ी मेड़ें हैं। यह लीजिये, यह मैदान, यह जली-अधजली दूब !

और, यह है बनारस का हवाई अड्डा !

सभी यात्री एक-एक कर उतर गये। मैं भाव-विभोर बैठा रहा। फिर अकेलापन खटका, तो सीढ़ी से नीचे उतरा, वेटिंग रूम में आया !

यह सामने कौन बैठा है ?

"क्षमा करें, क्या आप उदयशंकर हैं ?"

"जी हाँ ! आप मुझे पहचानते हैं ?"

"जी, मैं भी एक छोटा-मोटा कलाकार ही हूँ। जिसे आप शरीर की भंगिमा द्वारा प्रगट करते हैं, उसे क़लम द्वारा उतारने की कोशिश करता हूँ।"

फिर तो बातें शुरू हुईं। उदयशंकर कलकत्ता जा रहे हैं। साथ में पत्नी हैं, बच्चा है। नटखट बच्चा बार-बार माँ से कुछ पूछता है। इस समय देहरादून से आ रहे हैं ये लोग।

"अपने कला-केन्द्र के बारे में कुछ बता......"

"हाँ, सोच रहा हूँ, १९५२ से उसे अलमोड़ा के बदले देहरादून में खोलूँ। देहरादून बड़ी अच्छी जगह है।"

मैंने बताया मेरा एक लड़का वहाँ पढ़ता है। उत्सुकता से पूछ बैठे—"कहाँ, क्या पढ़ रहा है ?" मैंने बताया, लेखनी-धारी का बेटा, राइफल-धारी बनने जा रहा है।

"देश को उसकी भी ज़रूरत है। अच्छा किया है।"

मैंने अपने भाग्य को सराहा कि अपनी इस यात्रा के प्रारम्भ में ही उनके ऐसे कलाकार के दर्शन हुए। पति-पत्नी को नमस्कार कर और बच्चे

को चुमकार कर मैं बाहर आया, तो देखा, सभी साथी सीढ़ियाँ पार कर रहे हैं।

फिर वही—खड़खड़ खड़खड़—साँय-साँय—सर-सर-सर ! पुरानी दृश्यावली दुहर रही है !

किन्तु, मुझे यह क्या हो रहा है ? सर में चक्कर क्यों ? क्या पान के साथ ज़र्दा ज़्यादा खा लिया ? राजवंशी ने कितने प्रेम से पान दिये थे। तब से लगातार चबाये जा रहा था ! शायद उसी की गर्मी है ! और दो रात से सोया भी तो नहीं। कल रात की नींद टाइफायड की सूई ने ली, आज रात को नींद भला क्या आती ? और, हाँ, तीन-चार दिनों से दावत खाते-खाते पेट भी तो जवाब दे रहा है ! अरे, यह पेट में क्या अजीब हुड़ हुड़ ऐसी हलचल हो रही है ?

पीछे के हिस्से में देखा, लिखा है, Toilet। लड़खड़ाते पाँव से उस ओर बढ़ा। दरवाजा खोलकर भीतर गया कि उल्टी !

निबट कर, हाथ मुँह धोकर, बाहर आया। तबीयत कुछ हल्की मालूम हुई। होस्टेस से लेकर एक नारंगी खाई। फिर आँखें मूँद लीं। झिपकी टूटी, तो लखनऊ।

नीचे उतर कर रिफ्रेशमेन्ट रूम में गया। सोचा, कुछ पीऊँ। खोया सा खड़ा था कि आवाज़ आई—"आइये, बैठिये !"

अरे, यह अँगरेज—निखालिस गोरा—हिन्दी बोल रहा है ! निकट जाकर बैठा। ब्याय पानी लिये आ रहा था, उससे माँग कर पी लिया। फिर गोरे साहब ने सिगरेट बढ़ा दी। सिगरेट के धुएँ के साथ मालूम किया—यह सज्जन पादरी हैं। बहुत दिनों से पटना में ही रहते हैं। सेन्ट ज़ेवियर स्कूल से इनका सम्बन्ध है। पटना में मेरी बिदाई देखकर ही समझ गये थे, मैं कोई विशेष व्यक्ति हूँ।

उन्होंने तुरत हिन्दी की बात चलाई ; कहा—आजकल हिन्दी को लोग संस्कृत बना रहे हैं ! प्रेमचन्द कैसा अच्छा लिखते थे ? पटना के

हिन्दी अखबार तक ऐसी भाषा लिखते हैं कि डिक्शनरी लेकर ही उसे समझा जा सकता है !

काश, एक विदेशी हिन्दी-भक्त की यह सम्मति हमारे साहित्यकार और पत्रकार सुन पाते !

उन्होंने ही बताया कि मुझे जो उल्टी हुई, उसका कारण और कुछ नहीं, हवाई यात्रा का प्रथम अनुभव है। घबराइये नहीं, अब प्लेन बहुत ऊँचे जायगा !

किन्तु यहाँ तो प्लेन पर आते ही फिर झपकी आ गई। जब नींद खुली, देखा, मेरी सीट की बगल में एक कागज पड़ा है, जिसमें कमान्डर ने वायुयान की स्थिति का निर्देश किया है। हमारा प्लेन दस हज़ार पाँच सौ फीट ऊँचे जा रहा है, उसकी रफ्तार फी घंटा १३५ मील है और दिल्ली हम निश्चित समय से दस मिनट पहले पहुँच जायेंगे।

यह दिल्ली है। सब उतर रहे हैं। मैं भी उतरा।

एरोड्रम के सामने ६ फीट ऊँचे एक गोरे सज्जन खड़े हैं। मैं किसी परिचित सूरत की तलाश में था कि वह आकर बोले—क्या आप मिस्टर बेनीपुरी हैं ?

वह ब्रिटिश इन्फौरमेशन सर्विसेज के प्रतिनिधि थे। इनके संगठन की पुख्तगी देखकर तो मैं पन्द्रह दिनों से हैरान हूँ।

छोटी-छोटी बातों के लिए भी चिट्ठियाँ, तार।

यहाँ भी मोटर लिये हाज़िर। मिजाज़ पुर्सी, मौसम पुर्सी। फिर कल के प्रोग्राम के बारे में तय। अवधेश्वर के डेरे पर,—वेस्टर्न कोर्ट में—पहुँचा कर लौट गये यह कहते कि कल प्रातःकाल ६ बजे फिर मिलूँगा !

भोजन कर पार्लियामेंट गया। ख़बर पाकर भाई सत्यनारायण सिंह जी आये। पचास को पार किया, चेहरे पर वही रौनक, जो मुस्कुराहट से और भी रंगीन। प्रेम से मिले। कल रात को साथ खाने का निमंत्रण दिया।

थोड़ी देर में नवीन जी पधारे—ऊपर राजनीति का चोंगा, भीतर साहित्य की अंतः सलिला ! कुछ देर तक मज़े की बातें होती रहीं ।

शाम को हल्की-सी आँधी आई । झीसी पड़ी । दिल्ली की सड़कें नहाई हुई दुल्हन-सी लगने लगीं ।

सोंधी जी ने खबर दी, राष्ट्रपति के निजी सचिव भाई चक्रधर जी के साथ अभी खाना है ।

यह दिल्ली का राजकीय भवन । कैसा रोब ! ऊँची-ऊँची अट्टालिका के नीचे लम्बे-लम्बे गलियारे । जहाँ-तहाँ वायसरायोंके चित्र; अँगरेजों द्वारा बनाये भवनों के चित्र; उन युद्धों के चित्र जिनमें विजयी बनकर अँगरेज भारत के शासक हुए । उन्हें हटाया नहीं गया है । सोचा गया, राजकीय भवन को म्यूज़ियम मान लिया जाय; ये चित्र यहाँ सुरक्षित रहें ।

जगह-जगह ज़री के पगड़ और पट्टे वाले राजकीय भवन के कर्मचारी झट सलामियाँ देते और हमारी सूरत—शकल को घूर-घूर कर देख रहे । लिफ्ट से ऊपर की मंज़िल पर । भाई चक्रधर उसी स्वाभाविक मुस्कान से मिले ! और डाँट दिखाई—देर क्यों कर दी ?

भोजन घर । टेबुल पर खादी का आधिपत्य । उसपर अँगरेजी तश्त-रियाँ और नीम-अँगरेजी भोजन । मुसल्लम चाँदी के छुरे काँटे । सोंधीजी उनके व्यवहार की बारीकियाँ भी बताते जा रहे हैं—विलायत में इसकी ज़रूरत पड़ेगी न ?

भोजन के बाद पान । पान न हो, तो फिर बाबू चक्रधर शरण क्या ?

बार-बार सोचता, सदाकत आश्रम का फकीर इस शाही भवन में ! इतिहास भी क्या-क्या आश्चर्य पैदा करता है ? सत्य घटनाओं से बढ़कर आश्चर्य की बात और क्या होगी ?

देर हो रही है, कभी दिन में आकर इस भवन को अच्छी तरह देखूँगा । चक्रधर ने बताया, परसों तुम्हें राष्ट्रपति से मिलना है । बस और उत्सुकतायें उसी अवसर के लिए रिज़र्व !

थका हूँ, नींद आ रही है, तारीख बदल चुकी है, अब बहिर्मन विश्राम ले, अन्तर्मन के लिए स्थान खाली किया जाय।

पैरों में पंख बाँधकर पटना से दिल्ली; कुटिया से राजभवन तक। अब बेनीपुरी सोओ; अन्तर्मन, अपने पंख फैलाओ!

२२।४।५१

दिल्ली, कराँची !

फिर उड़ रहा हूँ- -उड़ा जा रहा हूँ। अभी कैप्टेन ने सूचना-पत्रक थमाया है। हम जोधपुर के आस-पास हैं। हमारा प्लेन सोलह हज़ार फीट ऊँचे उड़ रहा है। उसकी गति प्रति घंटा दो सौ दस मील है। सच-मुच मैं उड़ा जा रहा हूँ। प्रति घंटे दो सौ मील से भी अधिक की रफ्तार से उड़ा जा रहा हूँ।

नीचे धुन्ध-धुन्ध। पीली मिट्टी—जहाँ-तहाँ बस्तियों के धुँधले चिन्ह। अगल-बगल में बादल उड़ रहे हैं—सुफेद-सुफेद।

छः बजने जा रहा है। अभी डेढ़ घण्टे पहले दिल्ली छोड़ी है। एरोड्रम के दृश्य आँखों के सामने घूम रहा है और घूम रहे हैं दिल्ली के दो दिनों के वे दृश्य जो मुझे अभिभूत किये रहे।

बिहार के बन्धुओं का प्रेम! सत्यनारायण बाबू के घर कल शाम को भोजन के लिये गया। दो घण्टे तक बातें होती रहीं। सत्यनारायण भाई को जेल में रामायण सुनाई थी। तुलसी और उनकी रामायण ही आज की चर्चा के विषय रहे। दिन रात राजनीति में डूबे रहने पर भी कितनी साहित्यिकता और रसिकता है! तुलसी की चर्चा के साथ हम अन्य हिन्दी, उर्दू और संस्कृत के कवियों पर भी टूटे। रस की धारा सी बह गई। मैंने एक सलाह दी, क्यों न एक तुलसी-परिषद की स्थापना की जाय और उसके द्वारा तुलसी-साहित्य का सुलभ प्रकाशन हो तथा उनके काव्यों पर व्यापक अनुसंधान कराया जाय! सत्यनारायण भाई को यह पसन्द आया, किन्तु राजनीति की गुत्थियाँ क्या उन्हें फुर्सत देंगी?

कल पूज्य राजेन्द्र बाबू से राजकीय भवन में आधा घण्टे तक बातें हुईं। वही पुराना स्नेह। जब उन्हें मालूम हुआ, इस बार ब्रिटिश गवर्नमेंट

ने देशी भाषाओं के पत्रकारों को तरजीह दी है, तो बोले—आखिर वे लोग तो वस्तुस्थिति समझते हैं ! अपने लोगों पर यह कितना बड़ा व्यंग्य था ! इस बार के छः पत्रकारों में चार देशी भाषा के हैं और उनमें दो हिन्दी के हैं। अँगरेजी-सरकार ने हिन्दी को जितना महत्व दिया है, काश, हमारी सरकार देती !

मैंने पूज्य बाबू से सबसे पहला निवेदन यह किया कि बिहार भूखों मरने को है, वहाँ जाइये, उसे बचाइये। १९३४ में आपने बचाया था, १९५१ में फिर आप ही पर लोगों की नज़र है। भूकम्प से भी अधिक दयनीय स्थिति है इस अकाल के कारण। उन्होंने बहुत बातें कीं, अपनी इच्छा भी प्रगट की, कठिनाइयाँ बताईं फिर आश्वासन दिया कि आवश्यकता हुई, तो जाऊँगा। हिन्दी साहित्य सम्मेलन की बात आई। मैंने संक्षेप में बताया। सम्मेलन की दुर्दशा और टंडनजी की मर्मव्यथा सुनकर दुखित हुए। देश में फैली हुई अनैतिकता की भी चर्चा आई। देखा, यहाँ पहुँच कर बाबू फिर सदाकत आश्रम के युग में पहुँच गये। वैसी ही निश्छल बातें, वैसी ही सजल आँखें, अँधेरे में प्रकाश खोजने की वैसी ही बेचैनी ! अन्त में सादर अभिवादन कर चला यह कहते हुए कि भूखे बिहार को न भूलियेगा !

जगजीवन बाबू बीमार हैं। सोचा था, चलते समय जाकर मिल लूँगा। किन्तु जब फोन पर उनके सेक्रेटरी ने बुलाया और बताया कि उनकी आज्ञा पर कल से ही सेक्रेटरी महोदय मुझसे सम्पर्क स्थापित करना चाह रहे हैं, तो शाम को ही मिल आया। उनसे भी अकाल की चर्चा की और कहा—जगजीवन बाबू, और लोग तो पीछे मरेंगे, सबसे पहले तो आपके जाति भाई—हरिजन—ही मर जायँगे। इसलिए ज़रा इस ओर आप अधिक ध्यान दीजिये। हँस कर बोले और सही बोले—हरिजन इस साल मरेंगे, तो और लोग अगले साल ज़रूर मरेंगे, उनकी खेती कौन करेगा ? बात बिलकुल सही है। उन्होंने भी बिहार जाने का वचन दिया और लौटकर अपने यहाँ भोजन करने का अग्रिम निमंत्रण दे दिया।

बिहार में जब अकाल पड़ा हुआ है और वह भुखमरी से बर्बाद होने जा रहा है, तब मैं जो बाहर जा रहा हूँ, बार-बार यह बात मन में खटकती है, इसी का यह सब प्रायश्चित है !

बिहार के और भाइयों के प्रेम का क्या वर्णन किया जाय ? अवधेश्वर बीमार हैं, उनके ही साथ ठहरा ! देखते ही बोले—अब तुम आ गये, मैं अच्छा हो जाऊँगा और दो ही दिनों में काफी अच्छे हो भी चले । आज चलते समय पहले से ही उन्होंने आधे दर्जन मालायें बनवा मँगाई थीं । उनमें से एक माला अपने हाथ से मेरे गले में डालकर छाती से किस तरह चिपक गये और बार-बार आग्रह किया कि प्रतिदिन मैं पत्र ज़रूर भेजूँ । इतना कहते आँखें सजल ! उफ़, अवधेश्वर, कहाँ से इतना प्रेम पाया है तुमने ! मित्रों पर उसकी अथक वर्षा करते हुए तुम कभी नहीं अघाते !

मथुरा नहीं थे, बड़ी चिन्ता थी कि मेरा काम कैसे चलेगा । उनके अभाव को पूरा कर दिया श्यामनन्दन मिश्र ने । जैसी प्रतिभा, वैसी विनय । यह नौजवान अवश्य बढ़ेगा ।

बिहार के अन्य बन्धुओं ने भी वैसा ही प्रेम दिखाया ।

अभी-अभी कैप्टन का दूसरा सूचना-पत्रक आया है । अब हम सिंध की मरुभूमि से जा रहे हैं और हैदराबाद (सिंध) हमारे निकट है । लेकिन यह क्या ? मरुभूमि के ऊपर यह ठंढक । कोट निकाल कर पहन रहा हूँ । पैर में ऊनी मोज़ा पहले से ही डाल रखा है । नहीं तो......

तो, फिर पीछे की ओर । अँगरेजों से मेरी घृणा थी । बचपन से ही । फिर वह घृणा कुछ पिघलने लगी, जब मैं जेल जाने लगा । मैं बागी नं० १ कहिये । १४ बार जेल गया । बिहार के अधिकांश जेलों का पानी भी पी चुका हूँ । जेल में भी काफी [illegible] । किन्तु देखा, जब-जब काले मैजिस्ट्रेटों ने बदमाशी करके मुझे [illegible] में भी रखा, तब-तब बिहार की गोरी सरकार ने ए [illegible] कर दिया । या हीं, जेल में जब कभी गोरे सुपरिन्टेन्डेन्टों या अफसरों से पाला पड़ा, उनमें अजीब भद्रता

पाई। किन्तु यह तो व्यक्तिगत बातें हुईं। जब मैं ४२ के बाद जेल में था, एक नौजवान अँगरेज वहाँ का सुपरिन्टेण्डेन्ट बनकर गया था। यह उसने उसी समय कहा था कि लड़ाई ख़त्म होते ही हम चर्चिल को हटा देंगे क्योंकि वह हमें जिता सकता है, खिला नहीं सकता। और जब उसकी बात पूरी हुई और मजदूर सरकार आई और उसने १५ अगस्त को अपना बोरिया-बिस्तर समेट कर सदा के लिए हिन्दोस्तान से कूच कर दिया, तो इस जाति की बुद्धिमत्ता पर—उदारता पर नहीं—मैं दंग रह गया! उफ़, ये समय को कैसा पहचानते हैं?

फिर इस बार के इस पत्रकार-प्रतिनिधि-मंडल के चुनाव को ही देखिये, जिसकी चर्चा पहले कर चुका हूँ! और जब से हम दिल्ली पहुँचे हैं उनकी कार्य पद्धति और व्यवहार-कुशलता देख कर दाँतों अँगुली दबाना पड़ती है।

दिल्ली आने के दूसरे ही दिन उन्होंने अपने आफिस में बुलाया, एरोप्लेन का टिकट दिया, अपने विभागों को दिखलाया, फिर अपना आदमी भेजकर टामस कुक से ट्रेवलर चेक का प्रबंध कराया और चलते समय इंगलैंड-यात्रा सम्बन्धी कागजों का एक पुलिंदा दिया। मेरी प्रवृत्तियों को देखते हुए यह भी बतलाया कि मुझे क्या-क्या और कैसे देखना चाहिये।

दोपहर को ब्रिटिश हाई कमिश्नर सर आर्चिबाल्ड नी के यहाँ खाना था। यह मेरे लिए अच्छा हुआ। अँगरेजों के रहन-सहन का कुछ पता चला, उनके आदर-सत्कार का रंग ढंग मालूम हुआ, उनसे बोलने चालने में जो मुझे दिक़्क़त होती थी, वह भी दूर हुई। सर आर्चिबाल्ड की धर्मपत्नी दिल्ली की सुसाइटी में बहुत प्रसिद्ध हैं। खाने के समय टेबुल का प्रबंध ऐसा किया गया था कि वह मेरी बगल में थीं। मैंने इसे संयोग ही समझा था, किन्तु पीछे मित्रों ने इसमें कुछ सम्मान की बात जोड़ कर शायद मेरी दिल्लगी की। खैर, उनकी बगल में बैठने से और

अच्छा रहा। घर की बातें पूछने लगीं। जब मैंने बताया, मेरे चार बच्चे हैं जिनमें एक ने बी० ए० में इम्तिहान दिया है और एक मिलिटरी कालेज में है, तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ। फिर पूछ बैठीं—आपकी उम्र ? मैंने जब, पासपोर्ट का अनुसरण करते हुए, ४६ कहा, तब तो वह जैसे चौंक पड़ीं। झट बोलीं—आप अपनी उम्र से दस वर्ष छोटे लगते हैं; देखिये, ४५ वर्ष की तो मैं हो गई ! फिर उन्होंने सर आर्चिबाल्ड से पूछ दिया और तब तो मेरी उम्र उस टेबल के लिए मुश्किल बन गई। जब इत्मीनान होगया कि मैं ४६ वर्ष का हूँ तब सर आर्चिबाल्ड ने कहा—तब आपको पोते भी हो गये होंगे और "एक नहीं, दो-दो" कहने पर लेडी नी आश्चर्य में उछल-सी पड़ीं ! यों ही जब उन्हें मालूम हुआ कि मैंने लगभग साठ किताबें लिखी हैं, तब उनके आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा !

मेरे पैरों में तो पंख बँधे थे, दिल्ली में भी स्थिर होकर बैठता कैसे। सोचा, यहाँ के मित्रों से भी मिल लूँ। दो के स्मरण नहीं भूलते। आल इण्डिया रेडियो में भाई उदय शंकर भट्ट मिले, तो तीन घंटे तक चिपके रहे और जब अपनी लम्बी दाढ़ी लिये भाई सत्यार्थी जी आ धमके, तो तब तक साथ लगे रहे जब तक मैं अपने प्लेन पर सवार नहीं हो गया। चलते समय अपने परिवार को भी ले आये थे। उनके कारण मेरी विदाई में पूरी पारिवारिकता आ गई। श्रीमती सत्यार्थी की विदाई में अपनी रानी को पाया; 'कविता' की आँखों में प्रभा को देखा और 'अलका' अकेली लक्ष्मन मकान का पूरा प्रतिनिधित्व कर रही थी।

कल शाम को जितिन देहरादून से आ पहुँचा। उससे मिल कर कितनी प्रसन्नता हुई ! वह अकेले पूरे बेनीपुर का प्रतीक था। आज हवाई अड्डे पर उसकी उपस्थिति—कितनी सुखद, कैसी मधुर।

किन्तु मधुर दृश्य तो अब इस प्लेन के बाहर है। अब मेरा हवाई जहाज बादल के ऊपर जा रहा है। संध्या हो चली है। काली पृष्ठ भूमि में रुई के गोले-से उजले-उजले ये बादल; किस तरह विश्राम करते-से

टीख रहे हैं ये। ज़रा भी इनमें हलचल नहीं। कितने बादल, कैसे बादल। जहाँ देखिये बादल ही बादल—स्थिर बादल, अविरल बादल। मालूम होता है रुई के बड़े-बड़े गट्ठर धुनकर किसी ने हौले-हौले रख दिया है! ये कहाँ अँटके हैं, कैसे अँटके हैं, किस चीज़ पर अँटके हैं! प्रकृति की कितनी बड़ी देन हैं ये।

और पलक लगी नहीं कि यह क्या? अब ये नीले पड़ गये और अब हम नीचे उतर कर उन्हें छूना चाह रहे हैं। नहीं नहीं, अब तो हम उनमें से कई से नीचे उतर आए और वह देखिये, वह रोशनी! वह कराची दिखाई दे रहा है क्या? प्लेन के भीतर रोशनी में चमक रही है—Fasten seat Belt—हाँ हम नीचे उतर रहे हैं। ऊपर उड़ने और नीचे उतरने के साथ हिचकोले लगा करते हैं अतः यह बंधन! किन्तु यह क्या? फिर धुमैले बादल नीचे पड़ गये। रोशनी की जगमगाहट भी नहीं दिखाई पड़ती। सघन होते अंधकार में बादलों के वे दल धीरे धीरे विलीन होते जा रहे हैं।

हाँ, तो दिल्ली का ऐरोड्रम। जगदीश्वर से मिलकर सत्यार्थी जी के परिवार के साथ में चला। यहाँ सहयात्री पहुँच चुके थे कस्टम के पास जाना पड़ा। किन्तु, यही हूँ मैं। ढूँढ़ रहा हूँ तो सूटकेसों की तालियाँ ही नहीं मिलतीं। याद आया, जित्तिन ने बन्द किया था। दौड़कर उससे पूछता हूँ, तो वह भी परेशान। तो क्या वहीं वेस्टर्नकोर्ट में छूट गई! सत्यार्थी जी जित्तिन को लेकर दौड़े—अभी समय है!

किन्तु सभी साथियों का काम हो जाय और आप वहाँ उल्लू बने रहें, यह क्या हुआ? यह भी सोचता हूँ कि कहीं वहाँ भी न मिलें, तो। तो, इधर-उधर लोगों से तालियों की गुच्छियाँ खोज रहा हूँ। ब्रिटिश इन्फारमेशन के लिथगो साहब की कुञ्जी ने एक को खोला, तो दूसरे को ब्रजकिशोरजी की ताली ने।

हाँ, मेरे बाद दूसरी मोटर से श्यामनन्दन जी, ब्रजकिशोर जी और हिन्दुस्तान टाइम्स के श्री शाही जी आये थे। सब के हाथों में मालायें,

सबकी आँखों में स्नेह। शाही जी ने अलग बुलाकर कहा, कभी पौंड की कमी महसूस कीजिये, तो मुझे ज़रूर खबर कीजियेगा। पहली बार सात समुन्दर पार जाने वाले के लिए इससे बढ़कर अधिक सान्त्वनामय आश्वासन क्या दिया जा सकता था?

और अन्त में यह भाई चक्रधर आये! चक्रधर मेरा लँगोटिया यार; राष्ट्रपति का प्राइवेट सेक्रेटरी। कई मालायें, कई गुलदस्ते! ये सब राजकीय भवन के थे, जिनकी गंध में श्रद्धेय बाबू जी के आशीर्वाद की गंध भी मैं पाता था।

जित्तिन और सत्यार्थी जी तालियाँ लेकर लौट चुके हैं। जित्तिन बेचारा अपराधी-सा—मैंने छाती से लगातार उसे आश्वस्त किया। फिर ब्रिटिश इन्फोरमेशन द्वारा फोटो। सत्यार्थी जी ने सोचा, मैं भी एक-दो चित्र ले लूँ। किन्तु इसी को लेकर थोड़ी झंझट हो गई। एअरपोर्ट पर तस्वीरें लेना मना है।

जब हवाई जहाज के रवाना होने की सूचना मिल गई, मित्रों से फिर गले-गले मिला। चक्रधर से लेकर मुँह भर पान रख लिया। मालाओं में से कुछ वाल्मिकी के बच्चे को और कुछ जित्तिन को सुपुर्द किया। अलका को दुलराया। और मातृभूमि को नमस्कार कर चल पड़ा···।

यह लीजिये। अब हम फिर जमीन पर हैं—८ बज कर १४ मिनट—और यह कराँची है!

२३-४-५१
बेहरिंग, काहिरा

कराँची से बेहरिंग-समुद्र, समुद्र। रात का वक्त। घर की, मित्रों की मधुर स्मृति लिये सो गया! ऐरोप्लेन की सारी बत्तियाँ भी बुझा दी गई थीं! २॥ बजे रात में बेहरिंग।

बेहरिंग में काफी समय लगा। एरोप्लेन के पुर्जे में कुछ गड़बड़ी हो गई थी। वहाँ के हवाई अड्डे पर ही, इधर उधर घूमते, रात काट दी ऊषा की लाली में वहाँ से चला।

बेहरिंग के एक सूचना-पत्र से पता चला, हम दिल्ली से १७०२ मील पर हैं और यहाँ से कैरो १२०० मील है और लंदन ३५०० मील। घर से दो हजार मील दूर पर—अपने घोंसले से इतनी दूर पर! उड़ता चल ओ कबूतर उड़ता चल!

बेहरिंग में इतनी देर लगी, जिसका एक उपयोग भी हुआ। हमलोग छः साथी—एक दूसरे के आचार विचार से परिचित हुए। अभी तक तो हम एक दूसरे का नाम और स्थान ही जानते थे।

हिन्दी के हम दो हैं, मैं और श्री राजवल्लभ ओझा। ओझा बलिया जिले के हैं और 'नवजीवन' लखनऊ, में समाचार सम्पादक हैं। नौजवान हैं। विचार प्रगति शील, स्वभाव मिलनसार। हम दोनों की सीट एक साथ है। खूब बातें होती चलती हैं।

'दिनमणि' मद्रास के श्री वेंकटाचारी पहले सोशलिस्ट पार्टी में ही थे। उन्होंने गर्व से कहा कि जब मद्रास के सारे साथी कम्यूनिस्ट पार्टी में शामिल हो गये, तो जिन दो आदमियों ने पार्टी को नहीं छोड़ा, उनमें वह एक हैं। किन्तु, इधर पार्टी से उनका सम्बन्ध नहीं रहा। लेकिन आज जो देश की स्थिति को लेकर गरमा-गरम चर्चा चली, उसमें उन्होंने वैसे ही

विचार प्रगट किये जैसे एक सोशलिस्ट को करने चाहिये। पोशाक भले ही बदले, हृदय तो नहीं बदलता। पता लगा, 'दिनमणि' मद्रास का सबसे बड़ा अखबार है। 'हिन्दू' की गिनती उसके बाद है। वह ७० हजार छपता है।

श्री रवि राय चौधुरी 'युगान्तर' कलकत्ता के व्यापार सम्पादक हैं। पूर्व बंगाल के रहने वाले; अब भी उनका परिवार पूर्व बंगाल में ही है। विचारों में प्रगतिशील; पूँजीवाद के कट्टर विरोधी। बहस में संख्यायें प्रायः उद्धृत करते—व्यापार सम्पादक हैं न ?

श्री आचार्य 'बाम्बे क्रानिकल' के चीफ रिपोर्टर हैं। नौजवान हैं। पार्टी के श्री हैरिस से उनकी मैत्री है। कहते थे, पार्टी के टिकट पर ही अगला चुनाव लड़ूँगा। किन्तु विचारों में पुख्तगी नहीं। साधारणतया पढ़ेलिखे लोगों में प्रगतिशीलता की ओर जो झुकाव रहता है, वही।

श्री रंगास्वामी दिल्ली के एक मशहूर पत्रकार हैं। इनके बारे में दिल्ली में ने बहुत कुछ सुना। विचारों में दकियानूस। इनसे वेंकटाचारी की भड़प देखते ही बनती। वेंकटाचारी ने एक बार यहाँ तक कह दिया कि आप का विचार फैसिस्ट है। रंगास्वामी में राजधानी का रंग और रोगन खूब चढ़ा हुआ।

यों हमारा यह दल वर्तमान भारत के मानसिक द्वंद्वों का भी प्रतिनिधित्व करता है। किन्तु विचारों की विभिन्नता से हम लोगों में प्रेम की कमी नहीं।

बेहरिन—फारस का एक छोटा-सा टापू। कोई शेख इसका शासक-बृटिश छत्रछाया के नीचे। सुना, सात रानियाँ हैं उसके, जिनमें पाँच विदेशी हैं। तेल और यात्रा टैक्स से काफी आमदनी। फिर गुलछर्रे क्यों न उड़ाये।

हवाई अड्डे पर एक अजीब झुंड देखा—लगभग आधा दर्जन लड़कियाँ थीं उसमें। बड़ी खूबसूरत, बड़ी रंगीन ! उनके लाल ब्लाउज अब भी

आँखों में नाच रहे हैं। गालों पर गुलाब, छाती पर छोटी-छोटी ढेंगें। मुजस्सिम जवानी। पता चला, ये लड़कियाँ ईरानी हैं। उनके साथ कुछ मर्द भी थे, कुछ बच्चे भी। इस आधी रात को क्यों वे आये, कौन पूछे? क्यों पूछे?

अभी कैप्टन का सूचना-पत्रक चला गया है, अब हम अरब की मरुभूमि से जा रहे हैं। हमारा एरोप्लेन १०,०,५० फीट ऊँचे जा रहा है, ३०० मील प्रति घंटे की रफ्तार से। हेल नामक मरुभूमि का शहर इसके निकट है।

हाँ एक बात तो भूल ही गया। मैं दिल्ली से अपनी ही पोशाक में चला हूँ। अब भी वही धोती, कुर्त्ता, बंडी है। लोगों ने कहा था, प्लेन बहुत ऊँचे चलता है, यह जाड़ा लगता है, वह जाड़ा लगता है। किन्तु अब तक तो कोई कष्ट नहीं हुआ। रात में जाड़ा लगा था; सो अपना पुराना कोट ऊपर रख ही लिया था। प्लेन में कम्बल मिल जाता है। कोट और कम्बल से मजे में काम चला।

सोचता हूँ, क्या इसी पोशाक में लंदन तक चला चलूँ या कैरो में बदल लूँ?

विलायत जाने को लोग हौआ बनाए हुए हैं। यह ले जाओ, वह ले जाओ; ऐसा करना, वैसा करना। समझदारी की बात सिर्फ दीप बाबू ने की थी। पटना में खाने को बुलाया और कहा, घबराइये मत। लंदन पहुँचने के दो घंटे के अन्दर आप सारी झिझक भूल जायेंगे। यहाँ तो रास्ते में ही झिझक छूटती जाती है!

दिन के बारह बजने जा रहे हैं। लग-भग १६ घंटे से उड़ रहा हूँ—पैरों में पंख बाँध कर उड़ा जा रहा हूँ। देश पार किया, विदेश पार किया, समुद्र पार किया, मरुभूमि पार कर रहा हूँ।

नीचे जहाँ तक देखता हूँ, गेरुए रंग के बालू ही बालू हैं। बालू को जैसे किसी ने भून दिया हो। कहीं-कहीं काले धब्बे से दीखते हैं। शायद

वहाँ का बालू ज्यादा भुन गया है ! जहाँ तहाँ बादल के टुकड़े भी दिखाई पड़ते हैं—पीले, सूखे, उदास !

करांची की बातें कहना रह ही गया। करांची पहुँच कर अचानक ही उसांसें निकलीं—आह, हमारे ही देश का एक टुकड़ा आज हमारे लिए विदेश हो गया है ! ऐरोड्रम के मैदान से हवाई अड्डे के आफिस में आया। सामने ही मि० जिन्ना की तस्वीर। मन ही मन अभिवादन किया ! यह मत सोचिये, उन्होंने आपके लिए क्या किया ? जो चाहा, वह तो कर लिया—आदमी संसार में कितने हैं ? जिन्ना साहब अवश्य प्रणम्य हैं !

पासपोर्ट और हेल्थ सर्टिफिकेट की झंझटें दूर कर B.O.A.C. के भोजनागार में पहुँचे। बहुत दुख हुआ, जब वेटर ने बताया कि गोमांस का दिन है—आप क्या चाहते हैं ? बड़ी कुढ़न हुई। यह कैसा प्रबन्ध ? बहुत पूछ-ताछ करने पर मालूम हुआ, हाँ, मछली है; भुने आलू भी मिल सकते हैं। उन्हीं पर गुज़र की। मछली बहुत अच्छी थी। अँगरेजी ढंग से पकाये जाने पर भी काफी स्वादिष्ट।

भोजनागार से निकले, तो देखा एक जादूगर साहब अपनी बिसात बिछाकर बैठे हैं और तरह-तरह के करतब दिखा रहे हैं। हमारे प्लेन की छोकड़ी वेटरेस उनके करतबों पर खिलखिला कर हँस रही है ! शोख की हँसी—कितने दिलों में खुभ रही होगी !

और ज़रा देखिये, हमारे इस एरोप्लेन को ! B.O.A.C. के ऐरोप्लेन आराम और सुरक्षा के लिए प्रसिद्ध हैं। अन्तरराष्ट्रीय क्षेत्रों में उड़ने वाले इनके प्लेन के तीन हिस्से होते हैं। बीच में २४ सीटें होती हैं, पीछे १६ सीटें और आगे कैप्टन आदि के लिए जगह। कैप्टन के अलावा फर्स्ट अफसर, नैविगेटिंग अफसर, रेडियो अफसर। आगे और पीछे के हिस्सों और बीच के हिस्सों के मध्य में ट्वायलेट और ड्रेसिंग रूम होते हैं।

दो लड़कियाँ रहती हैं, जो सभी यात्रियों को समय पर चाय, बिस्कुट,

शरबत, सिगरेट आदि देती जाती हैं। अपने काम में काफी निपुण, शिष्ट! इनकी उपस्थिति आकाश में भी ज़मीन की हरियाली की झलक दिखाती है। प्लेन के चलने और उतरने के पहले स्टीवर्ड आकर कुछ घोषणाएँ करता है—बड़े मनोरंजक ढंग से! हम कहाँ जा रहे हैं, उसकी दूरी क्या है, हमें क्या सावधानी रखनी चाहिये आदि। मालूम होता है, जैसे ये रटी हुई चीजें हों। बीच-बीच में कैप्टन सूचना-पत्रक भेजता है जिसे स्वयं पढ़कर आगे बढ़ा देना होता है।

बैठने की जगहें काफी आरामदेह। कुर्सियाँ ऐसी फिट की गई हैं कि सोने के लिए इन्हें कुछ लम्बा कर लिया जाय। कुर्सियों से बेल्ट लगे होते हैं, जिन्हें प्लेन के चढ़ते और उतरते समय, कमर में बाँध लेना होता है, जिससे धक्कों से बचा जाय। प्लेन जब चढ़ता या उतरता होता है, तब सिगरेट नहीं पीना होता है।

अपनी कुर्सी के आगे जो कुर्सी होती है, उसमें कागज के थैले लगे रहते हैं, थूकना वगैरह उस थैले में। कुर्सी की बाँही में ऐशट्रे लगा होता है, सिगरेट की राख आदि के लिए!

खाने-पीने का पूरा प्रबंध कम्पनी ही करती है।

हमारे साथ जो लोग हैं, उनमें अधिकांश गोरे हैं। उनमें कुछ स्त्रियाँ हैं, कुछ बच्चे भी। बच्चों की चहलपहल देखने लायक। इधर-उधर दौड़ रहे, गिर रहे! ज़रा चुमकार दीजिये, आपके हो रहे। एक श्रीमती बहुत गम्भीर हैं—मुँह फैलाये अकेली बैठीं। एक महिला अपने पति के साथ! चार-पाँच साल का बच्चा भी। रंगीन घाँघरा—लाल रंग पर नीले बूटे—गोरी देह पर खूब खुलता है। एक और श्रीमती जो अपने बच्चे के साथ—दुबली पतली, काफी चंचल। उनकी भावभंगिमा और शरीर की बनावट देखकर कोइराला की याद आती है। अपने बच्चे को लेकर मस्त। वह चिट्ठी लिख-कर उसपर अपने बच्चे से दस्तखत करवा रही है। शायद पतिदेव को लिख रही हैं!

मातृत्व ! नारी जीवन की कैसी पुण्य, पवित्र स्थिति ! संतान के साथ माता—मैं उन्हें देखते नहीं अघाता ! माँ जब स्वयं बच्चा बन जाती है ! वह खेलाती नहीं, खेलती है । आँखों में वही मासूमियत; हर हरकत में वही भोलापन !

जो मर्द सहयात्री हैं, उनके बारे में क्या दिलचस्पी हो सकती है ? सब गम्भीरता की मूर्ति बने हैं, शिष्टता ने उनकी आत्मा को दबोच रखा है ।

हाँ, एक भारतीय विद्यार्थी हैं जो अमेरिका जा रहे हैं । सिख हैं, मेकेनिकल इन्जीनियरिंग पढ़ने जा रहे हैं । मेरठ में थोड़े दिनों एक कारखाने में काम किया; अब कालिफोर्नियाँ में नाम लिखायेंगे । अँगरेजी मामूली जानते हैं; किन्तु हौसला और हिम्मत की हद । पंजाबियों की हिम्मत और धुन का मैं कायल हूँ, काश, उनमें भद्रता भी उसी पैमाने पर होती !

प्लेन की खिड़कियों से लोग झाँक रहे हैं । मरुभूमि में यह जल की बहार । कोई नदी है क्या ? या झील है ? पानी कितना साफ, नीला । मरुभूमि में पानी का महात्म्य बढ़ ही जाता है ।

किन्तु फिर वही मरु-राशि !

हम बढ़े जा रहे हैं, उड़े जा रहे हैं—पैरों में पंख जो बाँध रखे हैं !

कि यह काहिरा ! बालुका-राशि के बीच एरोड्रम । कितने प्लेन खड़े कर रखे हैं ।

विश्राम घर के सूचनापटों में ऊपर अरबी, नीचे अँगरेजी । खाना अँगरेजी, किन्तु परोसने वाले मिश्री । उनके लबादे और शानदार दाढ़ियाँ देखने ही लायक । नियमानुसार यहाँ भी पासपोर्ट इत्यादि दिखाना था; किन्तु करांची की तरह यहाँ छानबीन नहीं । एक सज्जन कुछ कागजों पर दस्तखत कर रहे थे, हमलोग उनके सामने से बढ़ गये ! बस । जलपान के बाद उड़ान !

२३।४।५१

रोम—लंदन

उड़ान शुरू नहीं हुई कि हम किस लोक में पहुँच गये? नीचे देखता हूं, तो मालूम होता है, मानों कालीनों की बरात लगी है। हाँ, खेत नहीं, ये कालीनें हैं हरी-हरी! पतली-पतली नहरें, नहरों के किनारे खेत। नहरों में पाल उड़ाती नावें, खेतों में कहीं हरे, कहीं गुंदमी रंग के जो दिखाई पड़ते हैं, वे किन शस्यों के पौधे हैं! खजूर को तो यहाँ से ही पहचानता हूँ। इस रंग-बिरंगी भूमि में कहीं कहीं बस्तियाँ। इस एक घर का ले आउट कितना सुन्दर लगता है यहाँ से। ताश के पत्ते की चिड़िये की-सी शकल।

नीचे कालीन ही कालीन। मखमली; लहरदार! मरुभूमि देखने के बाद आँखें तृप्त हो रही हैं। किन्तु यह क्या? चारो ओर धुंध। अरे, अब तो हम बादलों के बीच हैं! बीच? नहीं, नहीं अब ऊपर आ गये। कराँची के पहले भूरे बादल, काले बादल। यहाँ सुफेद, चमचमाते बादल। बादलों में भला रंग कहाँ? भगवान सूर्य-देव ने जिस प्रकार चमका दिया। संध्या में वैसे चमकाया था, आज दुपहरिया में ऐसे चमका रहे हैं!

अब तो हम बादलों से बहुत ऊपर आ गये हैं। नीचे मालूम होता है, क्षीर-समुद्र लहरा रहा है। बादलों के ढेर समुद्र की तरंगों की तरह ही ऊँचे-नीचे होते दीखते हैं! और जहाँ कहीं छिटपुट बादलों के नीचे पृथ्वी दिखाई देती है, तो फिर वही मरुभूमि का दृश्य! अच्छा है कि बादल उसे ढँके हुए हैं!

अभी कैप्टन का सूचना पत्रक आया है। हम अब १४,५०० फीट ऊँचे पर हैं। रफ्तार २०० मील फी घंटा।

नीचे पृथ्वी, ऊपर बादल, उसके ऊपर हम ! लेकिन नहीं तो, हमारे ऊपर भी तो बादलों की एक पतली तह तैरती-सी दिखाई पड़ती है।

अरे, बादलों के परे, वहाँ, दूर पर वह नीला क्या दिखाई दे रहा है ? क्या क्षितिज का एक हिस्सा है ? या समुद्र है ?

पीछे मुड़कर देखता हूँ—बादलों का महासमुद्र-सा ! जहाँ दृष्टि जाती है वहाँ, वहाँ तक।

लेकिन आगे, वह नीला क्षितिज तो नहीं हो सकता ? क्या समुद्र है ?—भूमध्य सागर !

बादलों के नीचे वही भुने हुए बालू वाली गेरुई ज़मीन—शायद पैर पड़े तो छाले निकल आवें !

किन्तु नीचे जलती हुई मरुभूमि हो या गरजता हुआ महासागर—हमारा रथ चलता रहेगा। यह पुराना मनु-पुत्र नहीं है, जिसे सब कुछ डराता था, हैरान करता था। अब इसने प्रकृति पर विजय प्राप्त कर ली है, पृथ्वी पर विजय प्राप्त कर ली है !

अभी-अभी Egyptian Gagette हमें दिया गया है। मि० बिवान ने मजदूर दलीय सरकार से इस्तीफा दे दिया ! इस समाचार से एरोप्लेन में काफी सरगर्मी।

अरे, बादलों के नीचे अचानक फिर वही कालीनें ! दृश्य दुहर रहे हैं क्या ?

किन्तु नहीं; सामने तो अब एक अखंड नीला रंग ! क्या यह भूमध्य-सागर है ? क्या पीछे की कालीनें उसी के तट पर की आबादियाँ थीं ?

हाँ, निस्सन्देह ! यह समुद्र-तट भी तो आ गया ! पीली बालुका को छूती हुई समुद्री जल की नीलिमा ! यहाँ से कितनी शान्त लगता है यह सागर ! तट के निकट जो उजली-उजली चीजें दिखाई देती हैं क्या वे तट से टकराती हुई लहरों के झाग हैं ?

अब तो तट भी पीछे। हमारा प्लेन नीलिमा के समुद्र में गोता सा जा

रहा है। जहाँ-तहाँ बादलों के छोटे-छोटे टुकड़े हरे-हरे खेत में रस्सी तुड़ा कर चरते हुए बछड़ों से लग रहे हैं!

भूमध्य सागर—इसका मतलब यह हुआ कि अब हम एशिया को छोड़ कर यूरोप में प्रवेश कर रहे हैं!

तो बिवान ने इस्तीफा दे दिया। क्या इसका मतलब यह होगा कि मजदूर दल की सरकार टूट जायगी?

अभी उस दिन जब मैं ब्रिटिश इन्फौरमेशन सर्विसेज के अध्यक्ष मि० किंग से मिल रहा था, तो उन्होंने बताया कि हो सकता है कि आपको ब्रिटेन में चुनाव भी देखने का मौका मिल जाय! ऐसा उन्होंने इसलिए कहा था कि उन्हें मालूम था, मैं अपने प्रान्त की सोशलिस्ट पार्टी की पार्लियामेन्टरी कमीटी का अध्यक्ष भी हूँ।

ये अँगरेज कैसे चतुर होते हैं—जब-जब उनके अफसरों से बातें हुईं, चुनाव के बारे में मुझसे जरूर बातें कीं। जयप्रकाश जी की भी तारीफ की। एक ने नरेन्द्रदेव जी से अपना परिचय बताया। बिहार में सोशलिस्ट पार्टी की ताकत और कम्युनिस्ट पार्टी के भविष्य के बारे में भी बातें कीं। तो क्या इंगलैंड में हम चुनाव के दृश्य भी देख सकेंगे?

किन्तु, मैं घटनाओं में कहाँ उड़ा जा रहा हूँ? ठीक सत्य तो यह है कि पैरों में पंख बाँध कर मैं उड़ा जा रहा हूँ, उड़ा जा रहा हूँ। अभी कैप्टन का सूचना पत्रक आया है—हम लोग भूमध्य सागर में सोलम से १२० मील उत्तर और क्रीट से ९० मील दक्षिण हैं। उड़ान की ऊँचाई १४५०० फीट और गति २०० मील।

मालूम होता है, काहिरा के बाद नीचे जो कालीन-सी बिछी भूमि थी, वह अलक्जेन्ड्रिया के क़रीब की थी।

हमारी घड़ी बेहरिंग से ही बेकार हो गई है। हम पश्चिम की तरफ उड़ रहे हैं। सूरज और हममें भागदौड़ लगी हुई है। कैप्टन का सूचना

पत्रक कहता है, हम ४ बज कर ३० मिनट पर रोम पहुँचेंगे, यहाँ मेरी घड़ी में अभी ५।१५ बज चुके हैं। लगभग तीन घंटे का फर्क हो ही चुका है!

इस समय हमारी अजीब स्थिति है। नीचे नीलिमा ही निलिमा—कहाँ तक उसमें आकाश की नीलिमा है और कहाँ से सागर की निलीमा शुरू होती है, कहना मुश्किल ही है। जोश का वह शेर याद आ रहा है-

ज़मीं इस वक्त एक वहमो गुमाँ है
मेरे शहपर के नीचे आस्माँ है!

हाँ, बादल हमारे नीचे हैं, सागर हमारे नीचे हैं, और ज़मीन न-जाने बेचारी कहाँ खो गई है?

अहा, फिर यह ज़मीन सी दिखाई पड़ती है। क्या वह सामने कोई टापू है? और दूर पर वह जो चोटी सी चमक रही है, वह किसी पहाड़ की है? हाँ, ज़मीन का ही एक हिस्सा तो समुद्र में घुसा-सा दीखता है। पहाड़ी ज़मीन—कुछ पेड़ पौदे-से भी दीखते हैं।

और वह ज़रूर कोई पहाड़ है, जिसकी चोटियाँ चमक रही हैं। चोटियों के ऊपर भी बादल; किन्तु बादल के बाद जो धुआँ-धुआ-सा है, वह क्या है?

नीलिमा के बाद सुफेद बादल तह पर तह ऐसे लगे हैं कि वे पहाड़-से ही दिखाई पड़ते हैं। किन्तु उनके ऊपर जो धुआँ-धुआँ-सा है, वह तो ज़रूर कोई पहाड़ है।

छोटे-छोटे और भी कई टापू!

क्या मैं कह सकता हूँ, अब हम यूरोप के घेरे में आ चुके हैं।

यूरोप में और इसी पोशाक में। खादी की महीन धोती, खादी का महीन कुर्त्ता, रेशमी बंडी! शरीर में तो जाड़ा नहीं मालूम देता है, पैर में कुछ ठंडक लग रही है। ऊनी मोज़ा है, फुल शू है। कमर से नीचे के हिस्से को अपने कोट से ढँक दिया है।

सोचा था, काहिरा से कपड़े बदल लूँगा, किन्तु सम्भव नहीं हो सका। सुना है, श्रीसम्पूर्णानन्द जी धोती पहन कर ही इंगलैंड गये थे और उसी में रहे भी। मैं धोती को सिर्फ विलायत दिखा दूँगा; फिर कोट, पैंट ही चलेगा!

हाँ, जो लोग विलायत का नाम सुनते ही, सूट-बूट की बात करने लगते हैं, उनकी बात समझ में नहीं आ रही। इस पोशाक में अब तक कोई कठिनाई नहीं हुई है। भाई आज़ाद के सिखावन के अनुसार बाथरूम में, शौच के बाद, अपने गिलास में पानी ले जाकर इस्तेमाल किया है। कौन किसे देखने जाता है? हाँ, कहीं असभ्यता और गंदगी न दिखाई जाय या बढ़ाई जाय—बस!

अब यह पहाड़ स्पष्ट हो गया, जिसकी चोटियाँ देखी थीं। भूरे रंग का पहाड़ है और उजली-उजली धारियाँ हैं उसपर।

दूर का पहाड़ क्षितिज से मिल कर विलीन हो गया—अब वहाँ बादल या आकाश।

सामने किनारा दिखाई दे रहा है। किनारे पर काली पहाड़ी है, पानी उससे टकरा रहा है।

समुद्र की तरंगें भी दिखाई दे रही हैं—उजले-उजले झाग उनसे निकल रहे हैं।

पहाड़ और पहाड़ी दोनों हमारे नीचे! हम उनके ऊपर-ऊपर उड़े जा रहे हैं। पहाड़ पर की उजली धारियाँ—वे जमी हुई बर्फ हैं!

लोग बता रहे हैं, यह क्रीट।

अहा! अहा! अहा हा! कितना सुन्दर। चारों ओर उजले बादलों से घिरा यह धूसर पहाड़ जिसपर उजली-उजली धारियाँ। लगता है, क्षीर समुद्र से अभी शंकर जी निकले हैं त्रिपुंड धारण किये हुए! हाँ क्षीर-समुद्र से विष्णु नहीं, शंकर! और त्रिपुंड ही कैसे कहें? यहाँ तो पुंड ही पुंड झलक रहे हैं!

हम उन्हें छोड़ आगे बढ़ रहे हैं। पहाड़ियों पर बादल टहलते-से लगते हैं और हम उनके ऊपर दौड़ते-से आगे बढ़े जा रहे हैं।

अब फिर नीलिमा ही नीलिमा और उसमें जहाँ-तहाँ पाल उड़ाती हुई नावों-सी वारिद-माला !

मेरी घड़ी कहती है ६ बजे हैं; सूरज की किरणें कह रही हैं, अभी दुपहरिया ढली है और वेटरेस मंद मुस्कान के साथ मेरे सामने टेबल का ढाँचा खड़ा कर लंच की तैयारी का आदेश कर रही है।

स्टीवर्ड आकर शराब की प्यालियाँ दिखा रहा !

यूरोप की ज़िन्दगी के साथ शराब बँधी है। क्या मुझे भी कुछ दिनों के लिए बँधना पड़ेगा ? जब तक सम्भव हो, टालते रहो ! ज़्यादा तनाव नहीं, ज़्यादा झुकाव भी नहीं !

भोजन आया। कैसा अच्छा भोजन—जिसे आप समतुलित भोजन कह सकें। सब्ज़ियाँ हैं, गोश्त है, कंद हैं, मीठा है, नमकीन है, फल हैं। इन्हें खाया कैसे जाय ? अपना तो सिद्धांत कि सुविधा का ढंग सबसे अच्छा ढंग। जो चीज़ छुरी काँटे पर नहीं उठती है, उसमें चमच लगाओ। भला केले को छुरी से काटकर काँटे से खाने का क्या मतलब ? हाथ से छील लो, दाँत से काट-काट कर खाओ ! कोई हँसेगा ? याद रखो, हँसते हैं लोग भोंड़ेपन पर, गंदगी पर। जिसका व्यवहार सही ढंग पर नहीं कर सकते, वहाँ उसका अनुकरण करके ही अपने को हँसी का पात्र बनाते हो।

नीचे भूमध्यसागर लहरा रहा है। ऊपर से ही तरंगों के हिलकोरे देख सकते हैं। बादल छँट से गये हैं; दूर-दूर पर कहीं-कहीं एकाकी चील-से मँडरा रहे हैं।

कैप्टन का सूचना-पत्रक—हम इटली के दक्षिण तट से १४० मील की दूरी पर हैं। हवा के प्रभाव के कारण प्लेन की रफ्तार ६३ मील कम कर देनी पड़ी है—यानी इस समय हम १८२ मील की रफ्तार में जा रहे हैं।

यह भी पता चलता है कि हम कैरो से १० बजे सुबह में चले थे। क्रीट में १२-१० पर पहुँचे थे। अब इटली के तट पर १४-४५ पर पहुँचे हैं और रोम १५-५५ पर पहुँचेंगे।

यह तट-भूमि। कितनी सुन्दर, मोहक। पथरीली ज़मीन। तट तक उतरने के लिए जगह-जगह रास्ते। रास्ते की काल में हरियाली-हरियाली। सामने वह बर्फ से आच्छादित पहाड़ी। शिव के ललाट पर पर त्रिपुंड नहीं—सिर पर श्वेत जटा-जूट। पहाड़ के ऊपर पहाड़। बीच में यह पतली धारा—या दो घाटियों के बीच का रास्ता? रास्ता इतना टेढ़ा मेढ़ा? नहीं, नदी का कछार सही। पहाड़ पर पहाड़ और पहाड़ पर चमकती बर्फ—यहाँ, वहाँ, इधर-उधर। कितनी मोहक।

"इटली, इटली, इतनी सुन्दर"—बचपन में एक कविता पढ़ी थी! सारी पृष्ठभूमि चित्रकारी-सी लग रही है। कोई चित्रकार क्या खाकर, कौन सा रंग लेकर ऐसी पृष्ठभूमि बना सकेगा? वह नदी ही तो है—दो घाटियों के बीच पतली धारा। और, यह सामने क्या है? पहाड़ों के नीचे एक ओर पानी देख रहा हूँ—दूसरी ओर क्या है, पता नहीं। तब यह समुद्र का ही एक हिस्सा होगा।

धूसर पहाड़। पहाड़-पहाड़। बीच बीच में चमकती चोटियाँ। नीचे हरी-भरी घाटियाँ।

तट-भूमि को सँवारने में ज़रूर मानव का हाथ होगा—नहीं तो यह लगातार रेखा-सी क्या खींची है?

हाँ यह समुद्र का ही तट है। हम जिस ओर नहीं देख पाते, वह समुद्र का ही एक छोर है।

अर्थ यह हुआ कि हम तट-भूमि का छोर पकड़ कर चल रहे हैं। दाहिने तट है, बायें सागर। शायद हम उत्तर-पश्चिम कोने से जा रहे हैं। सूरज हमारे बायें है। इसलिए दाहिनी ओर की ये चोटियाँ यों चमकती दिखाई दे रही हैं।

नीला, शान्त जल। कहीं इसी स्थान के आस-पास वह जगह तो नहीं, जिसकी चर्चा शेली ने अपनी एक कविता में की है और जिस जल के नीचे अनन्त निद्रा में सो जाने की आशा प्रकट कर उसने अपनी मृत्यु के विषय में सही भविष्यवाणी कर दी थी।

सूरज की किरणों में सोना आ रहा है—चोटियों के रंग में सोना देखिये।

कुछ जाड़ा-सा लग रहा है। ऊनी कपड़ा नहीं पहन कर गलती तो नहीं की। पैर में गठिये का रोग है। देखें क्या होता है?—होता है वही जो मंजूरे खुदा होता है! नहीं तो, ऐसी प्रेरणा हुई क्यों?

और यह जान बूझ कर नहीं हुआ। "Before you take off" नामक पुस्तिका के कारण हुआ। उसमें लिखा था, कपड़ों को दो बक्सों में रखिये। एक जो यात्रा की समाप्ति पर मिलेगा और दूसरा, जो Night stop पर मिलेगा। मैंने सोचा, दिल्ली में गरमी है। अभी इसी पोशाक में जाता हूँ। कैरो में ले लूँगा। लेकिन मालूम हुआ, नहीं, वे तो चीज़ें लंडन पहुँचने पर ही देंगे। ख़ैरियत यह हुई कि उसी पुस्तिका के आधार पर अपना काला कोट रख लिया था।

हाँ, हम तट भूमि को ही पकड़े बढ़ रहे हैं। एक ओर शान्त, नील समुद्र—दूसरी ओर भूरी-भूरी पहाड़ियाँ, चमकीली चोटियाँ, हरी-भरी घाटियाँ!

मैं भी क्या हूँ? सब लोग देख रहे हैं, मैं लिखे जा रहा हूँ। लिखने की दृष्टि से हवाई यात्रा सबसे उत्तम! दो सौ मील की रफ्तार से उड़ते समय भी लिखते जाओ। और, यह तो सर्वविदित बात है कि जब मैं गति में होता हूँ, मेरा मस्तिष्क और भावना भी गति में होते हैं। बैलगाड़ी पर भी होता हूँ, तो भी कल्पना और भावना उड़ान लेने लगती है—यहाँ तो हवाई जहाज पर हूँ—१५,००० फीट ऊँचे पर हूँ, दो सौ मील की गति में हूँ।

दिक़्क़त यही होती है कि ज्यों ही किसी दृश्य को क़लमबंद करना चाहता हूँ, वह ओझल हो जाता है—इसी से ऐसे छिटपुट चित्र !

अब पानी में तरंगें हैं। अलग से मालूम होता है, हज़ारों उजली मछलियाँ पूछें चमकाती तैर रही हैं, या टिटहरियाँ पंख हिलाती हुई उड़ रही हैं !

वह दूर पर, वह क्या चमक रहा है ? कोई बहुत ऊँचा पहाड़ है क्या ? या बादल हैं ? बादल नहीं हो सकते ? निस्सन्देह कोई हिमशिखरणी है।

हाँ, अब हम यूरोप में हैं जहाँ हर पहाड़ के सिर पर बर्फ़ का मुकुट होता है; हर घाटी को आदमी का हाथ नन्दन-कानन बनाये रहता है।

एक हम हैं कि लिया अपनी भी सूरत को बिगाड़
एक वह हैं जिन्हें तस्वीर बना आती है।

यह बीच समुद्र का टापू। मालूम होता है किसी ने खिलौना बना कर रख दिया है। छोटा टापू। पंक्ति बद्ध घर। घर चम-चम चमक रहे हैं। ऊपर से खिलौने के घर से ही लगते हैं !

हाँ, जब इतनी जगह प्रकृति ने दी; उसे बिना बसाये छोड़े क्यों ?

किनारे यह बस्ती ? कितनी सुन्दर बस्ती। ज़मीन का टुकड़ा समुद्र में घुस गया है। वहाँ तक आदमी ने आबादी बसा ली है। कोई प्रसिद्ध स्थान होगा यह ?

तट पर पहाड़ नहीं, घाटी। दूर से तट तक रेखायें-सी। क्या वे सड़कें हैं ? या नहरें ?

सामने बादल-बादल, पहाड़-पहाड़। हमारा प्लेन दोनों के ऊपर। कुछ धुँधलका-धुँधलका। समुद्र किनारे फिर एक सुन्दर बस्ती, जो जूते के नाल की तरह समुद्र के पेट में घुसी है।

हम बादलों के अब ऊपर हैं। नीचे सिवा बादलों के और कुछ नहीं दिखाई पड़ता।

किनारे पर ये खेत। हरे-हरे। किन्तु अपने खेतों की तरह मेड़ें टेढ़ी-मेढ़ी नहीं। बड़े सलीके से इन्हें विभाजित किया गया हो जैसे। खेत चाहे तिकोन हों, या अठकोन—मेड़ें सीधी। और खेतों के बीच यह बस्ती। बस्ती में भी योजना का हाथ !

धुधलका घना। नीचे की चीज़ें छाया-सी। छाया की ही तरह माया-से भरीं ! कहीं खेत, कहीं बस्ती !

No Smoking, Fasten Seat Belt = इसका मतलब कि प्लेन नीचे उतरेगा ! यानी, हम रोम पहुँच गये !

ज़मीन अधिक हरीभरी। इधर-उधर घर—मानो बगीचे के भवन हों। वहाँ दूर पहाड़ के नीचे बस्तियों की एक शृंखला—कुछ अट्टालिकायें यहाँ से भी चमक रहीं। खेतों में कैसी सघन हरियाली !

और, यह—यह विशाल रोम। जहाँ देखिये, वहाँ वहाँ ही रोम, रोम। खेतों में बँगले—लाल, काले, पीले। उफ़, यह स्वप्नपुरी है ? आँखें तृप्त हुईं, धन्य हुईं ? खेतों के ले-आउट। पंक्तिबद्ध पेड़। सुन्दर सड़कें।

प्लेन नीचे उतर रहा है; उतर गया।

कहा गया है, रोम में रहो, तो रोमनों की तरह रहो। मुझे कुर्त्ता-धोती में देखकर जैसे रोम को गुस्सा आ गया। जब तक प्लेन में थे, कोई दिक्कत नहीं रही। किन्तु ज्यों ही नीचे उतरा, ज़ोरों से ठंढक लगने लगी। थोड़ी देर में तो ऐसा लगा कि ठंढक हड्डी में घुस जायगी ! प्लेन के खुलने में कुछ देर भी हुई। सोचने लगा, यह अच्छा नहीं हुआ। किन्तु, एक मित्र का ओवर कोट लेकर किसी तरह लंदन पहुँच ही गया। लंदन भी क्या समझेगा कि किसी सनकी से काम पड़ा !

अंधकार होने पर प्लेन रोम से चला था। अतः देखा क्या जाता ? ओझा से गप्पें करने लगा; फिर झपकी आ गई। किन्तु जब नींद टूटी और नीचे झाँका तो आँखों ने जैसे जादू का नगर देखा हो। समूचा शहर, ऊपर से, कार्निवल-सा लग रहा था ! उजली, लाल, हरी—बल्बों

की पंक्तियाँ आँखों में चकाचौंध पैदा कर रही थीं। एक मित्र ने बताया, यह पेरिस है। पेरिस—योरप की विलास भूमि—सौन्दर्य भूमि! फिर बीच बीच में कई जगहों की रोशनियाँ देखीं; मान लिया, ये छोटे-मोटे शहर होंगे—फ्रांस के या बेलजियम के।

जब हवाई जहाज लंदन की तरफ तेज़ी से उड़ा जा रहा था, सामने क्षितिज पर लाल रंग का गोला दिखाई पड़ा—मैं मन ही मन कहने लगा, अरे चन्द्रमा यहाँ कैसा लाल हो जाता है। किन्तु पुस्तकों में अधिक से अधिक 'ब्लू मून' नीले चाँद के बारे में ही सुना था। यह लाल चाँद कैसा?

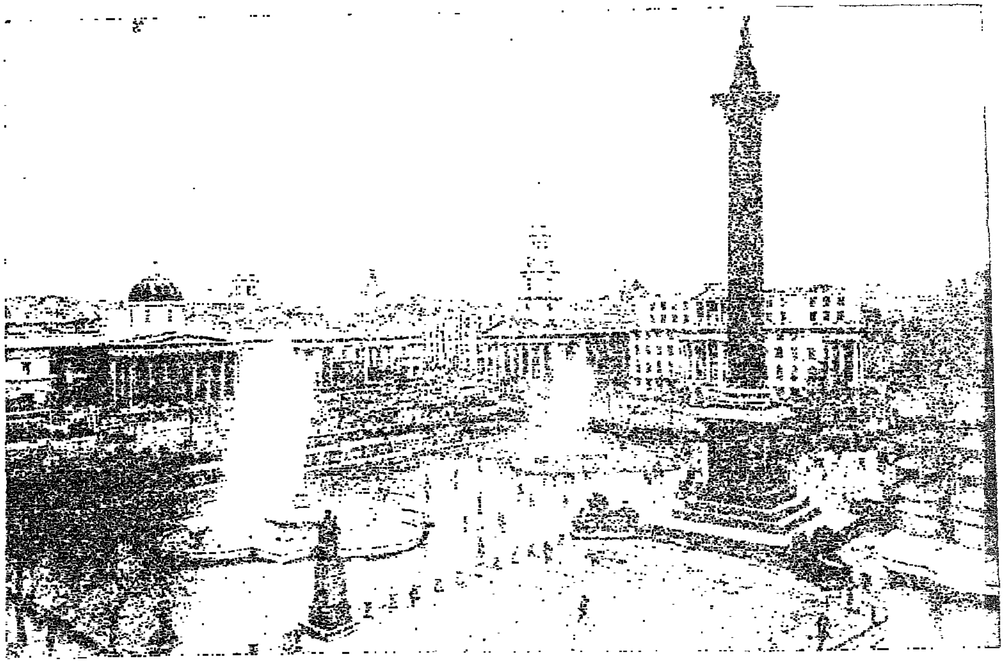
अब मित्रों ने बताया है, वह चाँद नहीं था, भगवान सूरज थे जो नौ-दस बजे रात तक यहाँ इस तरह अंधेरे में लटकते रहते हैं!

लगभग बारह बजे हम लन्दन पहुँचे। स्टेशन पर ब्रि० इ० स० के लोग हाज़िर। उनके बम्बई आफिस के मि० सैम्पुल्स को यहाँ रखा गया है; वही हम लोगों के साथ इस यात्रा में घूमेंगे! काफ़ी मिलनसार और मधुर भाषी जँचे। भारतीय रहन-सहन से भी वाकिफ। एक बार मेरी धोती की ओर भी देखा; किन्तु फिर सेवा-सत्कार में ही व्यस्त।

कस्टम और पासपोर्ट को भी लोगों ने हौआ बना रखा था। कराँची में थोड़ी सावधानी देखी। बेहरिन और काहरा में कुछ नहीं। रोम में तो किसीने पूछा तक नहीं। यहाँ भी कोई दिक्कत नहीं। हमारे सामान कस्टम आफिसर के सामने रखे गये, व्यापार की कोई चीज़ तो नहीं, यह पूछा गया फिर खल्ली से निशान कर दिया—यानी पास!

ब्रि० इ० स० की गाड़ी है। २, पार्क स्ट्रीट की ओर हमें ले जाया जा रहा है। हम वेस्ट एंड होकर जा रहे हैं, किन्तु बारह बजे रात को सारा लन्दन सूना था।

पार्क स्ट्रीट में जैसे ठहराया गया हूँ, क्या कहना। पता चला है, उप-निवेशों के अतिथियों के लिए ऐसी सुन्दर व्यवस्था स्थायी रूप से की गई है।



ट्रैफैलगर स्क्वायर—लंदन

ख : लंदन में तेरह दिन

२४-४-५१

लंदन में पहला दिन

लगभग एक बजे रात को सोया और आठ बजे जगा। बाथ रूम देखा था ही, हाथ-मुँह धोया। यहाँ ट्वायलेट में पानी का व्यवहार होता नहीं। किन्तु आज़ाद ने बता ही दिया था, तुम ग्लास लेकर जा सकते हो, हाँ पानी की बूँदे इधर-उधर न गिरें। यही किया। पुराना संस्कार; ऐसा नहीं करता तो जी घिनघिन किये रहता।

नहा-धोकर अपने कमरे से बाहर निकला। किन्तु पता नहीं चलता कि कैसे जाऊँ; कहा जाऊँ। एक लड़की पूछती है—क्या आप खो गये हैं? उसी ने बताया कि जलपान-गृह नीचे है।

ये लड़कियाँ; कितनी सेवा-परायणा! सेवा और शिष्टता दोनों की मूर्ति!

आज का दिन फ्री है। हम लोग जलपान ही कर रहे थे कि सुन्दर कबाड़ी आ गये। सुन्दर कबाड़ी बम्बई से आये हैं। बीस वर्षों से लंदन में हैं। लंदन की ज़िन्दगी में काफी घुले-मिले। काफी मिलनसार और मधुर-भाषी। हमें फ्लीट स्ट्रीट की ओर ले चले, जहाँ उनका दफ्तर है। भारत के कई प्रसिद्ध पत्रों के प्रतिनिधि हैं मि० कबाड़ी।

हम लंदन की सड़कों से गुज़र रहे हैं। काफी धूप है। लंदन में धूप; एक वरदान! इसकी चर्चा प्रायः होती है कि हमलोग भारत से धूप लाये हैं।

एक मित्र ने कहा था, लंदन ऐसा लगेगा जैसे बड़ी बम्बई। दोनों ओर ऊँची-ऊँची अट्टालिकायें। उनका रंग प्रायः मटमैला। बम्बई से बड़ी और शानदार इमारतें; किन्तु उनकी ऐसी चमकदार नहीं।

अरे, ये काले-काले क्या हैं? पेड़ हैं! काले पेड़, गोरे आदमी! माथुर साहब ने कहा था, हमलोग जब पेड़ की कल्पना करते हैं, हरा रंग ही सामने आ जाता है। लंदन में काले पेड़ पाइयेगा।

हाँ, काले पेड़! लेकिन कबाडी साहब कहते हैं, वसंत आ रहा है, अब उनमें कोपलें फूटेंगी। कुछ पेड़ों में कोपलें फूट चुकी हैं। पत्ते प्रायः छोटे-छोटे!

बीच-बीच में पार्क आ जाते हैं—उनमें फूल खिले हैं, हरियाली फैली है। शाम के समय इनकी शोभा देखियेगा, यह बताया जा रहा है।

सड़कों पर कई गाड़ियाँ ऐसी जा रही हैं, जिनमें फूल लदे हैं—लाल, नीले, पीले, उजले! अँगरेजों को फूलों से भी कम प्रेम नहीं!

यह फ्लीट-स्ट्रीट! अट्टालिकायें। अखबारों के नाम दफ्तरों पर लगे हुए। सड़क पर जो मोटरें हैं, उनपर भी अखबारों के नाम।

फ्लीट-स्ट्रीट! इंगलैंड की ज़िन्दगी में इसका बहुत बड़ा हाथ। इस सड़क में इतनी ताकत है कि यह ताज पिन्हा सकती है, छीन सकती है।

अखबार क्या चीज़ है, यह इंगलैंड में ही देखिये। रोज़ाना दो करोड़ से अधिक की संख्या में अखबार निकलते हैं। हर दो आदमी पर एक अखबार। एक-एक आदमी कई अखबार खरीदता है। यहाँ किसी से माँग कर अखबार पढ़ना गुनाह है। अपनी रोटी, अपना अखबार।

किन्तु कबाडी साहब बता रहे हैं, फ्लीट स्ट्रीट से अखबार सिर्फ दो ही निकलते हैं, बाकी के तो यहाँ सिर्फ दफ्तर हैं!

कबाड़ी साहब के आफिस में थोड़ी देर बैठे। उन्होंने चाय पिलाई, आवभगत की। कहा—जब कोई ज़रूरत हो फोन कर लीजियेगा। आज़ाद की चर्चा कई बार की! आज़ाद यहाँ के भारतीय जीवन में काफी घुल-मिल गया था, ऐसा बार-बार अनुभव हो रहा है।

वहाँ से हम टैक्सी पर लौटे। जब हम उसे पैसे दे रहे थे, मि० स्माल्स ने बताया, इन्हें कुछ टिप्स भी ज़रूर दे दिया कीजिये। टिप्स की यहाँ बड़ी चाल है।

भारत दो केबुल कर दिये हैं। एक अवधेश्वर को, एक सुरेन्द्र जी को। अवधेश्वर को लिख दिया, कि मित्रों को मेरे सकुशल पहुँचने की ख़बर कर दो। सुरेन्द्र जी को लिखा, रानी को ख़बर कर दीजिये।

भोर में जलपान ही कर रहे थे कि बी० बी० सी० से फोन आया था। हिन्दी में ही बातचीत शुरू हुई—इसलिए बहुत आनन्द आया। यह शीरीं साहब थे। उनसे तय हुआ था, तीन बजे हम बी० बी० सी० आयेंगे।

खाना खाकर बी० बी० सी० गये। वहाँ हिंदी बोलने वालों की एक पूरी मंडली है—हुजा हैं, कुमार हैं, आले हसन हैं, शीरीं हैं। ओम् प्रकाश और तूफान साहब भी इस मंडली के अस्थायी सदस्य हैं।

बी० बी० सी०। जब हम उसके सदर मुकाम पर पहुँचे, तो लगा, ईस्टर्न सेक्सन आक्सफोर्ड स्ट्रीट में है। एक आदमी दिया गया, जो हमें वहाँ तक पहुँचा आया। हुजा देर से आये, तब तक आले हसन और शीरीं साहब से बातें होती रहीं। बड़े प्रेम से मिले दोनों।

हुजा आये और अपने घर चलने को विवश किया। हुजा के घर पर पहुँच कर लगा जैसे अपने घर पर हों।

हुजा जिस मुहल्ले में रहते हैं, पहले वहाँ रईसों की बस्ती थी। सभी घर रोमन ढंग के। किन्तु फैशन बदलते हैं। रईसों ने छोड़ दिया; अब इन घरों में साधारण लोग रहते हैं।

हुजा ने शादी की है, एक बच्चा है। अतः एक फ्लैट चाहिये। यहीं नीचे के तल्ले में मिल पाया है। जो कमाता है, उसका आधा मकान-किराये में दे देता है। किराये में सजासजाया घर मिलता है।

हुजा का घर। यह उमारानी हैं, हुजा की पत्नी! यहाँ बी० बी० सी० में जान-पहचान हुई। मूर्तिकला सीखती हैं। हुजा ने इन्हें अपनी मूर्ति बना ली। काफी गृह-कुशल और वाक्चतुरा। कला में ही नहीं, राज-नीति में भी दिलचस्पी रखती हैं।

घर के पीछे एक छोटी-सी वाटिका। जब उसमें बैठ कर हम चाय पी रहे थे, लगता था, अपने आँगन में ही बैठे हों। हुजा की बहन भी थोड़ी देर में आ गई।

हुजा ने बताया, यहाँ सोशलिस्ट भी हैं और उनमें एक हैं मि० तूफान! तूफान साहब को फोन किया गया, वह आ गये। उनसे मालूम हुआ, यहाँ उनके विचार वालों का एक खासा अच्छा दल है। लोहिया की चर्चा करने लगे। आम चुनाव के पहले भारत लौटना चाहते हैं। तीन वर्षों से लंदन की गलियों की खाक छान रहे हैं।

तूफान साहब काफी मस्त जीव। उनके चलते आज की साँझ काफी रंगीन हो गई!

हाँ, इसके पहले बी० बी० सी० से हुजा के घर जाते समय ओमप्रकाश से भी भेंट हो चुकी थी। ओम प्रकाश ने बड़ी आत्मीयता दिखाई और कल के लिए निमंत्रण दिया!

हुजा के साथ हम लोग वेस्ट एँड होकर चल रहे थे। वेस्ट एँड की घड़ी से भारत का घर-घर परिचित है। वेस्ट एँड व्यापार का बहुत बड़ा केन्द्र। विशाल, ऊँचे, रोबदार मकान। दुकानें सजी सजाई। लोगों का झुंड। लोगों–माने? सिर्फ मर्द नहीं, औरतें भी। और प्रायः जोड़े के जोड़े। हाथ में हाथ डाले; शरीर से शरीर सटाये! चपल चरण!

सुख और विलास के सारे साधन जुटा रखे हैं लंदन ने। मुझे खुशी हो रही है यह देख कर कि शहरों में लोगों ने फूलों को नहीं भुलाया। जहाँ-तहाँ फूल भी बिक रहे हैं, फल भी!

फूल–ये पीले फूल क्या हैं? अपने पीले कनेर ऐसे। किन्तु सब में डंटल लगे। अरे, यही डफोडिल है, जिसपर वर्डसवर्थ की कविता पढ़ते हम अघाते नहीं थे। दिल्ली में मि० किंग ने कहा था, डफोडिल का मौसम आ रहा है, आप को बहुत पसंद आयगा। सचमुच सोने के रंग का यह फूल आँखों में गड़ गया!

और यह कमल ऐसा लाल-लाल ! आकार कमल-सा ही, किन्तु छोटा । यह टुलिप्स है । उजला नारसिसस और नीला आइरिस । आइरिस—ठीक हमारे नरगिस ऐसा !

काफी महँगे मिलते हैं ये फूल—लेकिन खरीदारों की क्या कमी ?

हाँ, तो तूफान साहब के साथ हुजा के घर से पार्क स्ट्रीट आये । रात का भोजन कर लिया और निकले सैर को ।

बगल में ही हाइड पार्क है । हाइड पार्क—अँगरेजों की वाक्स्वतंत्रता की भूमि ! आमोद प्रियता की भूमि ! काफी रात हो चुकी हैं; किन्तु रौनक अब भी है । वह देखिये, कोई सज्जन बोल रहे हैं ! किस उमंग से, उत्साह से । चेहरे की भंगिमा देखिये, हाथ को उछाल देखिये । बीच-बीच में श्रोता हँस पड़ते हैं ।

इधर एक दल गा रहा है । युवक-युवतियाँ बूढ़े-बच्चे—सब मौज में गा रहे हैं । झूम कर गा रहे हैं !

एक व्याख्यान यह और हो रहा है । अभी अँगरेजी का उच्चारण ठीक से पकड़ नहीं पाता । कोरिया, कोरिया कुछ हो रहा है ।

जहाँ-तहाँ पुलिस खड़ी । तूफान साहब ने कहा, बदमाश औरतें यहाँ प्रायः आती हैं । उधर, पार्क में, कुछ अश्लीलता न करें, इसी के लिए वे सजग हैं ।

क्यों ? पिकाडिली भी देख लीजिये !

हम नहीं क्यों कहें ? बस पकड़ी गई और यह पिकाडली ।

पिकाडली कलकत्ता की चौरंगी सी । किन्तु मुझे ऐसा लगा कि चौरंगी पिकाडली से ज़्यादा रौनकदार है । मालूम हुआ, जलावन की कमी से रोशनी पर प्रतिबन्ध है ।

चौराहे के बीच में कामदेव की मूर्ति—काम कुसुम-धनु-सायक लीन्हें ! मूर्ति के अगल-बगल लोग बैठे हैं । हमने भी एक परिक्रमा कर ली ।

तूफान साहब ने कहा—ज़रा 'पब' का मज़ा लीजिये। हम 'पब' में पहुँचे। औरतें ढाल के दे रही हैं, मर्द पी रहे हैं। मर्द भी प्रायः अपनी जोड़ी के साथ ही हैं।

'पब' की यहाँ बड़ी मर्यादा है। मित्रों के मिलने का यही स्थान है। तुम मेरे 'लोकल' में आ जाना—निमंत्रण का यह ढंग है। वहीं पीया-पिलाया गया, बातें हुईं, फिर हँसी-खुशी अपनी-अपनी राह।

और ट्यूब का मज़ा भी ले ही लीजिये।

ट्यूब का मतलब है ज़मीन के अन्दर चलने वाली गाड़ी। नीचे के स्टेशन में घुसे। काफी हवादार, चमकदार, लम्बा-चौड़ा। टिकट खरीदा। फिर नीचे उतरने की सीढ़ी पर गये। यह अजीब चीज़। आप सीढ़ी पर पैर दीजिये और आप ही आप नीचे उतर जाइये। बिजली से चलाई जाती है। पहले तो पैर धरते ही डगमगा गये। तूफान साहब ने झट बाँह से बाँह बाँध कर खड़ा कर दिया और यह खड़खड़ करके नीचे आ गये हम।

गाड़ी आई। छोटी-छोटी गाड़ियाँ किन्तु काफी खूबसूरत। भीतर बैठने की सीटें ऐसी जिन्हें देख कर किसी रईस का ड्राइंग रूम भी शरमा जाय!

लंदन की पुलिस की तारीफ बहुत सुनी थी। अपने कर्त्तव्य में सजग, साथ ही शिष्टता की मूर्ति। सड़कों के बीच खड़े होकर जो रास्ता बताते हैं, उनके अतिरिक्त कुछ सड़कों पर चौकन्ना घूमते रहते हैं। मैं सड़क से जा रहा था, अचानक किसी का हाथ कंधे पर पड़ा। आँखें घुमीं, तो पुलिस की वर्दी देखते ही चकरा गया। फिर उन्होंने उँगली से पीछे की ओर इशारा किया—देखता हूँ मेरी टोपी जेब से खिसक गई है! घूम कर टोपी उठाई, उसे धन्यवाद दिया, वह मुस्कुरा कर कुछ बुदबुदाता हुआ फिर आगे बढ़ गया।

हाँ, जब हम काहिरा में थे, तभी बेवान के इस्तीफे की खबर पढ़ी थी। आज शाम के अखबारों में इसी की धूम थी। इवनिंग न्यूज शाम का सबसे बड़ा अखबार है—उसके तीन संस्करण निकलते हैं। सर्वत्र प्रायः इसी की

चर्चा थी । किन्तु यह न भूलिये कि अँगरेज अपरिचितों से जल्द कोई चर्चा नहीं करता । हाँ, छेड़िये, तो कुछ कहेगा, वह भी धीमे-धीमे और संयत भाव से ।

तूफान साहब दिल्ली के हैं । सिर्फ दस पौंड जेब में लेकर लंदन आये, और तीन वर्ष से यहाँ रह रहे हैं । सोशलिस्ट पार्टी के कार्यकर्ताओं में हैं । यहाँ पता चला, डेढ़ सौ आदमी पार्टी के सदस्य हैं ।

उन्होंने बताया कि लंदन में लगभग दस हजार भारतीय रहते हैं । विद्यार्थी हैं, डाक्टर हैं, फेरी वाले हैं । इनमें फेरी वाले ही ऐसे हैं, जो अपने देश में कमा कर पैसे भेजते हैं ।

तूफान साहब पार्क स्ट्रीट की मोड़ तक पहुँचा कर चल दिये । बारह बज चुका था, तारीख बदल गई थी । मैं गुलगुले गद्दे पर सो गया—स्वप्न जागरण बन रहा था और जागरण स्वप्न !

२५-४-५१

हाइट हौल, हाइड पार्क

यह लंदन का दूसरा दिन है। इसवमामूल आठ बजे उठा, शौचादि से निवृत्त हुआ, स्नान किया, जलपान किया।

आज प्रोग्राम के बारे में निर्णय कर लेना था।

यों तो प्रोग्राम का संक्षेप घर पर ही मिल चुका था। यहाँ जब कमरे में प्रवेश किया, टेबुल पर कागज का एक बड़ा-सा थैला देखा। जिस थैले में विस्तृत कार्यक्रम—हर काम का वक्त भी ठीक। इसके अतिरिक्त—(१) Britain 1950-51—३०५—पृष्ठों की पुस्तक, जिसमें इङ्गलैंड संबंधी सभी बातों की जानकारी, (२) Come to Britain नाम की 'टाइम्स' द्वारा प्रकाशित एक सचित्र पत्रिका, (३) Britain Now नामक एक बड़ी पुस्तिका, जिसमें उसके आर्थिक पुनरुत्थान का वर्णन है, (४) London, (५) British Isles, (६) Shopping in London, (७) Festival of Britain, (८) Britain 1951, (९) How to see London, (१०) England-North East, (११) England Cantral, (१२) Scotland, (१३) Health services in Britain, (१४) Agriculture in Britain, (१५) The Development Area Today—इतना साहित्य और उसके साथ ही लंदन-सम्बन्धी दस सुन्दर चित्र! किन्तु आज कार्यक्रम के बारे में तय कर लेना था, अतः सबसे पहले C. O. I. के दफ्तर में गया।

आज भी धूप उग आई थी। बीच के पार्कों में लोगों की भीड़ बढ़ रही थी। लंदन में धूप न्यामत है। इस साल तो हाल यह रहा कि

६ महीने से लगातार वर्षा हो रही थी, जाड़ा पड़ रहा था । धूप और गर्मी—दो-दो मजे एक साथ । कौन इन्हें न लूटे ?

C. O. I. के आफिस में गया । अधिकारियों से बातें शुरू हुईं । इन्होंने इस आफिस के बारे में थोड़ी चर्चा की । यह एक स्वतंत्र विभाग है । यह किसी मिनिस्ट्री के अधीन नहीं । इसके एक डाइरेक्टर हैं । जिस मिनिस्ट्री को प्रचार का जौन-सा काम कराना हुआ, वह इस आफिस में आया । फिर तो उस ओर सारे देश का ध्यान आकृष्ट हुआ—ऐसा ही इन्हें अपने काम पर विश्वास है ।

एक-एक दिन के कार्यक्रम पर विचार हुआ । हमारे कुछ साथी और चीजें इस कार्यक्रम में जुड़वा रहे थे । मुझे बुरा लग रहा था । जहाँ तक स्वतंत्र रूप से देखा जाय, उतना अच्छा । कुछ लोगों को बोलने की बीमारी होती है—यहाँ तो तीन-तीन मद्रासी हैं ! मद्रास तो इनका है ही, दिल्ली और बम्बई से भी मद्रासी ही भेजे गये हैं । बंगाली भाई भी बोलने में किसी से पीछे क्यों रहें !

वहीं मालूम हुआ, आज टेम्स में नावों का प्रदर्शन है । खा-पी कर हम लोग टेम्स के किनारे गये । वाटरलू पुल के अगल-बगल किनारे पर लोगों की भीड़ । ९० वर्षों के बाद लंदन के मेयर का यह नौका-जुलूस निकला है । मेयर के उजले कपड़े पर का चमाचम सोना किनारे से ही दिखाई पड़ता था । दोनों ओर पुलिस की नौका । दो बड़ी नौकाओं पर बैंड की पार्टियाँ ।

मैंने मि० सैम्पुल से कहा—तुम्हारी जाति को दो ही रंग पसंद है—नीला और लाल । उत्सव में इन दोनों रंगों की भरमार रहती है । स्त्रियों को लाल घँघरे पहने भी प्रायः देखता हूँ । सैम्पुल ने हँस कर कहा—हाँ, हमारी नाक लाल है और आँखें नीली !

नौका-विहार देख कर हम कामनवेल्थ रिलेशन आफिस में आये । यह है पार्लियामेंट, यह है ह्वाइट हॉल, यह है १० डाउनिंग स्ट्रीट !

जिनके नाम सुनते हुए बूढ़ा होने जा रहा हूँ, उन स्थानों को देखकर कैसी कल्पनायें जागीं, कल्पना कीजिये । पार्लियामेंट में तो हमें जाना ही है । ह्वाइट हौल में काली काई-सी लग आई है, अतः विश्वास नहीं होता था कि यही ह्वाइट हौल है । यों ही १० डाउनिंग स्ट्रीट सचमुच एक गली में है । किन्तु याद रखिये, लंदन की गली—पटना की गली नहीं ।

कामनवेल्थ आफिस में लार्ड ओगमेर ने हमारा स्वागत किया । कुछ और अधिकारी भी थे । कैसा शिष्टाचार है इनमें । एक सज्जन थे, जो पटना रह चुके हैं । उन्होंने बार-बार आग्रह किया कि कोई अभाव मालूम पड़े, तो जरूर खबर कीजियेगा—बूढ़े सज्जन थे ।

लार्ड ओगमोर लेबर-पार्टी के हैं । जब बेवन के इस्तीफे की बात आई; बड़े फख्र से कहा—हमारी पार्टी बलिदानों पर बनी है । जिन लोगों ने इसकी नींव डाली, उन्हों ने पाया कुछ नहीं, खोया ही खोया । उनका स्मरण हमें त्याग के लिए सदा तत्पर रखेगा । और १९३१ में रैमजे मैक-डोनल्ड और स्नोडन से जो गलती हो गई, हम उसे भूल नहीं सकते। बेवन की योग्यता और त्याग की हम सब सराहना करते हैं, किन्तु उनके हट जाने से हमारी हानि नहीं होगी , बल्कि यह अच्छा ही हुआ है कि अब मंत्रिमंडल के अन्दर तनाव नहीं रहेगा, एकता से काम हो सकेगा ।

इधर-उधर की भी बहुत बातें हुई । जब लौट रहा था, चौराहों पर मूर्त्तियों की भरमार देखी । हर चौराहे पर किसी न किसी की मूर्त्ति है । किन्तु बकिंघम पैलेस के सामने विक्टोरिया की जो मूर्त्ति है, वह मुझे बड़ी शानदार लगी । कई सिंहों की मूर्तियाँ—बड़ी जानदार, बड़ी खूबसूरत । किसी को अँगरेज महिला आलगीर किए हुई किसी को पुरुष । पुरुष और महिला की मूर्त्तियाँ बड़ी ही जानदार ?

इन सिंह मूर्त्तियों को देख कर अशोककालीन स्तम्भों की सिंह मूर्त्तियाँ याद आ गई । क्या आदमी जब ओज पर रहता है, उसे सिंह की याद

रहती है। हाँ, अशोक की सिंह-मूर्त्तियों के नीचे शान्ति का सन्देश है और ये मूर्त्तियाँ तो निस्सन्देह ही युद्ध की घोषणा-सी करती मालूम होती हैं !

यह है बकिंघम—जहाँ अँगरेजों के बादशाह रहते हैं। बादशाह को देखने का मौका मिले या नहीं, घोड़े पर जो उनके सन्तरी हैं, उनका सजाव भी क्या कम है ? इन सन्तरियों की जब भोर और शाम को बदली होती है, वह दृश्य भी दर्शनीय होता है, हमें यह बताया जा रहा है।

बी०-बी०-सी०—मरुभूमि में जैसे ओयसिस। बस नमस्ते और आदाब-अर्ज की धूम। हिन्दी में बातें करते हुए कितना आनन्द आता है।

ओमप्रकाश आ गये थे। हुजा के साथ हम लोग पहले एक 'पब' में गये ! बँगला-विभाग में काम करने वाली एक छोकड़ी बगल में आकर बैठ गई—यहाँ ये सब चीजें बहुत ही मामूली हैं !

ओमप्रकाश के साथ हाइड पार्क देखने चले। हाइड पार्क की रौनक आज देखी। इधर-उधर सैकड़ों, हजारों भी कह सकते हैं, अगल-बगल कुर्सियों पर बैठे, या घासों पर लेटे। हमें पहले नौका-विहार करना था, अतः इस पार्क की झील में गये !

नाव ली, ओमप्रकाश ने खेना शुरू किया। एक हमीं अभागे थे, जिन पर कोई लड़की नहीं। जिस तरह प्राचीन काल में हमारा कोई यज्ञ पत्नी के बिना नहीं होता था, उसी तरह यहाँ कोई सैर बिना औरत के नहीं होती !

नावें फुर्र-फुर्र उड़ी जा रही हैं। हँसी, तफरीह चल रही है। चुम्बन, आलिंगन भी यहाँ वर्ज्य नहीं।

किंतु उसकी सीमा कहाँ तक होगी। इसका अन्दाज तो लौटते समय लगा। झुरमुटा हो चला था। सूरज की किरणें झीनी चादर-सी लगती थीं, जो सौन्दर्य को छिपाती नहीं उभाड़ती ही। इधर-उधर युवक-युवतियाँ लेटे। अरे, यह क्या, यह छोकड़ी किस तरह चिपक गई है इस नौजवान से और वह किस तरह उसके होंठों पर चुम्बन किये जा रहा और उसे सीने से

कस रहा। सरे आम, खुले आम—ओमप्रकाश मुस्कुरा रहा है। कहता है, रविवार आने दीजिये, तो फिर देखियेगा। ऐसे अनगनित जोड़े मिलेंगे आपको। क्या मेरा काम इन्हें गिनते रहना है! वह देखिये, वह लाल घाँघरे वाली युवती क्या कर रही है? क्या दो शरीर मालूम होते हैं; हाँ चेहरे दो जरूर हैं जो बार-बार सटते और बड़ी देर पर हटते हैं!

यहाँ यह अश्लील नहीं समझा जाता है बेनीपुरीजी। अश्लीलता यहाँ सिमट कर बहुत छोटी हो गई है और उसकी सीमा का उल्लंघन करके तुरत पुलिस की हिरासत में जाना पड़े।

आज का खाना ओमप्रकाश के घर पर होना था। वह सपत्नीक रहता है। उसकी पत्नी—कमल! कानपुर के सुप्रसिद्ध देशभक्त डा० मुरारी लाल के परिवार की लड़की है। बी० ए०। यहाँ मौन्टेसरी पढ़ रही है। बड़े प्रेम से खाना बनाया था उसने; और हमने भारतीय भोजन बड़े प्रेम से किया।

यहाँ यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि ओमप्रकाश अपनी पत्नी के साथ यहाँ ४५.०) रुपये में ही रहता है। जिसमें १५.०) रुपया तो वह बी० बी० सी० तथा पत्रों में लिख कर कमा लेता है। ४५.०) की रकम में अधिक तो घर के किराये में ही जाता है। लन्दन के मुख्य बाजार से लगभग दस मील दूर पर एक फ्लैट ले रखा है। मियाँ-बीबी कबूतर की-सी आनन्द की जिन्दगी बिताते हैं।

ओमप्रकाश ने यह भी बताया कि यहाँ भारतीय विद्यार्थी अधिकतर छोकरियों के फेर में पड़ जाया करते! जहाँ चुम्बन, आलिंगन इतना सस्ता हो, वहाँ भारतीय नौजवान बेकाबू हो जायँ, तो क्या आश्चर्य! फिर, शरीफ घर की छोकरियाँ उनके हाथ तो आती नहीं—क्योंकि चुम्बन-आलिंगन से आगे किसी को बढ़ने नहीं देना चाहतीं, फलतः बुरी औरतों के फेर में वे पड़ जाते हैं, जो उन्हें खूब दूहती हैं। इसलिए, भारतीय विद्यार्थी सपत्नीक आवें, यही उत्तम।

हाँ यह लिखना तो रह ही गया था हम जहाँ ठहराये गये हैं वहाँ भारतीय भोजन बनाने का भी प्रबंध है । कल से ही हमें भारतीय भोजन की बहुत-सी सामग्रियाँ मिल जाया करती हैं—भात, दाल, पराठा, चटनी, अँचार, पापड़ ! मछली, मांस, मुर्गी—इनकी क्या पूछना ?

हाँ, जी हम शाही मेहमान हैं न ? जब हमें अँगरेजी सरकार ने जेलों में रखा था, वहाँ भी खातिरदारी में कोई कसर नहीं की, तो फिर यहाँ अपने घर में क्यों कसर रखे !

२६–४–५१

हिन्दी-केन्द्र—पहला थियेटर

हाँ पैरों में पंख बाँध कर न आया हूँ! दिन-रात उड़ता रहता हूँ। नींद भर सो नहीं पाता; चाह कर भी आराम नहीं कर पाता। कम दिन रहना है, बहुत कुछ देखना है—अतः सोना-लेटना जितना कम हो, अच्छा है!

कल रात मैं ओमप्रकाश के घर खाने गया, तो मैंने चर्चा चलाई कि क्यों नहीं यहाँ एक हिन्दी-केन्द्र की स्थापना की जाय। हिन्दी-क्षेत्र के बहुत से विद्यार्थी हैं। कुछ अन्य प्रभावशाली लोग भी हैं। बहुत से यहाँ के भारतीय हिन्दी पढ़ना-लिखना सीखना चाहते होंगे। अँगरेजों में भी हिन्दी-प्रेमी लोग होंगे। ग्रियर्सन की औलाद अवश्य कायम होगी। फिर हिन्दी की चीजों को अंगरेजी में लाने की चेष्टा तो यहीं से हो सकती है। यह काम तो बहुत ही आवश्यक है। अभी मौलाना आजाद ने कह दिया कि हिन्दी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मान नहीं पा सकी है, तो लोगों को बहुत ही खला। किंतु उसके लिये चेष्टा कहाँ की गई है।

कम से कम तीन संग्रह तो अंगरेजी में निकल जाना चाहिये (१) हिन्दी कहानियों का (२) हिन्दी एकांकियों का (३) हिन्दी कविताओं का। कहानियों में स्केच भी लिये जायँ। एकांकियों में प्रसिद्ध नाटकों के एकाध सीन दे दिये जायँ! कविताओं में नई-पुरानी दोनों की झलक रहे—लेकिन पहले नई कविताएँ दी जायँ। अँगरेजी भाषा में हिन्दी का एक इतिहास तो तुरन्त निकलना चाहिये।

हिन्दी का एक अच्छा पुस्तकालय हो, जिसमें नई-पुरानी पुस्तकों का अच्छा-सा संग्रह हो और सभी पत्र-पत्रिकायें आया करें। एक अध्ययन-

केन्द्र भी रहे, जहाँ भाषा भी सिखाई जाय और हिन्दी-साहित्य पर चर्चायें भी की जायँ। समय-समय पर हिन्दी के लेखकों और कवियों को बुलाया जाय!

ओमप्रकाश ने आर्थिक बाधा की बात कही। मैंने कहा, तुम लोग काम करो, रुपये के प्रबंध अवश्य हो जायँगे, मैं ऐसा विश्वास दिलाता हूँ।

और मैं ट्रेजरी में गया, जहाँ ब्रिटेन की आर्थिक स्थिति पर अधिकारियों ने प्रकाश डाला। उनका कहना बहुत सीधा था—पहले हम संसार से चीजें लाते थे, संसार भर में अपना माल पाटते थे। अब संसार में जो शक्तियाँ काम कर रही हैं, उनके कारण यह सम्भव नहीं कि यह क्रम जारी रखा जाय। अतः नये सिरे से हम एक नई आर्थिक नीति रखने जा रहे हैं, जिसका मूलमंत्र है स्वावलम्बन; तथा विदेशों से बराबरी के दर्जे पर आदान-प्रदान। सदियों के पुराने ढाँचे के स्थान पर इस नये ढाँचे को कायम करना सहज नहीं। इसलिये कठिनाइयाँ हो रही हैं। प्रारम्भ में अमेरिका ने हमारी काफी मदद की; किन्तु उसके हाथ भी खिंचते जा रहे हैं। इधर हमारी जनता के जीवन का मापदंड इतना ऊँचा हो गया है कि वर्तमान ढाँचे में बिना कठिन परिश्रम किये, हम इस उद्देश्य में सफल हो नहीं सकते। हमें प्रसन्नता है कि हमारी जनता हमारा साथ दे रही है और हमें विश्वास है, हम सफल होंगे!

हम ट्रेजरी के जिस कमरे में बातें कर रहे थे, उसकी सादगी देख कर मैं मुग्ध हो गया। कल कामनवेल्थ रेलेशन वाले कमरे में भी सादगी ही थी। फिर जिस तरह सीधे-सादे ढंग से ये बातें करते हैं, वह भी आश्चर्य का विषय है। जब यहाँ के आफिसों और उनके अधिकारियों से अपने यहाँ की तुलना करता हूँ, तो आश्चर्य होता है। हमारे मिनिस्टरों के कमरे, उनके सेक्रेटरियों के कमरे और खास कर सेक्रेटरियों की भद्रकुलीय दंभ की बातें!

दिक़्क़त यह है कि अँगरेजों ने अपनी साम्राज्यशाही के लिए जो ढाँचा तैयार किया, उससे हम अपने स्वराज्य के काम का संचालन कर रहे हैं। यहाँ समय को देख कर अँगरेजों ने अपने में कितना परिवर्तन कर लिया है!

एक लम्बा-सा सादा टेबुल था। बिना बाँही की कुर्सियाँ थीं। टेबुल पर कोई कपड़ा नहीं था। ऐश-ट्रे पुराने थे, लोहे के थे। एक सज्जन......बोल रहे थे; दो—एक स्त्री, एक पुरुष—उन्हें सहायता कर रहे थे। जो नहीं सुलझा पाते थे, उसे ढँपने की कोशिश नहीं करते थे।

वहाँ से आ कर देखता हूँ, ओम और कमला दोनों बैठे हैं। मैं नीचे खाने गया; यहाँ खाने की अजीब रीत है। खाइये, पीजिये, गप्पें लड़ाते जाइये। बीच में उठना अभद्रता है। बड़ी देर हुई, तो ओम ने एक अतुकान्त कविता ही रच डाली। वही हल्के व्यंग वाली—जिसमें वेटरेस के गालों का रंग आदि क्या-क्या खुराफातें भरी थीं।

आकर हिन्दी-केन्द्र के बारे में चर्चा चली; हम कह रहे थे, कमला लिख रही थी। तय हुआ कि पहले डाक्टर कमल कुलश्रेष्ठ से मिला जाय जो लंदन-यूनिवर्सिटी में हिन्दी के प्रोफेसर हैं। उन्हें फोन किया गया। हम उनके घर गये; देर तक बातें हुईं। तय हुआ कि शनिवार को प्रारम्भिक बैठक की जाय और २१ को इसका उद्‌घाटन हो। तब तक भारत से भी शुभकामनायें मँगवा ली जायँ।

कुलश्रेष्ठ जी से पता चला कि उनके कालेज में लगभग ६० हिन्दी के विद्यार्थी हैं, जिनमें भारतीय सिर्फ तीन हैं। हमारे महेश जी उनमें एक हैं। सिनियर कैम्ब्रिज की जो परीक्षायें होती हैं, उनमें पाँच हजार ऐसे विद्यार्थी हिन्दी लेते हैं, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं। उनमें एक हजार विद्यार्थी तो यूरप के होते हैं। उन्हीं ने यह भी बताया कि रोम, पेरिस और ईस्ट जर्मनी के विश्वविद्यालयों में भी हिन्दी की पढ़ाई होती है और प्राग में भी शुरू होने जा रही है।

लंदन में यदि कोई सुसंचालित 'हिन्दी-केन्द्र' हुआ, तो इन सारे लोगों को एक सूत्र में बाँध कर हिन्दी-सम्बन्धी बहुत-से महत्वपूर्ण कार्य कराये जा सकते हैं।

वहाँ से हम लोग "यूनिटी थियेटर" में गये। माथुर साहब ने कहा था, रिव्यू Revue नामक एक तरह के नये नाटक चले हैं, देख लीजियेगा। उसी से नाटक देखना शुरू हुआ। यह थियेटर कम्युनिस्टों और उनके शुभचिन्तकों के उत्साह और कलाप्रेम का सबूत है। सदस्य या उनके द्वारा आमंत्रित व्यक्ति ही देख सकते हैं—यों, यह प्राइवेट थियेटर है। उन्मुक्त थियेटर रखने पर खेल को पहले सेंसर से पास करा लेना होता है। और, ये लोग जो खेल खेलते हैं, क्या उन्हें पास कराया जा सकता है? अतः यह उपाय !

छोटी-छोटी २७ घटनायें, नाम है—Here Goes, अधिक व्यंग्य प्रधान। ड्रापसीन ही अनोखा। एक लड़की एक हाथ पर कबूतर और एक हाथ में ओलिव की पत्ती लिये खड़ी है। अमेरिका के प्रतीक 'चाचा शाम' उसे देख कर ही भौंचक हैं—शरीर पर अमेरिकन झंडा लटका है, बगल में कवच आदि शस्त्र पड़े हैं !

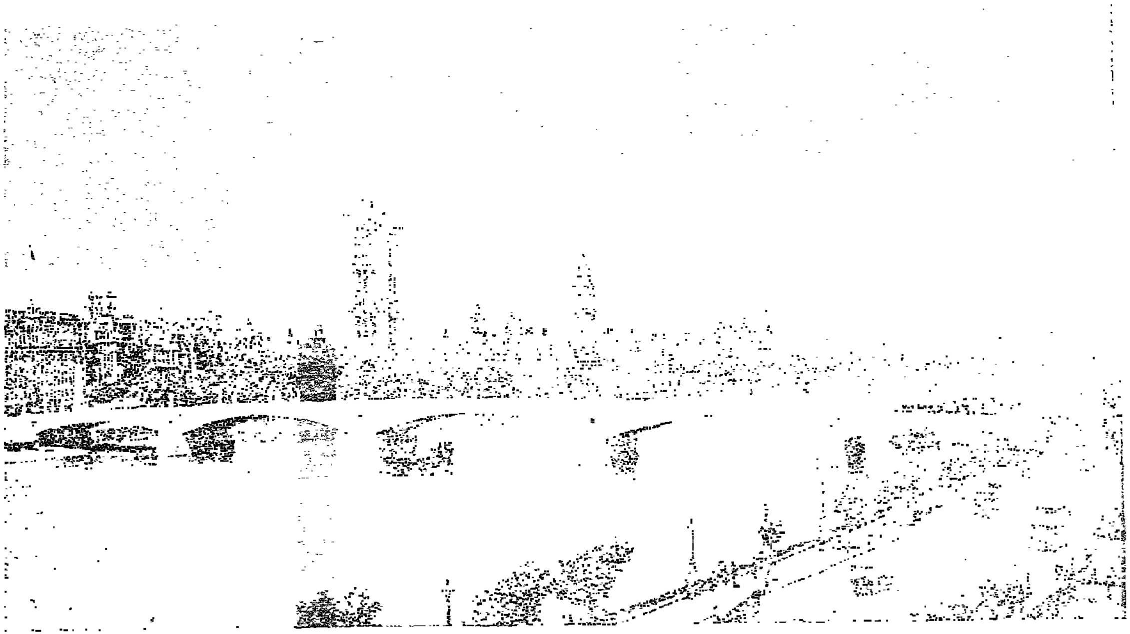
बहुत ही सादा रंगमंच। ऐक्टरों और ऐक्टरेस की पोशाकें भी सादी। सेटिंग भी प्रतीकात्मक। किन्तु रोशनी का ऐसा प्रबंध कि सारे खेल में जान आ जाती थी। कोई दृश्य एक मिनट का, कोई दो मिनट, तीन या पाँच मिनट। कोई दृश्य दस मिनट से अधिक का नहीं। दृश्यों का ऐसा लगाव कि एक दृश्य खत्म हुआ, लोग हँसने लगे, तालियाँ पीटने लगे कि दूसरा दृश्य प्रारम्भ ! जरा भी ऊब नहीं आई। बीच-बीच के दृश्य गानों में ही। अमेरिका की, फ्रैंको की, चर्चिल की, स्ट्रैची की, राशनिंग की, तथा-कथित प्रगतिशील लेखकों की, नई नारियों की, सब की धज्जियाँ उड़ाई गई थीं !

काफी लोग आये थे। इला सेन और जोन रीड भी आये थे जिनसे ब्रॉम ने परिचय कराया।

खेल समाप्त होने पर एक महिला ने दर्शकों को धन्यवाद दिया और बताया कि उन पर पुलिस ने समन जारी कराये हैं। वह मुकदमा लड़ना होगा, जो मदद करना चाहें, दरवाजे पर कुछ देकर जायँ। दरवाजे पर तीन लड़कियाँ डब्बा लिये खड़ी थीं और जो पैसे देते, उन्हें हँस-हँस कर धन्यवाद देती थीं।

आज खूब जाड़ा पड़ता रहा। दो दिनों तक जगमगाहट फैलाकर सूर्य-देव गायब हो गये। दिन में सिर्फ एक-दो बार झांकी देखी उनकी! रात में जब लौटा, काफी ठंडक थी।

थियेटर के साथ ही एक छोटी-सी पुस्तकों की दुकान। मैंने यहाँ पर 'डेली वर्कर' का इतिहास खरीदा। साधारणतया सभी प्रकार की प्रगति-शील पुस्तकें यहाँ मिलती हैं।



टेम्स नदी का एक मनोहर दृश्य

२७।४

जहाज घाट : संगीत रूपक

आज लंदन का डौक-एरिया देखना था—हिन्दी में कहिए तो जहाज-घाट।

जलपान के बाद चले। रास्ते में पार्कों और पेड़ों पर बार-बार ध्यान जाता था। बड़ी ऊंची, ठंढी और प्रायः ही काली बनी हुई इमारतों के बीच-बीच, जहाँ-तहाँ पार्क—हरी-हरी भूमि, जगह-जगह फूलों की क्यारियाँ, इधर-उधर कुर्सियाँ रखीं, कोई पार्कों के बीच तालाब भी। इन पार्कों में हमेशा ही आप कुछ लोग पायेंगे—बच्चे, बूढ़े, युवक और युवतियाँ! युवतियों को बाद देकर आप जैसे लंदन की कल्पना ही नहीं कर सकते?

और पेड़—धीरे-धीरे जैसे काया पलट हो रही है इनकी। काले-काले पत्ते-रहित पेड़ों को ध्यान से देखिये, तो मालूम होगा, उनसे कोंपलें फूट रही हैं। कुछ में तो फूट चुकी हैं! लगे हुए पत्तों की अपेक्षा फूटते पत्ते जैसे मन में गड़े जा रहे हों!

छोटे-छोटे पत्ते; रंगीन पत्ते; कोई-कोई पेड़ के पत्ते तो ऐसे हैं कि पूरी विरूपी दुलहन लगती हैं।

अच्छे समय पर निमंत्रण दिया गया है हमें।

ज्यों-ज्यों जहाज घाट के निकट पहुँचने लगे, पिछली लड़ाई की विभीषिका आँखों के सामने स्पष्ट होने लगी। हिटलर के हवाई जहाजों क अधिक मार इस घाट पर ही थी। अब भी गिरे घरों के मलबे दिखाई पड़ते हैं; अब भी गिरे-अधगिरे घर भयानक लगते हैं।

यह टेम्स नदी है, नदी में जहाज ही जहाज, किनारे पर क्रेन ही क्रेन। क्रेन के द्वारा बड़े-बड़े माल गोदामों से उठाकर जहाज पर लादे जा रहे हैं।

पहले हमें एक अजीब गोदाम दिखाया गया। जमीन के अन्दर तहखाने में शराब के पीपे रखे गये हैं। हमें जो तहखाना दिखाया गया, वह १८०५ में बना। तहखाना ईंट और पत्थर का है—लकड़ी या लोहे का कहीं नाम नहीं। ऐसे अनेक तहखाने हैं, जिनका रकबा २०–३० एकड़ से कम नहीं होगा। इनमें जो पीपे हैं, वे बहुत पुराने हैं—लगभग बीस-तीस साल के। पीपों में शराब भर कर व्यापारी यहाँ रखे हुए हैं। ज्यों ज्यों शराब पुरानी होती है, त्यों-त्यों उसकी कीमत बढ़ती जाती है। तहखाना आठ-दस फीट से ज्यादा ऊँचा नहीं, तीन-चार पीपे एक पर एक रखे गये हैं। पीपों से शराब की जो गैस निकलती है, उससे तहखाने के छत में काई जम गई है। काई—रंगबिरंगी—उजली, लाल, हरी। देखने में बड़ी खूबसूरत!

हमारे पथप्रदर्शक ने पूछा, क्या थोड़ी चखियेगा? अजीब हड्डी-तोड़ ठंढक थी—यारों ने हाँ कह दी। पोर्ट के एक पीपे से लाल-सी चीज पम्प से निकाली जाने लगी और गिलास खनकने लगे। मैंने भी थोड़ी ली—पीने में कितनी ठंडी; पेट में पहुँचते ही नसों में जैसे आग दौड़ने लगी।

वहाँ से हम उस स्थान पर गये, जहाँ तम्बाकू का गुदाम था। देश-देश की तम्बाकू। क्या भारत की तम्बाकू भी है? पथ प्रदर्शक ने एक बोरे को उघाड़ कर भारतीय तम्बाकू दिखलाई और बताया, इस तम्बाकू का रंग चोखा भले ही न हो, पर होती है बड़ी अच्छी!

फिर वहाँ, जहाँ से जहाज रवाना होते हैं। बड़े-बड़े जहाज खड़े थे। लोग चींटियों की तरह दौड़धूप कर रहे। जहाजों के अजब-अजब नाम। एक जहाज का नाम 'शिमला' देखा। किनारे पर जहाजी कम्पनियों की तख्तियाँ! कम्पनी—अँगरेजी जीवन की यह भी एक प्रतीक। अकेले-अकेले कुछ न कर सकोगे; मिल जाओ कुछ लोग, खड़ी करो कम्पनी, फिर बाजी तुम्हारी!

दिन का भोजन सुप्रसिद्ध समाचार एजेन्सी रायटर के दफ्तर में करना था। उसके प्रधान ने हमारा स्वागत किया, फिर गप्पें शुरू हुईं—खड़े-खड़े, पीते रहो, गप्पें लड़ाओ। रायटर में तीन-चार भारतीय काम करते हैं, वे

भी आये। सबके सब बम्बई के। फिर भोजन। भोजन में भारतीयता की पुट—गोश्त तक नहीं था।

फिर दिखाया गया कि कैसे यहाँ काम होता है। जहाँ देखिये, वहीं टेलिप्रिंटर! देश-देश से समाचार आते हैं। उन्हें छाँटा जाता है, उन्हें रोचक बनाया जाता है। बहुत से समाचार वायरलेस से आते हैं। बने-बनाये समाचार सम्पादक-मंडल के पास जाते हैं, वह जब पास कर देता है, तो फिर कहीं टेलिप्रिंटर से, कहीं वायरलेस से भेज दिया जाता है!

रायटर के साथ ही असोसियेटेड प्रेस आफ इन्डिया को मिला दिया गया है। वहाँ हम लोगों का फोटो लिया गया।

रायटर की बगल में ही सेंट पाल का बड़ा गिरजाघर है—इंगलैंड का सबसे बड़ा गिरजाघर। इस पर भी हिटलरी बम गिराये गये थे। संयोग से बम बगल के हिस्से पर गिरा। उस हिस्से की पूरी मरम्मत अभी तक नहीं होने पाई है।

रास्ते में बैंक आफ इंगलैंड और उसकी बगल में रोयाल एक्सचेंज देखा। इंगलैंड के सारे आर्थिक ढाँचे का केन्द्र-विन्दु यही है। बैंक आफ इंगलैंड का राष्ट्रीयकरण हो चुका है!

घर आकर जरा-सा लेटा था कि फिर नाटक देखने को रवाना!

डाक्टर लोहिया ने कहा था, यूरप में नाटक देखना नहीं भूलना। नाटक-घर यूरोपवालों का तीर्थ स्थान है। और, हम उनके एक सर्वश्रेष्ठ तीर्थ-स्थान में थे।

सेवेल—थियेटर में एक सगीत रूपक "Gay's the ward"। इंगलैंड की प्रसिद्ध नर्तकी-कुर्टनीज...का अभिनय। पता चला, ५६ वर्ष की है वह! किन्तु कैसा कमाल!

बहुत छोटी-सी कहानी। एक नर्तकी ने एक नाटक मंडली बनाई है। वह उसके खेलने की तैयारी करती है, पात्र-पात्रियों का चुनाव करती है, रिहर्सल कराती है, फिर लोगों को दिखलाती है। बस, इसी कहानी में क्या-

क्या कमाल नहीं दिखलाया गया। व्यंग्य-हास्य, शृंगार हास्य, गीत-नृत्य? गीत-नृत्य—जीवन से ओत-प्रोत? जवान, खूबसूरत लड़कियाँ! कैसी सुघड़ जाँघें, कैसी कसी छातियाँ? नाचती क्या थीं, उड़ती-सी मालूम होती थीं। संगीत में इतना चढ़ाव और इतनी क्षिप्रता कि नृत्य में पंख लग गये-से दीखते। बार-बार तालियों की गड़गड़ाहट! जब खेल समाप्त हुआ, वह दृश्य क्या भूलने का है। अपने नट-नटी की कद्र करना ये जानते हैं? खेल खत्म कर वे सब पंक्तियों में खड़े हुए। फिर तो तालियाँ इस जोर से पिटीं और इतनी देर तक पिटीं, कि सारा भवन गूँज रहा था। नर्तकी ने धन्यवाद दिया; तीन बार पर्दा गिरा और उठा और तालियों की गड़गड़ाहट में ही खेल का अन्त हुआ।

इधर मैं लंदन की इमारतों को देखकर सोच रहा था, लंदन बूढ़ा हो गया। बड़ी-बड़ी इमारतें, इसमें सन्देह नहीं—किन्तु सब पर कालिमा-सी पुती। ज्यादातर पत्थर की इमारतें। धुआँ और लगातार का जाड़ा और वर्षा—इन्हें धुँधला बना छोड़ते हैं। अपने देश की तरह कहीं चमक नहीं। देखने से लगता है, ये इमारतें नहीं, कोई बुढ़िया है। किन्तु आज जब इस थियेटर को देखा, इसके गीत-नृत्य की क्षिप्रता देखी, दर्शक और दर्शिकाओं की उमंग का पता पाया, तो लगा, नहीं, लंदन अभी बूढ़ा नहीं हुआ है? छिलके पर दाग पड़ गये हों, भीतर ताजा रस लबालब है?

वहाँ से लौट कर 'शफी' में खाना खाया। यह एक भारतीय भोजनागार है। हर तरह का खाना। कोफ्ता, पुलाव, मुर्ग-मुसल्लम, दही बड़े, जलेबी—हाँ, दाम, अधिक देने पड़ते हैं! नाम 'शफी' है—किन्तु इसके मालिक हैं एक गुजराती सज्जन—लालजी भाई। यहाँ बहुत-से भारतीय विद्यार्थियों को देखा। हर की बगल में एक 'एटेची'! बाप दादों की कमाई—खूब उड़ालो यार!

बारह बजे रात के लगभग लेटा।

अजीब जिन्दगी हमारी है! दिन भर चक्कर में ही—न आराम, न पूरी

नींद । थोड़े दिन हैं, बहुत देखना है, अतः यह जल्दबाजी । रात को लौटता हूँ, तो थका-माँदा । अकेला; इस गुलगुली शय्या पर लेटा नहीं कि नींद !

मेरे कमरे में, मेरे सिरहाने, एक बड़ी सुन्दर तस्वीर है । दो बच्चे—बच्ची के गले में हाथ डाले एक बच्चा । कितनी मासूमियत । कैसी उदासी ! शायद दो अनाथ, चिन्ताशील, भोले-भाले शिशुओं की मनोभावना को साकार करने की चेष्टा की गई है और निस्सन्देह इसमें चित्रकार सफल हुआ है । इस विलास के घर में यह करुणा की मूर्ति ! क्यों ?

२८-४-५१

ब्रिटिश म्यूजियम : इंगलैंड के अखबार

आज प्रतिनिधि-मंडल का कोई खास कार्यक्रम नहीं। पूरा दिन अपना है।

भोर में ही सच्चिदानन्द जी आये। उनके साथ उनकी पत्नी कला थीं। कला के लिए एक जोड़ जूते विमला ने दिये थे। उन्हें सौंप कर सन्तोष हुआ। सच्चिदानन्द जी यहाँ मानव-वंश-शास्त्र पढ़ने आये हैं। कला भी पढ़ रही है। इन्होंने कल शामके लिए खाने का निमंत्रण दिया?

लगभग १०॥ में ओमप्रकाश और तूफान साहब आये। हम लोगों ने ब्रिटिश म्यूजियम देखने का तय किया।

ब्रिटिश म्यूजियम—अँगरेजों की संग्रहवृत्ति का श्रेष्ठ उदाहरण। विदेशों से रुपये-पैसे ही नहीं लाये, कला, कारीगरी, ज्ञान आदि के साधन भी लाये और उन्हें यहाँ एक जगह एकत्र किया! इसके लगभग एक दर्जन विभाग हैं। एक-एक विभाग भारत के किसी भी पूरे म्यूजियम का मुकाबला कर सकता है।

यहाँ छपी पुस्तकें हैं, हस्त-लिखित पोथियाँ हैं, चित्र हैं, सिक्के हैं. मूर्त्तियाँ हैं। रोमन और मिश्री मूर्त्तियों की पंक्तियाँ देखते ही सर चकरा जाता है। चीन की चित्रकारियों का संग्रह देखकर आदमी भौंचक हो जाता है। हस्तलिपियों की भी भरमार है। ऐसा एक भी प्रसिद्ध अँगरेज लेखक नहीं हुआ, जिसकी हस्तलिपियाँ यहाँ न हों। और छपी पुस्तकों का क्या कहना?

तूफान साहब ने कहा—क्या आप अपनी पुस्तकें देखना चाहते हैं? क्यों नहीं—हमने नाम लिखकर दे दिया। दस मिनट के अन्दर ही 'विद्यापति की पदावली' का प्रथम संस्करण हमारे सामने था—वह सचित्र

संस्करण जो पौष १९८२ वि० में निकला था। २१ अगस्त १९२७ में यह संस्करण यहाँ आया था। अब भी ताजा लग रहा था वह।

एक इस म्यूजियम को देखने के लिए ही कई दिन चाहिये। मेरे पास उतना समय कहाँ? जब तक मेरी पुस्तकें निकाली जा रही थीं, मैंने हिन्दी-पुस्तकों की सूची देखी। कई अलभ्य पुस्तकों के नाम देखे। सूची में पहली पुस्तक है सैयद अब्दुल्ला की सिंहासन बत्तीसी। १८७८ ई० में ही अनवर अली ने "बिजली-दीपिका" लिखी थी, जिसमें विद्युत सम्बन्धी बातों का समावेश है। जे० टी० टौम्सन ने १८८२ में "ज्योतिष और गोलाध्याय" लिखा, अयोध्या प्रसाद ने "गणितसार" लिखा, "खगोल विद्या" और 'भूगोल विद्या' पर १८६० में ही इलाहाबाद से पुस्तकें निकलीं। क्या ही अच्छा होता कि कोई हिन्दी-प्रेमी विद्वान यहाँ की हिन्दी-पुस्तकों पर अध्ययन करता और यदि इन पुस्तकों की प्रतियाँ भारत में ले जाने की कोई व्यवस्था होती!

नेपोलियन की वह नसदानी देखी जिसे उसने किसी अँगरेज को भेंट किया था। स्काटलैंड की क्वीन मेरी की अँगूठी भी यहाँ सुरक्षित है। शेली का एक पत्र देखकर उस कवि की कल्पना और भावना की जिन्दगी साकार हो गई।

म्यूजियम से निकल रहा था कि डा० अशरफ साहब से भेंट हो गई। डा० अशरफ—हमारे पुराने दोस्त। अखिल भारतीय कांग्रेस कमीटी के राजनीतिक विभाग के संचालक। जब सोशलिस्ट पार्टी बनी, उसमें शामिल हुए। कई बार पटना आये। अच्छे वक्ता, प्रभावशाली व्यक्तित्व! किन्तु, पीछे कम्युनिस्ट पार्टी का साथ दिया और जब भारत का विभाजन हुआ, पाकिस्तान चले गये। किन्तु, भाग्य का फेर! अब उन्हें पाकिस्तान लेने को तैयार नहीं, भारत उन्हें क्यों ले। अँगरेज बी० बी० कमाती है; आप म्यूजियम में बैठकर अनुसंधान करते हैं। कम्यूनिस्टों से भी नहीं बनती है। चाहते हैं कि भारत की कोई यूनिवर्सिटी ढाई-दो सौ के माहवार

पर भी बुला ले ! उन्हें देखकर बड़ी करुणा आई ! स्थान-भ्रष्ट होने पर आदमी कहीं का नहीं रहता ।

दिन में ओमप्रकाश के घर खिचड़ी खाई । कमल के हाथ का चमत्कार । बड़े प्रेम से खाया । फिर एक साथ फोटो खिंचवाया ।

आज यहाँ फुटबाल का एक मैच होनेवाला था । सोचा था, देखेंगे । किन्तु ब्रिटिश इन्फोरमेशनवालों की चेष्टा पर भी टिकट नहीं मिला । यह हिन्दुस्तान थोड़े है कि सरकार जो चाहे कर ले, जहाँ चाहे कुर्सियाँ खाली करा दे या रखवा दे । तय हुआ था कि बी० बी० सी० में चलकर टेलिवीजन पर देखेंगे । इसके लिए उनलोगों ने प्रबंध भी कर रखा था । किन्तु खिचड़ी ने उस कार्यक्रम को खटाई में डाल दिया । किन्तु संध्या के सभी पत्र उसकी रिपोर्ट से भरे हुए थे । देखनेवालों की संख्या एक लाख पहुँच गई थी । बादशाह भी सपत्नीक पधारे थे । कई दिनों से लोग बाहर से आ रहे थे । तीन शिलिंग की टिकट ३ पौंड १० शिलिंग में बिकी ।

पहले के निर्णय के अनुसार डा० कमल कुलश्रेष्ठ तथा कुछ अन्य हिन्दीप्रेमी मेरे यहाँ हिन्दी-केन्द्र के सम्बन्ध में विचार विमर्श करने को पधारे । केन्द्र के लिए एक छोटी-सी नियमावली बना ली गई और अस्थायी रूप से उसके सभापति डा० कुलश्रेष्ठ और मंत्री ओमप्रकाश चुने गये । तय हुआ कि २१ को उसका उद्‌घाटन किया जाय—मेरे ही द्वारा उसका उद्‌घाटन कराने का उन्होंने निश्चय किया !

सोचता हूँ, यदि यह काम हो गया, तो मेरी लंदन-यात्रा ही सफल नहीं हुई; बल्कि हिन्दी की एक बड़ी सेवा हो जायगी । इस सम्बन्ध में भारत के हिन्दीप्रेमियों का ध्यान आकृष्ट करने के लिए कल से लिखा-पढ़ी शुरू कर दूँगा ।

श्री टंडन जी को लिखूँगा कि क्या सम्मेलन के प्रपंच में वह पड़े हैं । अब समय आ गया है कि विदेशों में हिन्दी प्रचार के लिए चेष्टा की जाय । यूरोप के हर राजधानी में हिन्दी केन्द्र की स्थापना तो तुरत कर ही लेनी

चाहिये। लोग लालायित हैं, भारत से सहायता मिले, तो यह काम तुरत किया जा सकता है।

जब से यहाँ आया हूँ, यहाँ के पत्रों को बड़े ध्यान से देख रहा हूँ। कल जितने पत्र मिल सके खरीदा। इन पत्रों को देखकर यहाँ की पत्र-कारिता के बारे में कुछ मोटी-मोटी बातें स्पष्ट हो जाती हैं।

इन्फोरमेशन की ओर से हमें जो सूचना-पत्रक दिये गये, उनसे पता चलता है कि लंदन से दस बड़े अखबार भोर में निकलते हैं, जिसमें "डेली मिरर" का प्रचार सबसे अधिक है ४५, ४७, १६१। इसके मुकाबले का पत्र 'डेली एक्सप्रेस' है—४०, ८२, ७०९। 'डेली मेल' का प्रचार २२ लाख है और 'डेली हेरल्ड' का २० लाख। यह पत्र लेबर-पार्टी का है। विश्व विख्यात पत्र टाइम्स का प्रचार सिर्फ २,५५,००० है और कम्यूनिस्टों के 'डेली वर्कर' का १,१७,०००। 'डेली क्रौनिकल' का प्रचार १५ लाख है।

लंदन से संध्या को तीन दैनिक निकलते हैं—इवनिंग न्यूज १६ लाख; स्टार १२ लाख और इवनिंग स्टैन्डर्ड ८ लाख। प्रान्तों से जो पत्र निकलते हैं उनमें से किसी का प्रचार ५ लाख से अधिक नहीं है। रविवार के पत्रों में "न्यूज आफ दि वल्र्ड" का प्रचार ८४ लाख है। साप्ताहिकों में सबसे अधिक प्रचार है "न्यू स्टेट्समैन एंड नेशन" का—७७ हजार। सचित्र साप्ताहिकों में 'पिक्चर पोस्ट' का प्रचार सबसे अधिक है—१४ लाख।

सभी पत्रों में एक खास बात यह है कि वे सिर्फ राजनीति पर ही ध्यान नहीं देते, सामाजिक और व्यक्तिगत बातों पर अधिक जोर देते हैं। बेवन साहब के इस्तीफे से काफी सनसनी मची हुई है, किन्तु प्रिंस अली की प्रेयसी 'रिता' के डाइवोर्स की बातें उससे कम जगह नहीं घेरतीं! हर पत्र के मुख पृष्ठ पर किसी सुन्दरी के प्रेम-सम्बन्धी शीर्षक जरूर होता है और चित्र भी। यों ही 'टाइम्स' को छोड़ कर किसी का भी सम्पादकीय एक

कालम से अधिक का नहीं होता है। डेली वर्कर अपना सम्पादकीय मुख-पृष्ठ के पहले कालम में ही छापता है।

भारत के सभी दैनिक बड़ी साइज में ही निकलते हैं। उस साइज का यहाँ सिर्फ एक पत्र है—"टाइम्स"! पत्रों की मिल्कियत मुख्यतः सात कम्पनियों की है—नकेम्सले न्यूज पेपर २४ पत्र; एसोसियेटेड न्यूज पेपर १९ पत्र; वेस्ट मिन्स्टर प्रेस ४३ पत्र; प्राविंसियल न्यूज पेपर्स १५ पत्र; हार्म्सवर्थ ग्रूप १४ पत्र; इलिफे ग्रूप ४ पत्र; लंदन एक्सप्रेस न्यूपेपर्स ३ पत्र। डेली हेरल्ड के ५१ सैकड़े शेयर्स ओढम प्रेस का है और ४९ सैकड़े शेयर्स ट्रेड यूनियन कांग्रेस का, जो उसकी नीति का संचालन करती है।

जाड़ा बढ़ता जा रहा है। जब-तब झींसी-फुही भी हो जाती है। इसे लोग "लंदन का मौसम" कहते हैं?

हाँ, इतने दिनों से हूँ, पंछी नहीं देखे? कल मैंने रायटर के दफ्तर में एक सज्जन से पूछा भी। वह कहते हैं पंछी देहातों में देखियेगा!

२९ अप्रील

कुछ परिचित चेहरे

आज रविवार है। कल ही तय कर लिया था, कल खूब सोऊँगा अतः ९ बजे तक सोता रहा। उठ कर स्नानादि से निवृत्त हो अकेले हाइड पार्क की ओर गया। कुछ लोग इस विस्तृत मैदान में टहल रहे थे। मैं भी बहुत दूर तक निकल गया। कहीं बूढ़े, कहीं बच्चे। कहीं युवक कहीं युवती। दूर से वह एक युवती आ रही है। लाल रंग का घाँघरा; लाल रंग का बड़ा रूमाल गले में बाँधे। सुनहले बाल बिखरे। आगे-आगे दो कुत्ते—लम्बा कदम डाल रही है। क्या बात है कि यहाँ की जवान लड़कियाँ लाल रंग अधिक पसन्द करती हैं—उसे पहन कर तो वह लाल ज्वालामुखी-सी लगती हैं?

कानों में चिड़ियों की आवाज पड़ी—जिसके लिए छटपट कर रहा था। उस ओर देखा, तो कुछ कबूतर नीचे चुग रहे। कबूतर की बोली तो ऐसी नहीं हो सकती। पेड़ के नजदीक चला गया—काले भूरे रंग के पंछी फुदक रहे! देखने में अच्छे नहीं लगे!

खाना खाकर फिर सो गया। बस, सोने से आज ही मन भरा है। ५ बजे ओमप्रकाश के साथ डा० अशरफ के घर गया। वहीं पंचानन मिश्र से भेंट हुई। बलिया के हैं। लंदन स्कूल आफ एकोनोमिक्स में पढ़ते हैं। यहाँ की सोशलिस्ट पार्टी में हैं। डाक्टर अशरफ के घर पर ही कुछ पाकिस्तानी पत्रकारों से भेंट हुई थी? उसमें एक सज्जन वह भी थे, जो पाकिस्तानी पत्रकारों के प्रतिनिधि मण्डल में भारत पहुँचे थे और जिन्होंने भारत की प्रशंसा में कुछ ऐसा कहा था कि पाकिस्तानी पत्रों में तूफान मच गया था। उन्होंने पूछा—आपके यहाँ का मजहबी पागलपन पूरी तरह दूर हो गया न? भाई-भाई की गर्दन काट कर कम्बख्त अब सुस्ता रहे हैं! कब तक लड़ते?

यहीं यूरोप-यात्रा का खाका बनाया गया—फ्रांस, स्वीटजरलैंड, जेको-स्लोवेकिया, इटली और यूगोस्लाविया और मिश्र देख लिया जाय। तब हम अपने देश १४ जून को पहुँच सकेंगे। कुल खर्च १२५ पौंड लगेंगे।

अशरफ साहब मुसलमानी युग का सामाजिक इतिहास लिखने की तैयारी में हैं। म्यूजियम की तीन सौ हस्तलिखित फारसी की किताबें पढ़ चुके हैं। कुछ पुस्तकें पटना में हैं खुदाबख्श खाँ की लाइब्रेरी में। हाई-कमिश्नर से हुक्म लेकर कुछ दिनों के लिए पटना आने वाले हैं। डा० महमूद साहब को उन्होंने लिखा है।

पंचानन मिश्र साथ में आये। तय हुआ कि अगले रविवार को यहाँ के पार्टी-सदस्यों को बुला कर मुझसे भेंट कराई जाय। पहली मई को लेबर-पार्टी द्वारा आयोजित कन्सर्ट में शामिल होने की भी राय दी। उसी दिन "डेली हेरल्ड" देखना था, उन्होंने फोन से तय किया कि मैं दूसरे दिन भी देख लूँ, तो उसका प्रबंध हो जाय।

शाम को सच्चिदानन्द जी के घर पर भोजन किया। कला ने अपने हाथ से रसोई बनाई थी। भारतीय भोजन—बड़े प्रेम से खाया।

यहाँ पता चला, दोनों प्राणियों में सिर्फ ३० पौंड खर्च पड़ते हैं। कला बच्चों की पढ़ाई सीख रही है। बी० ए० है। काशी में नैहर है उसका।

अँगरेजों के जीवन पर बातें हुईं। इन दोनों ने अपने अनुभव पर बताया कि इनके जीवन में कितनी सचाई है! ट्रेन पर चढ़ जाजिये, स्टेशन पर जहाँ से आना बताइयेगा, उतने ही पैसे लेंगे। किन्तु, कोई झूठ बताता ही नहीं है। मोड़ पर अखबार पड़े हैं, पैसे रख दीजिये, अखबार ले जाइये, शाम को अखबार वाला आयगा और अपने पैसे ले जायगा। न पैसे कोई छूता है, न बिना पैसे का अखबार लेता है। जिन विद्यार्थियों को स्कालरशिप मिलती है, उन्हें अपने कालेज के अधिकारियों से लिखवाना पड़ता है कि वे कहाँ पढ़ रहे हैं। एक अधिकारी ने कहा—क्या तुम्हारी सरकार तुम पर विश्वास नहीं करती?

किन्तु कुछ भारतीय अपने देश को कलंकित करते हैं। एक सज्जन जो यहाँ ६०० पौंड कमाते हैं एक बार एक स्टोर से ६ शिलिंग की चीज उचक कर ले चले ! वह पकड़े गये; अखबारों में मोटे-मोटे अक्षरों में यह खबर छपी !

कला ने बताया, यहाँ के भारतीय किस तरह आपस में भी अँगरेजी बर्ताव करते और अँगरेजी में ही बातें करते हैं ! इधर कई अँगरेज उन्हें देखकर हिन्दी बोलने की कोशिश करते हैं। एक बार कला ट्रेन से जा रही थी। एक आवाज आई—"मेम साहब, बड़ा ठंडा लग रहा है !" यह एक बूढ़ा अँगरेज था। एक लेडी प्रोफेसर जब-जब उससे मिलती है, 'नमस्कार' ही करती है। जब कला ने अपने प्रोफेसर को बताया कि उसे मुख्य भाषा के स्थान में अँगरेजी पढ़ाई गई, तब वह दोनों अँगुली काटने लगा।

वहाँ एक और बिहारी विद्यार्थी आये, जो पशु-विज्ञान पढ़ने आये हैं। बहुत बातें हुईं। मैंने कहा—आप लोग यहाँ से ज्ञान-विज्ञान सीख कर तो जाइये ही; जरा यहाँ से जीवन का नया ढंग और आदर्श भी सीख कर जाइये। हमारा जो नया देश बनने जा रहा है, उसमें आप नौजवानों का बहुत बड़ा हाथ होगा। स्वर्गीय शम्भू बाबू का पुत्र श्री जी इन्हीं के आसपास रहता है किन्तु उससे भेंट नहीं हो सकी। पंचानन जी ने कहा, शरण यहाँ की सोशलिस्ट पार्टी का बड़ा ही उत्साही सदस्य है।

आज भी बड़ी ठंढक रही। सच्चिदानन्द के घर पर तो भींगते हुए ही गये।

यहाँ का जीवन बहुत महँगा है। सारा खर्च तो ब्रिटिश इन्फोरमेशन वाले करते हैं—सिर्फ सिगरेट और इधर-उधर जाने का खर्च। तो भी पाँच दिन में पाँच पौंड खर्च हो चुके हैं।

बारह बज गये। तारीख बदल गई। अब सोना हो ! प्रायः हर दिन तारीख बदलने पर ही सोता हूँ।

३०-४-५१

कचहरी : ओवर सीज लीग

लंदन आये सात दिन हो गये। ये दिन कैसे सपने-से कट गये। मालूम होता है, अभी कल-परसों आया हूँ।

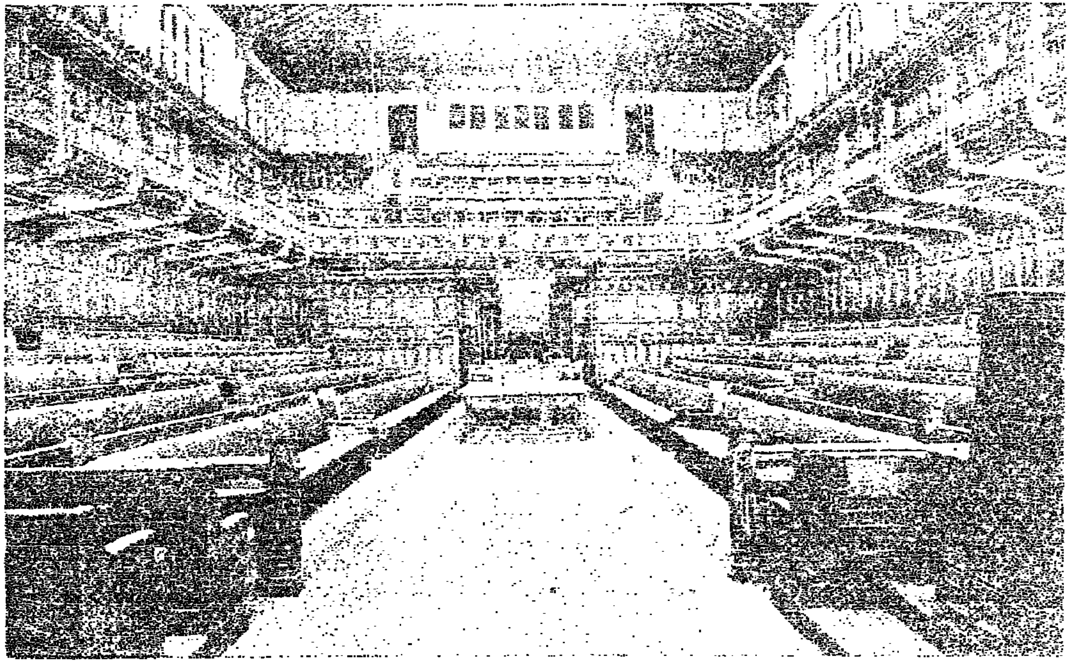
आज सबेरे लंदन कोर्ट देखने गया। कोर्ट के चारो ओर अपने यहाँ जो हलचल रहती है, वह नहीं। कहीं ताईद बैठे हैं, कहीं मुख्तार साहब खड़े हैं, कहीं गवाह या मुद्दई मुद्दालह शोर मचा रहे हैं, कहीं पान बिक रहा है, कहीं फेरी वाले घूम रहे हैं—यह दृश्य यहाँ नहीं?

मकान के भीतर जरूर कुछ लोग खड़े थे। ऊपर लिखा हुआ था, "मौन रहिये, जिसमें इन्साफ पाने में लोगों को सुविधा हो।" पहले हमें सिरिश्तेदार के पास ले जाया गया। उसने बताया कि यहाँ इन्साफ की पद्धति क्या है? भारतीय न्याय-पद्धति इसी के आधार पर बनी है, अतः कोई ज्यादा फर्क नहीं?

वकील ही मैजिस्ट्रेट बनाये जाते हैं। किन्तु कुछ विशेष व्यक्तियों को भी अवैतनिक मैजिस्ट्रेट बनाया जाता है। ऐसे मैजिस्ट्रेट अकेले नहीं बैठते, दो या तीन एक बार बैठते हैं।

जुरी-ट्रायल में एक भी जुरी भिन्न मत दे, तो फिर से ट्रायल होती है।

उसके बाद हमें कोर्ट में ले जाया गया। कोर्ट में सामने बीच में मैजिस्ट्रेट का आसन। उसके सामने पेशकार। उसके दोनों बगलों में एक तरफ वकीलों की पाँत दूसरी ओर मुद्दई के खड़े होने की जगह। मुद्दालेह मैजिस्ट्रेट के सामने खड़ा होता है या बैठता है। बैठने की मुमानियत नहीं है। मुद्दालेह के सामने उसके प्रतिनिधियों के बैठने की जगह। मुद्दालेह के



लंदन का संसद-भवन

पीछे एक बेंच प्रतिष्ठित व्यक्तियों के लिए। दर्शकों की चार-पाँच पाँतें उसके पीछे !

मैजिस्ट्रेट के आने की सूचना दी गई; सब खड़े हुए, मैजिस्ट्रेट के आगे बैठे। फिर मुद्दालेह आने-जाने लगे ?

सबसे पहले चार-पाँच औरतें लाई गईं। पेशकार ने उनका जुर्म बतलाया—तुम अमुक रात, अमुक स्थान पर, वेश्यावृत्ति के उद्देश्य से भटक रही थी, यह सही है कि नहीं। सभी औरतों ने अपराध स्वीकार किया और उन्हें पाँच शिलिंग से लेकर २० शिलिंग तक जुर्माने हुए। फिर चार-पाँच आदमी पेश किये गये—तुम अमुक रात, अमुक स्थान पर शराब पीकर अंटसंट बक रहे थे, यह बात ठीक है या नहीं। सभी ने स्वीकार किया, अफसोस जाहिर किया और इसी तरह छोटे-छोटे जुर्माने हुए। एक आदमी पर यह अभियोग था कि वह एक स्थान पर खड़ा था, औरतों को बेहदे ढंग से घूर रहा था और एक औरत को दोनों हाथों से अँकवार में ले लिया था। चार आदमियों पर यह अभियोग था कि वे रात में पिछले पहर मोटर पर जा रहे थे, उनका उद्देश्य बुरा था, पुलिस ने पीछा किया, तो ढेले फेंके। एक पत्थर का टुकड़ा भी पेश किया गया। जब पुलिस गवाही दे रही थी, एक मुद्दालेह जोर से चिल्ला उठा—"झूठा !" पुलिस ने चुप रहने का इशारा किया, मैजिस्ट्रेट ने ध्यान भी नहीं दिया।

मैजिस्ट्रेट बीच-बीच में मुद्दालेहों से स्वयं भी पूछते थे। जब वकील जिरह कर रहे थे तब भी बीच में टोकते थे। शराब खोरी वाले मामलों में पुलिस से यह भी पूछा कि पकड़ने के समय मुद्दालेह ने कोई बेजा हरकत तो नहीं की ?

क्या कोर्ट को देखकर समाज का अन्दाजा लगाया जा सकता है ? नाली को देखकर घरकी स्थिति के बारे में कहाँ तक कल्पना की जा सकती है ?

लोगों ने जिस तरह अपराध स्वीकार किया और मैजिस्ट्रेट ने जैसी हल्की सजा दी, उससे क्या यह मान लिया जा सकता है कि वर्तमान समाज

में ऐसी चीजें होती ही हैं—सजा उसे रोक नहीं सकती, तो लोगों को झूठ बोलने के लिए लाचार क्यों किया जाय ? हाँ, वैभव की इस नगरी में भी कुछ लोगों को जीवन धारण करने के लिए ऐसे कुकर्म करने पड़ते हैं, यह सिद्ध करता है कि समाज में आमूल परिवर्तन यहाँ भी आवश्यक है ।

दिन का खाना 'ओवरसीज लीग' में हुआ । यह यहाँ के टोड़ियों की बड़ी संस्था है । इसकी शाखा देश-विदेश में फैली हुई है । इसकी सदस्य संख्या ६२ हजार है । लार्ड माउन्ट बेटन इसके वर्तमान सभापति हैं । हम जिस दिन यहाँ पहुँचे, हमारे पास पत्र पहुँचा कि जब तक हम इंगलैंड में हैं, हमें इस अवधि के लिए उसकी सदस्यता निशुल्क प्रदान की गई है । लंदन में इसका शानदार मकान है—खाने-पीने, नाचने-गाने, पढ़ने-लिखने, खेलने-मनबहलाने के सभी साधन यहाँ सदस्यों के लिए सुलभ है । इसका एक हॉल है—जिसपर "भारत और पाकिस्तान हाल" लिखा हुआ है । इसके बनाने में हमारे राजाओं और नवाबों ने काफी पैसे दिये ।

इसी हाल में हमें दिन का खाना खिलाया गया । खाने पर मेरी बगल में लेडी एलफिंस्टन बैठी थीं, जो इसकी कार्यसमिति की सदस्या हैं । पटना की चर्चा बहुत करती थीं । लेडी एलफिंस्टन हाल की, चाइल्ड वेलफेयर सेन्टर की । पटना सीटी के जालान साहब की भी चर्चा की और लेडी इमाम की भी । अकाल के बारे में भी पूछ बैठीं । बिहार से उनकी इतनी दिलचस्पी अब भी देखकर आश्चर्य हुआ ।

शाम को सी०ओ०आई० का फिल्म-विभाग देखने गया । कई चित्र दिखलाये गये । "दिस ब्रिटेन"—नाम का चित्र बड़ा प्रभावशाली था । उसमें बताया गया था कि अन्न के लिए, घी-दूध के लिए, लकड़ी के लिए, कोयले के लिए और बाहर भेजे जानेवाले सामानों की तैयारी के लिए ब्रिटेन क्या-क्या कर रहा है । दूध और अन्न की पैदावार इतनी बढ़ गई है कि आधी खुराक अब अपने देश से ही मिल जाती है ।

समुद्र की घास से कपड़ा बनाना और समुद्र के पानी से मैगनिस निकालना—यह देखकर बार-बार अपने देश की त्रुटियों पर ध्यान आता था। "आम चुनाव"—सम्बन्धी चित्र भी बहुत मजेदार था। भारत में अगले साल आम चुनाव होगा। क्या भारत-सरकार इस तरह की कोई शिक्षात्मक फिल्म नहीं बनवा सकती।

खाने-पीने के बाद "न्यूज थियेटर" देखने गया। यह थियेटर सुबह ११ बजे से रात के ग्यारह बजे तक चलता ही रहता है। नाम थियेटर है, किन्तु है यह डौकुमेंटरी फिल्म। लोग किसी भी समय जाकर बैठ जाते हैं और जहाँ से देखना शुरू किया, फिर वहीं पहुँचने पर उठ कर चले आते हैं! क्या कोई दिन भर बैठा रह सकता है? रोक तो नहीं है। किन्तु यहाँ किसको इतनी फुर्सत है कि यों बैठा रहे!

वहाँ से हाइड पार्क आये। कोने पर दो वक्ता धड़ाधड़ व्याख्यान दिये जा रहे! उनमें एक हब्शी था, जो गोरों की नीति पर कड़ी आलोचना कर रहा था और गोरे सुन रहे थे! दूसरे वक्ता के नीचे लिखा हुआ था—Soclist Party of Britain. एक नौजवान व्याख्यान दे रहा कि लेबर पार्टी या कम्यूनिस्ट पार्टी से कुछ होने-जाने का नहीं। ये लोग या तो पैबन्द लगाते हैं या अस्तर को उलट कर सीते हैं। पूँजीवाद पर सीधा प्रहार करो, उसका खात्मा करो, तभी कल्याण है!

इन व्याख्यानों में श्रोता काफी दिलचस्पी दिखलाते हैं। बीच-बीच में प्रश्न करते हैं, छेड़खानियाँ करते हैं, हँसी उड़ाते हैं, तालियाँ भी पीटते हैं। इन व्यख्यानों के द्वारा वक्ता मँज जाता है। यों श्रोता-वक्ता दोनों का फायदा!

हाइड पार्क—और, फिर विलासिता की बात। अभी एक मित्र कह रहे थे, कल रात को वह देर से लौटे। रास्ता भूल गये थे। जब पार्क के निकट आये, औरतों ने उन्हें घेरना शुरू किया! कई स्थान पर उन्होंने वीभत्स दृश्य भी देखे। पुलिस यहाँ चौकस रहती है। जो

पकड़ गये, वे कल लंदन-कोर्ट में हाजिर किये जायँगे; जो निबट गये, वे निबट गये !

हाइड पार्क ऐसी जगह है जहाँ दिल का, दिमाग का, शरीर का मवाद खुले आम निकाला जा सकता है। यह लंदन का सेफ्टी वल्व है।

पार्क की बात आई, तो पेड़ों की बात, पंछियों की बात। इस देश में कुछ पेड़ ऐसे हैं। जिनमें पत्तों के साथ ही फूलों के गुच्छे भी निकल आते हैं। आज कई जगह रंग-बिरंगे फूलों से लदे ऐसे वृक्षों को देख कर आँखें तृप्त हो गईं ! कई जगह कबूतरों के झुंड को भी उड़ते, बैठते और किलोल करते देख बड़ी प्रसन्नता हुई।

लंदन : पहली मई, ५१

ब्रिटिश उद्योग मेला : इन्डिया हाउस

भोर ही महेश जी आ गये। ऊनी अचकन और चुस्त पाजामे में उन्हें देखकर क्यों आश्चर्य नहीं हो, जिन्हें हमेशा घुटने से ऊपर की धोती और देह पर सिर्फ एक चादर में देखता आया था !

बहुत-सी बातें करते रहे। उनमें मजाक भी इतना है, यह यहीं देखा। बोले—यहाँ तो गर्दन में हाथ लगा कर लोग रास्ता बताते हैं। यानी किसी से रास्ता पूछिये, तो आप को उस स्थान का सही रास्ता बताए बिना नहीं छोड़ेगा, चाहे उसे अपना रास्ता छोड़ कर आप के साथ किसी मोड़ तक जाना पड़े, या आप के घर तक।

लंदन को लोगों ने हौआ बना रखा है, खर्चे के हिसाब से भी और रहन-सहन के हिसाब से भी। दो-ढाई सौ रुपये में यहाँ मजे से रह कर पढ़ा-लिखा जा सकता है और यदि बीबी साथ में हो, तो खर्चा और भी कम—इससे भी कम हो जाता है। इसका कारण यह है कि कोई कच्ची चीज खरीद घर में पकाओ, तो उसकी कीमत बाजार में बिकने वाली चीज से चौगुनी कम पड़ती है। उन्होंने कई चीजों के उदाहरण देकर बताये।

यहाँ से ब्रिटिश इन्डस्ट्रीज फेयर देखने चले। B.I.F. की चारो ओर धूम है। १९१४ की जब लड़ाई शुरू हुई, इंगलैंड में चीजों का अकाल-सा पड़ गया। उस समय यह सोचा गया कि इँगलैंड में बने मालों का एक मेला किया जाय, जिसमें लोगों को पता चले कि उनके देश में भी कौन-सी चीजें वहाँ प्राप्त होती हैं। तब से यह मेला लग रहा है और दिन-दिन इसका विकास होता जाता है। अब इसमें सिर्फ इंगलैंड की ही नहीं, कामनवेल्थ भर की चीजें रखी जाती हैं। और संसार भर से खरीदार पहुँ-

रचते हैं। इस साल इसमें १०० उद्योग-धंधों की प्रदर्शनी हो रही है जिसमें ३००० औद्योगिक व्यापारी अपने सामान ला रहे हैं। ३० अप्रैल से ११ मई तक यह मेला रहेगा। मेले के तीन भाग हैं (१) अर्ल्स कोर्ट में (२) ओलिम्पिया में और (३) बरमिंघम में। परसाल भिन्न-भिन्न देशों के १९००० आदमियों ने यहाँ सौदे किये थे।

हम लोग आज आर्ल्स कोर्ट का मेला देखने गये। मेला नहीं कह कर इसे प्रदर्शनी कहना और भी अच्छा होगा। उफ, कैसा विस्तार, कैसी सजावट! अँगरेजों के वैभव और कारीगरी का कितना सही प्रदर्शन! जहाँ देखिये, आँखें गड़ जाती थीं। दुकानों की सजावट में खास बात यह थी कि एक भी ऐसी दुकान नहीं, जिसकी सजावट में फूलों का व्यवहार नहीं किया गया हो। रंग-बिरंगे फूल—नीचे सिर्फ एक पतली डंठल और ऊपर फूलों के गेंद-ऐसे गुच्छे—लाल, नीले, उजले, हरे! सफाई का तो कहना ही क्या? और, अनुशासन तो अँगरेजों की नस-नस में है। लोगों की कमी नहीं, किन्तु क्या कहीं शोरगुल या धक्कमधुक्की है।

जिस दुकान पर जाइये, आपसे मधुर-मधुर बातें करेंगे और बड़े करीने से अपनी चीजें दिखायेंगे। एक कपड़े की दुकान पर फैशन-परेड हो रहा था। कुछ खूबसूरत लड़कियाँ तरह-तरह की पोशाक पहन कर आतीं, आगे-पीछे, अगल-बगल घूम कर दिखलातीं और चली जातीं। उनकी नंगी जाँघें, अधनंगी छाती—चुन-चुन कर रखी गई थीं, देखनेवालों की मौत! बड़ी भीड़ लगी थी।

आज राजा-रानी भी इसे देखने गये थे। किन्तु, हम उन्हें देख नहीं सके। हाँ राज-माता मेरी को देखा। बूढ़ी हो गई हैं, रिक्शे की तरह की गाड़ी पर घूम रही थीं। कुछ दुकानों पर भी चली जाती थीं। साथ में पोते-पोतियाँ थीं। जहाँ-जहाँ जातीं, लोगों की कतार लग जाती। किन्तु कोई ज्यादा भम्भड़ नहीं।

कामनवेल्थ के हर देश की दुकानें थीं—सिर्फ भारत की नहीं।

पाकिस्तान की दुकान सबसे आगे थी। जिन्ना टोपी पहने एक सज्जन लोगों को चीजें दिखला रहे थे। इच्छा हुई, जाऊँ और आदाब-अर्ज कर आऊँ !

वहाँ से हम इन्डियन स्टुडेन्ट्स ब्यूरो में गये जहाँ इन्डियन जर्नलिस्ट एसोसियेशन ने हमें भोज दिया था। भारतीय पत्रों से सम्बन्ध रखनेवाले सभी प्रसिद्ध पत्रकार आये थे। भोजन भारतीय था, पड़ोसने का ढंग अँगरेजी। दही-बड़े से शुरू हुआ; फिर पूड़ियाँ और पापड़; तब भात और गोश्त या दाल ! एसोसियेशन की ओर से श्रीमती इलासेन ने हमारा स्वागत किया। हमारी तरफ से वेंकटाचारी और ओझा ने जवाब दिये। लम्बे भाषण तो हमारी खूबी हैं ही !

शाम को इन्डिया-हाउस में हमारी चाय थी। मैंने समझा; इन्डिया-हाउस जा रहा हूँ, जरा पाजामा और शेरवानी, और गाँधी टोपी पहन लूँ। किन्तु, वहाँ जाकर देखा, 'हाउस' तो बहुत बड़ा और शानदार है, पर 'इन्डिया' का कहीं पता नहीं। काले साहब, अँगरेजी हाउ डु यू डू—और, हमारा दुर्भाग्य, हाई कमिश्नर साहब की तबियत ही खराब हो गई !

मैं किसी दूसरे देश की इम्बैसी में नहीं गया हूँ, किन्तु, इन्डिया-हाउस को देखकर बड़ा दुख हुआ। गाँधीजी की एक बड़ी तस्वीर यहाँ जरूर है; किन्तु, गाँधी के देश के लोग यहाँ रहते हैं, यह कहीं पता नहीं चलता ! नेहरू साहब का ढरन है; भारतीय सरकार पर मद्रास का बोलबाला है। कौन पूछता है, कौन देखता है। इन्डिया-हाउस भारत का कलंक है। यह डंका पीट-पीटकर कहना है, अभी भारत पर अँगरेजों की छाप बनी हुई है। गोरे साहब चले गये, काले साहबों ने हमें इस तरह ग्रस लिया है कि न-जाने कब इनसे छुटकारा मिले।

मनमें कुढ़न थी, ग्लानि थी। यदि रात में अन्तर्राष्ट्रीय युवक संघ की ओर से आयोजित मई दिवस के उत्सव में शामिल नहीं होता, तो शायद रात में ठीक से नींद भी नहीं आती।

एक हाल में कई देशों के युवक एकत्र हुए थे। अधिकांश चेहरे गोरे थे; कुछ हब्शी दीखे और कुछ भारतीय। इंगलैंड के समाजवादी युवकों ने यह आयोजन किया था। लंदन में सोशलिस्ट पार्टी का जो एक छोटा-सा ग्रूप है, उसके अधिकांश लोग आये थे। सबसे पहले पारसाल एमस्टरडाम में हुई युवक कांग्रेस की फिल्म दिखाई गई। इसमें भारतीय युवक भी शामिल हुए थे और उनके हाथों में अपना हल और चक्रावाला झंडा देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई। फिर सभा हुई। मंच के टेबुल पर हल-चक्रा वाला हमारा झंडा ही बिछाया गया था। वक्ताओं में यहाँ के सोशलिस्ट ग्रूप के श्री आनन्द प्रकाश जी बोले और पंचानन मिश्र ने हिन्दी में झंडे का गीत गाया। सभापति ने अपने भाषण में इस बात पर जोर दिया कि डिमोक्रैटिक सोशलिज्म का भाग्य दो देशों के प्रयोग पर निर्भर करता है, इंगलैंड में जो हम कर रहे हैं और भारत में जो हम करने जा रहे हैं। अपनी तारीफ किसे अच्छी नहीं लगती; हमें बड़ा आनन्द आया। सभा के अन्त में एक बहुत अच्छा प्रहसन हुआ और हम लोग उसी की हँसी में लौटे। सभापति आकर मुझसे मिले और थोड़ी बातें कीं।

यहाँ कुछ सोशलिस्ट विद्यार्थियों से परिचय हुआ। आनन्दप्रकाश, इकबाल गामा, सिंधिल-दम्पती, भटनागर, पटने के 'श्री' और कामेश्वर— यह देखकर आश्चर्य हुआ कि भारत से कोई प्रोत्साहन नहीं मिलने पर भी ये लोग यहाँ पार्टी का झंडा बुलंद किये हुए हैं!

लंदन : मई २-५१

डाउनिंग स्ट्रीट : पार्लियामेंट : डेली हेरल्ड

सवेरे उठता हूँ तो देखता हूँ, चारों ओर सूरज की किरणें सोना बरसा रही हैं और जब बाहर निकला, पाया कि जिन वृक्षों को एक सप्ताह पहले काला-काला देखा था वे सबके सब हरे हो चले हैं। कोपलें मुँह खोल रही हैं, नये पत्ते झाँक रहे हैं।

आज सबसे पहले १० डाउनिंग स्ट्रीट गया, जिसकी इतनी चर्चा बचपन से ही सुनता आया था। ब्रिटेन के प्राइम मिनिस्टर यहीं रहते हैं। प्राइम मिनिस्टर और चांसलर एक्सचेकर। और मंत्री लंदन में अपना मकान लेकर रहते हैं।

मंत्री मि० एटली बहुत दिनों से बीमार थे, अतः उनसे हमारी भेंट नहीं हो सकी। हम सिर्फ उनके प्राइवेट सेक्रेटरी से मिल सके। इनके प्राइवेट सेक्रेटरियों की संख्या पाँच है, जो भिन्न-भिन्न विभागों की देखभाल करते हैं।

काफी देर तक बातें होती रहीं। एटली साहब प्रायः प्रेस-कान्फ्रेंस नहीं करते। शब्दों के कंजूस हैं। किन्तु काम में बड़े मेहनती। लड़ाई के जमाने में उपप्रधान मंत्री रहे, अब प्रधान मंत्री हैं। १३ वर्षों से काफी मेहनत करते-करते स्वास्थ्य खराब हो गया है। किन्तु तो भी लगे हैं। बेवन के मामले में आखिरी फैसला आपने ही किया था। एक बड़ा कदम था यह; पर बिना झिझक के पैर आगे बढ़ाया और अब उसपर दृढ़ हैं। हर सातवें दिन केबिनेट की बैठक होती है, हर पन्द्रहवें दिन पार्टी की। पार्टी की मीटिंग बड़ी महत्वपूर्ण है—क्योंकि यहीं तरह-तरह के लोगों को, खास कर 'बैक बेंचरों' को समझाना-बुझाना पड़ता है।

यह भी पता चला कि पार्लियामेण्ट पर सरकार का कोई अधिकार नहीं। स्पीकर ही सर्वेसर्वा है। स्पीकर इस बात पर बहुत चौकस रहते हैं कि सरकार कोई हस्तक्षेप नहीं करे।

हम जरा उन कमरों को देखना चाहते थे जहाँ प्राइम मिनिस्टर रहते हैं, किन्तु कहा गया कि वहाँ इस समय कोई बैठक हो रही है। यहाँ यह भी बताया गया कि यह भवन सरकार का है, प्राइम मिनिस्टर को भी नियम के खिलाफ यहाँ किसी को ठहराने का अधिकार नहीं है।

जब बाहर निकले, सड़कों पर ब्रिटेन के महोत्सव--Festinal of Britain की बहार देखी। चारों ओर सजावट हो रही है। ह्वाइट हौल के कामनवेल्थ के आफिस पर और झंडों के साथ एक बड़ा- सा तिरंगा लहराता हुआ देख कर बड़ी प्रसन्नता हुई। अहा! इस झंडे को लेकर जवानी भर लड़ता रहा; यह सौभाग्य है कि इसे आज लंदन के ह्वाइट हौल पर लहराता देख रहा हूँ। साधारण थाने पर इसे लहराने के लिए हमें कितनी जानें कुर्बान करनी पड़ीं।

ह्वाइट हौल के सामने ही शहीदों का एक चबूतरा है। जब-जब इस ओर से गुजरता हूँ, सदा ही इस पर कुछ ताजे फूल और मालायें चढ़ाया देखता हूँ। जब-जब इस ओर से जाता हूँ, पटना सेक्रेटेरियट के सामने का शहीद-चबूतरा याद आ जाता है! कभी वहाँ फूल पाता हूँ? हमारे मिनिस्टरों की कारें वहाँ से सरसराती हुई गुजरती हैं—कोई उनकी ओर नजर उठा कर भी देखता है!

यहाँ शहीदों के दो स्मारक और देखे। दोनों पर फूल पाये।

आज हमें पार्लियामेण्ट देखना था। पार्लियामेण्ट के आगे के हिस्से में "बिग बेन" नामक एक टावर है जिस पर एक घड़ी लगी है। इस घड़ी के बारे में कितनी ही किम्वदंतियाँ हैं।

पार्लियामेण्ट-भवन देखाने का भार लेबर-पार्टी के मि० वायट— Woodrow Lyle Wyatt, M. P. पर था। वायट अभी ३३

वर्ष के हैं। नौजवान, हँसमुख, बुद्धिमान। आज ही उन्हें पार्लियामेंटरी अन्डर सेक्रेटरी और फाइनेंसियल सेक्रेटरी बनाये जाने की घोषणा हुई है।

बड़े प्रेम से मिले जब उन्हें मालूम हुआ कि मैं सोशलिस्ट हूँ, तो पूछ बैठे, जयप्रकाश नारायण को जानते हैं। मैंने सारी बातें कहीं। उन्होंने कहा, एक बार उन्हें यहाँ क्यों नहीं भेजते।

बिग बेन की पृष्ठभूमि में यहीं हमारा फोटो लिया गया। फोटो की बात चलते ही हमारे साथी कैसे व्याकुल हो जाते हैं। जो जिन्दगी भर दूसरे के फोटो छापते रहे, उन्हें अपने फोटो पर इतनी ममता !

सबसे पहले पार्लियामेण्ट का वेस्टमिन्स्टर-भवन दिखलाया गया, जो पार्लियामेंट का सबसे पुराना भवन है। इसी स्थान पर सभी राजाओं का अभिषेक किया जाता है और इसी स्थान पर चार्ल्स को फांसी की सजा पार्लियामेंट ने दी थी। फांसी की सजा वाला कागज अब भी सुरक्षित रखा गया है। उस पर उन सभी सदस्यों के हस्ताक्षर हैं जिन्होंने सजा के पक्ष में मत दिये थे। जहाँ चार्ल्स खड़ा किया गया था, वहाँ एक पत्थर का टुकड़ा जड़ा हुआ है। हमें यह भी बताया गया कि राजकुल का कोई पुरुष हाउस आफ कामन्स में नहीं आ सकता। एक बार विक्टोरिया के जमाने में उनके पोते चले आये थे, तुरत उन्हें निकाल बाहर किया गया।

वायट साहब ने घूम-घूम कर हमें पार्लियामेंट के भिन्न-भिन्न भवन दिखलाये। बड़ी विशाल और विस्तृत इमारत है। एक हजार कमरे हैं इसमें और सौ सीढ़ियाँ। एक भाग में हाउस आफ लार्ड है। एक विचित्र बात। हाउस आफ कामन्स और हाउस आफ लार्ड के प्रतीक दो रंग हैं। हरा रंग हाउस आफ कामन्स का है, लाल रंग हाउस आफ लार्ड्स का। वायट साहब ने हँस कर कहा—रूस में जो क्रान्ति का रंग है, हमारे यहाँ वह प्रतिक्रियावाद का।

हाउस आफ लार्ड्स की शान-शौकत ने उतना प्रभावित नहीं किया जितना हाउस आफ कामन्स की सादगी ने। पिछले युद्ध में पार्लियामेंट

भवन पर बम बरसे थे; इसलिए हाउस आफ कामन्स नया बनाया गया है। किन्तु, पुरानी सारी चीजें रखी गई हैं। छोटा-सा यह भवन है। चौकोर यह बना है। लम्बे गद्देदार बेंचें समझिये जिनपर सदस्य बैठते हैं। मुश्किल से तीन सौ आदमी बैठ सकते हैं। सदस्य संख्या छः सौ से ऊपर है। सदस्य खड़े रह सकते हैं या जरूरत होने पर ऊपर दर्शकों की गैलरी में बैठ सकते हैं और वहाँ से भी बोल सकते हैं। बीच में स्पीकर की कुर्सी है और उनके सामने एक टेबल। टेबल भी कोई बड़ा नहीं। चारों ओर सदस्यों की सीटें हैं; बीच में थोड़ी-सी जगह खाली है। इस खाली जगह के चारों ओर एक लकीर खिंची है, जिसे लक्ष्मण रेखा समझिये। इस रेखा के अन्दर ही रह कर सदस्यों को बोलना पड़ता है। वायट साहब ने बताया कि हमारी परम्परा के अनुसार पार्लियामेंट बहस या व्याख्यान की जगह नहीं, सलाह-मशवरे की जगह है। अतः यह छोटा-सा कमरा, जिसमें एक दूसरे की बात आसानी से सुन लें और नजदीक होने से हार्ट टु हार्ट बातें कर लें। बातें करते-करते कभी बातें बिगड़ जा सकती हैं और ऐसे अवसरों पर तलवारें भी निकल जाती थीं, अतः यह लक्ष्मण रेखा। बीच में इतनी ही जगह खाली है कि यदि दोनों तरफ से तलवारें निकल आवें तो हाथ बढ़ाने पर भी एक दूसरे को नहीं छू सकें।

हाउस आफ कामन्स की बैठक देखी। एटली नहीं आये थे। चर्चिल साहब को देखा, इडेन साहब को देखा। इडेन साहब टांगें फैलाकर उन्हें स्पीकर की कुर्सी से अड़ाये हुए थे। जिस समय रक्षा-मंत्री शिनवेल कोरिया युद्ध पर बयान दे रहे थे, बड़ी चखचख हो गई। टोरियों का कहना था कि जब चीन हमारे जवानों को कत्ल कर रहा है, तो फिर उसे युद्धोपयोगी कच्चा माल क्यों दिया जाता है? शिनवेल ने कहा कि व्यापारी क्या भेजते हैं, हम उसका लेखा नहीं रखते; हाँ, सरकारी तौर पर कुछ नहीं दिया गया है। इसपर चर्चिल ने कहा—तो आप कुछ खबर नहीं रखते! शिनवेल ने मुँह लगे कहा—जी, आपसे अधिक

खबर रखता हूँ। इस पर टोरियों की ओर शोर हुआ—यह बात वापस करो! शिनवेल टस से मस नहीं हुए। तब जोरों से शोर मचा—इस्तीफा दो, इस्तीफा दो। सारा भवन कुछ देरतक गूँज रहा था। दोनों तरफ से शोर मच रहा था।

हमारा दिन का खाना पार्लियामेंट भवन में ही हुआ। वायट साहब तो थे ही, एक सदस्य लिबरल और एक सदस्य टोरी—ये भी बुलाये गये थे। लिबरल सदस्य बड़े सज्जन थे, बूढ़े थे, कम बोलते थे। किन्तु टोरी-सदस्य काफी बोल रहे थे। हममें से एक ने पूछा—क्या उम्मीद है, आपका राज फिर होगा? क्यों नहीं—उन्होंने मुँह लगे कहा। वायट साहब ने उनकी इस आशा को आकाश-कुसुम बताया। लेकिन एक बात देखी, दोनों विरोधी अपनी बातों पर दृढ़ रहते हुए भी यों बातें करते थे कि एक ही घर के हों! यही अँगरेजों की खूबी है। वायट ने एमरी की बड़ी तारीफ की और कहा कि उनके बारे में बड़ी गलतफहमी है। चर्चिल के स्वभाव के बारे में भी दोनो एकमत थे। लड़ने और मिलने दोनो में वह महान है। टोरी-सदस्य ने उन्हें एक बूढ़ा बच्चा बतलाया, जो एक क्षण पहले लड़ ले और दूसरे क्षण मिलकर खेलने लगे। टोरी-सदस्य ने कहा, एक बार हम लोगों ने कहा, नेहरू बहुत अँगरेज-द्रोही है। झट चर्चिल ने कहा—जिसे हमने पन्द्रह साल जेल में रखा, वह द्रोही नहीं होगा तो क्या होगा? टोरी-सदस्य ने भी यह स्वीकार किया कि यदि टोरियों का राज हुआ, तो भी भारत-सम्बन्धी वर्तमान नीति में अन्तर नहीं होगा। जो हो चुका, हो चुका—हम अब भारत को बराबरी का मित्र ही मानेंगे!

वहाँ से ४।। बजे बी० बी० सी० गये। लिंदन वहाँ के ईस्टर्न विभाग के इन्चार्ज हैं। उन्होंने मुझसे टूटी-फूटी हिन्दी में बातें कीं। हिन्दी समझ तो लेते ही हैं।

शाम को लेडी माउन्टबेटन के साथ चाय थी, उसमें नहीं जा सका।

क्योंकि डेली हेरल्ड का आफिस देखना था और यदि यह नहीं देखता, तो लंदन-यात्रा तो अधूरी ही रहती।

'डेली हेरल्ड' मजदूरसंघ ट्रेड यूनियन कांग्रेस का अखबार है। ४९% शेयर इसके हैं और नीति भी इसीकी। किन्तु ५१% शेयर औदम प्रेस के हैं और सारा प्रबंध उसके हाथ में। पत्र नफे में चल रहा है।

लगभग ढाई घंटे तक वहाँ रहा। एक-एक चीज देखी। कहाँ-यहाँ के पत्र; कहाँ अपने देश के पत्र।

समाचार के तीन जरिये हैं। समाचार एजेंसियाँ, सम्वाददाता और रिपोर्टर। लगभग दर्जन समाचार एजेंसियों से टेलिप्रिंटर पर समाचार आते हैं; किन्तु सिर्फ १०% समाचार ही उनसे लेते हैं। ९०% अपने सम्वाददाताओं से या रिपोर्टरों से। समाचार-एजेंसियों के समाचारों को भी फिर से लिखते हैं, रिपोर्टरों और सम्वाददाताओं के समाचारों को भी फिर से सँवारते हैं। यह काम सब-इडिटर करते हैं। फिर अलग-अलग विभागों के सम्पादक उन्हें देखते हैं। मुख्य सम्पादक का काम मुख्यतः संगठन और सजावट है—क्योंकि सम्पादकीय तो बहुत कम लिखना पड़ता है, मुश्किल से आधा कालम।

समाचारों के संकलन में बड़ी सावधानी रखनी पड़ती है। किसी विषय पर या किसी व्यक्ति पर कोई समाचार आने पर रेफरेंस फाइल से मिलाते हैं। रेफरेंस फाइल विचित्र है। हर विषय पर कटिंग रखे जाते हैं, हर व्यक्ति पर कटिंग रखे जाते हैं। मैंने भारत सम्बन्धी रेफरेंस देखा, और उसमें सोशलिस्ट पार्टी वाली फाइल को देखा; यों ही जयप्रकाश वाली फाइल देखा। १९३८ से इन दोनों के बारे में कटिंग रखे जाते हैं। चित्रों के बारे में भी ऐसा ही प्रबंध है। लोहिया की तस्वीर माँगी, तो हाजिर। नेहरू की तस्वीर १९२१ से ही है। इनका चित्र विभाग कैसा है इसका अन्दाज लगाइये कि मेरी तस्वीर ली और जब तक विभाग देख रहा था, लगभग १५ मिनट में, मेरी तस्वीर की कापी भेंट की।

हेरल्ड का एक संस्करण मैनेचेस्टर से निकलता है। वहाँ से मैटर ही नहीं चित्रों का भी किस तरह आदान-प्रदान होता है, देख कर आश्चर्य हुआ। चित्र को यहाँ की मशीन में लगायेंगे और वहाँ उसका ब्लाक बनकर तैयार हो जायगा। बीस मिनट में यह काम हो जाता है।

सम्पादकीय विभाग में प्रतिदिन दो बार सम्पादकों की कान्फ्रेंस होती है। कार्यालय खुलने पर कान्फ्रेंस होती है जिसमें देखा जाता है कि क्या-क्या चीजें छूट गईं, क्यों छूट गईं ? फिर शाम को कान्फ्रेंस होती है जिसमें अन्तिम बार तय कर लिया जाता है कि क्या-क्या चीजें देनी हैं और कहाँ देनी हैं। बाजाप्ता लिख लिया जाता है, जिसे देखकर रात का सम्पादक अखबार बनाता है।

ऊपर दिखला कर सम्पादक ने हमें प्रोडक्सन मैनेजर को सुपुर्द किया और हम नीचे आये। यहाँ आकर तो और चकित हुआ। और पृष्ठ तो तैयार हो चुके थे, छठे और पहले पृष्ठ का संशोधन हो रहा था। सम्पादक, प्रूफ रीडर और कम्पोजीटर (टेलिप्रिंटर का) तीनों वहाँ खड़े थे कि तुरत-तुरत काम हो जाय। सम्पादक द्वारा पृष्ठ पास कर दिये जाने पर प्रोडक्सन मैनेजर ने स्वयं देखा कि अक्षर और चित्र साफ आ रहे हैं या नहीं। फिर पृष्ठ को कास्ट करने के लिये दे दिया गया।

डेली हेरल्ड साढ़े बाईस लाख की संख्या में छपता है। १०॥ बजे मैटर प्रेस पर चला जाता है। हर पृष्ठ के ३८ कास्ट किये जाते हैं; ३६ मशीनें हैं और दो वक्त जरूरी के लिये। इन मशीनों पर हर घन्टे ५ लाख ४० हजार के हिसाब से प्रतियाँ छाप कर निकलती हैं, यानी हर मशीन एक घंटे में १५ हजार छापती है। प्रतिदिन १७० रील कागज खर्च होता है। नीचे कागज लगा था, ऊपर मशीन चल रही थी। कागज का नीचे से ऊपर जाना और फिर ऊपर से छपछपा कर निकलना जादू-सा लगता था। इस तेजी से काम हो रहा था कि उजला कागज पानी के झरने-सा झिर-झिर करता हुआ मालूम होता था।

डेली हेरल्ड में कुल मिलाकर ७५० कर्मचारी काम करते हैं। रात-भर में पाँच संस्करण निकलता हैं। अन्तिम संस्करण ४॥ बजे निकलता हाथ में उसका ताजा अंक लेकर निकल रहा था, तो दरवाजे पर उसकी कितनी ही मोटरें खड़ी थीं जिनमें यह पहला संस्करण लादा जा रहा था। चार संस्करण बाहर जाते हैं, लंदन का संस्करण ४॥ बजे होता है!

११ बजे रात में जब लेट रहा था, बार-बार सोचता था, हिन्दी-पत्रों को ऐसा सौभाग्य कब प्राप्त होगा। जो ३३ करोड़ आदमियों की राष्ट्रभाषा हो चुकी है, उसका भविष्य अति महान तो है ही; किन्तु हिन्दी के पत्र-सञ्चालकों और पत्रकारों को अभी कितनी मेहनत करनी है। 'हेरल्ड' का इतिहास बहुत कुछ 'जनता' से मिलता है—क्या जनता को ऐसा सौभाग्य प्राप्त हो सकेगा?

लंदन; मई ३-५१

राजा-रानी : मैन ऐंड सुपरमैन

जिसकी इतनी चर्चा थी, इतनी धूम थी, उस "ब्रिटेन का महोत्सव"—Festival of Britain—का आज उद्घाटन समारोह सम्पन्न हुआ। जब से यहाँ आया, जहाँ-तहाँ मकानों की सफाई और सजावट में लगे हुए लोगों को देख रहा था। खिड़कियों पर फूलों के पौदे रखे जा रहे थे, घरों की पुताई-रँगाई हो रही थी, ट्रेडमार्कों और साइन बोर्डों को चमकाया जा रहा था, झंडे-पताके लटकाये जा रहे थे। राजभवन से लेकर गलियों तक में उत्सव के लिए कुछ-न-कुछ किया जा रहा था।

आज यहाँ के राजा बकिंघम पैलेस से अपनी खास सवारी पर निकल कर सेंट पाल कैथेडरल में पहुँचने वाले थे। सोचा था, कहीं रास्ते में उनकी सवारी देखूँ और फिर कैथेडरल में यह उद्घाटन समारोह देखूँ। लोगों ने राय दी थी, कहीं से टिकट हासिल कर लूँ। किन्तु मैंने सोचा, तमाशा तो धक्के में घुस कर ही देखने पर मजा आता है।

आनन्द प्रकाश जी १० बजे आने वाले थे; साढ़े दस तक नहीं आये, तो हम चल दिये। रास्ते में उनसे भेंट हुई। बेचारे परीशान थे। रास्ते में इतनी भीड़ कि सवारी जहाँ रुकी, रुकी। हम लोग एक टैक्सी करके गली-कूचे से गुजरते कैथेडरल की ओर चले।

गली-कूचे से पटना की गन्दी, सँकरी, बदबूदार गली न समझिये—लंदन की गली, जो अपने कितने राजपथों से आँखें भिड़ाये।

एक जगह लोगों की भीड़ खड़ी थी। हमने मोटर वहीं छोड़ दी। अपना देश तो था नहीं कि धक्कम-धुक्की करके किसी तरह आगे बढ़ जाते। जहाँ तक खाली जगह मिलती गई, बढ़ते गये, फिर रुक गये!

लोगों के कंधों के ऊपर से देखना था। अपनी ५ फीट छ इंच की ऊँचाई पर अफसोस हुआ। केवल सिर-सिर देख सकता था।

एक बार तुमुल स्वर। फिर घोड़ों की टाप। फिर चमकती हुई सुनहली पगड़ियाँ। तालियाँ पीटी जा रही हैं। सवारी निकल गई। बगल में खड़ी युवती एक बार जोरों से उछली और तालियाँ पीट कर कहने लगी—राजा को देख लिया!

राजा को देख लिया; यह हर अँगरेज के लिए बड़े उत्साह की बात है। राज घराने से अँगरेजों को बड़ा प्रेम है—मोह कहिये। आज सोशलिस्ट राज में भी राजा की वही कदर है; यदि कभी कम्यूनिस्ट राज इँगलैंड में हुआ, तो भी यही बात रहेगी।

अँगरेज परम्परा का पूजक है। परम्परा को कभी नहीं तोड़ेगा। मजदूर-संघों या पार्टियों के चुनाव में भी इस बात का ध्यान रखा जाता है। एक कम्यूनिस्ट भाई कह रहे थे, कई बड़े मजदूर-संघों में हमारा बहुमत हो चला है, लेकिन हमारा काम नया है, हमारे लोग नये हैं, अतः वे पदाधिकारी नहीं चुने जा सकते। उन्होंने यह भी बताया कि जिस तरह हैरी पौलित ने पार्टी छोड़ दी थी, किसी दूसरे देश में उसे फिर कम्यूनिस्ट पार्टी का मंत्री नहीं बनाया जा सकता था; किन्तु यह इंगलैंड है—परम्परा की, बुजुर्गी की यहाँ बड़ी इज्जत है।

विधान ने राजा के सभी अधिकार छीन लिये; लोक-लोचनों में वह उतना ही प्यारा हो चला है।

अब जरा कैथेडरल चला जाय। कैसे ?—बड़ी भीड़ जो है! मैंने कहा—तमाशा का मजा तो भीड़ में ही है। अब मैं नेता था। भीड़ में बढ़ा जा रहा था, बहा जा रहा था।

भीड़ में चलने में मुझे बड़ा मजा आता है। भीड़ में चला नहीं जाता, आदमी चलाया जाता है। अपने को कहीं ऐसी जगह डाल दीजिये जहाँ जन प्रवाह जोरों का है। फिर देखियेगा, आप कितनी तेज रफ्तार से बढ़ रहे हैं। हाँ, हाँ, भीड़ में चला नहीं, आदमी चलाया जाता है। बढ़ा जाता है, बहा जाता है।

कैथडेरल के सामने अपार जनता उमड़ रही थी। यहाँ पाँच-सात

मंजिल से कम के मकान तो होते ही नहीं। हर मंजिल पर लोग हैं। सड़क पर तो पूछिये नहीं। किन्तु इतनी भीड़; हल्ला नहीं। धक्कमधुक्का जरूर है। जहाँ समुद्र हो, वहाँ तरंगें होंगी ही। कभी एक तरंग आपको कई गज आगे डाल गई; कभी दूसरी तरंग फिर पीछे खींच लाई।

इस भीड़ को पुलिस किस तरह शान्त कर रही है। इनके हाथ में डंडे नहीं हैं; इनके चेहरे पर रोब नहीं है। हँसते हैं, हटाते हैं। हाँ, हटाकर ही छोड़ते हैं। लोग भी इनकी बात सुनते हैं, मानते हैं।

हम लोग ग्यारह के लगभग यहाँ पहुँचे थे और राजा को बारह बजे के बाद लौटना है। इतनी देर। हम लोग खड़े हैं। भीड़ इतनी बढ़ गई है कि हम लोग यहाँ से निकल भी नहीं सकते। ज्यों-ज्यों समय होता है, त्यों-त्यों भीड़ बढ़ती जाती है।

अब हम लोगों की अजीब स्थिति है। अब मानव-मानव में जरा भी फर्क नहीं रह गया है। सब मिल कर एक हो गये हैं जैसे! मेरी स्थिति देखिये। मेरे आगे एक किशोरी है—सुनहले बाल और नुकीली नाक वाली। रह-रह कर मेरा और उसका सिर लड़ जाता है। पीछे एक पूर्ण-यौवना युवती है; जब भीड़ की लहर आती है, मेरी पीठ में अजीब गुदगुदी और धड़कन शुरू हो जाती है। दाहिनी ओर एक निग्रो महिला है; जब भीड़ उसकी बाँह को मेरी बाँह से जोड़ने को तैयार होती है, तब वह मुस्कुरा पड़ती है और मुझे शूर्पनखा की उस हँसी की याद आ जाती है जब वह लक्ष्मण से इसी तरह हँस-हँस कर बातें की होगी। दाहिनी बाजू में एक किशोर है जो कद में अपने से चार इंच छोटी किन्तु उम्र में शायद चार वर्ष बड़ी छोकड़ी को कलेजे से सटाये अपनी बाहों को इतना अधिक कड़ा कर लेता है कि मेरी बाँह पिसती-सी मालूम होती है।

यह देखिये, राजा की सवारी लौट रही है। आगे-आगे काली टोपी के पुलिस-सवार। फिर राजा के अपने घुड़सवार—सबके घोड़े काले; सबकी पोशाक लाल जिस पर सुनहला कवच; सिर पर झालरदार लम्बी

टोपी जिसका एक हिस्सा पूरी नाक को ढँके ! ठुड्डी पर सुनहली जंजीर जो टोपी को सिरसे कसे हुई। 'लवली-लवली' सामने की किशोरी चिल्ला रही है। फिर राजा; रानी ! राजा जब सवारी में निकलता है, अपने होंठ रँगे रहता है ! राजा से रानी अधिक सुन्दर; अधिक चपल—कैसी मुस्कान बिखेर रही है। और यह राज-माता मेरी हैं। राज परिवार के लोग; मंत्रि-मंडल के लोग; विदेशी अतिथि। बार-बार तुमुल नाद होता है, ऊपर से कागज के रंगीन टुकड़े बरसाये जा रहे हैं—जैसे हमारे यहाँ फूल बरसाते हैं।

ब्रिटेन के महोत्सव का बाजाप्ता उद्घाटन हो चुका। यह महोत्सव सारे ब्रिटेन में मनाया जा रहा है। सबसे पहले महारानी विक्टोरिया ने १८५१ में इस तरह का एक महोत्सव किया था—हाइड पार्क में। उसके सौ वर्षके बाद फिर उसे जीवित किया गया है। किन्तु इसबार इसका विस्तार बहुत बड़ा है। ३ मई से ३० सितम्बर तक का एक विस्तृत कार्यक्रम बनाया गया है। इंगलैंड, स्काट-लैंड, वेल्स और नार्थ आयरलैंड में एक साथ ही वह मनाया जा रहा है। लंदन में छः स्थानों में, इँगलैंड में १२ स्थानों में, स्काटलैंड में १० स्थानों में, वेल्स में ७ स्थानों में, नार्थ आयरलैंड में २ स्थानों मेंइस उत्सव के भिन्न-भिन्न विभागों के बड़े से बड़े आयोजन किये गये हैं। इनके अतिरिक्त दो भ्रमणशील आयोजन हैं जो सारे देश में घूमेंगे। प्रारम्भ से लेकर आज तक ब्रिटेन ने कलाकौशल, उद्योगधंधे, ज्ञान-विज्ञान, खेल-कूद में क्या किया, उसकी एक झलक इस महोत्सव से मिल जा सकती है। दावा किया गया है कि इतना बड़ा महोत्सव इंगलैंड में तो कभी हुआ ही नहीं, संसार में भी शायद ही हुआ हो। मंत्रिमंडल में इसके इंचार्ज हरबर्ट मोरिशन हैं, जिन्हें 'लोर्ड फेस्टिवल' के नाम से पुकारा जाने लगा है।

शाम को तूफान साहब आ गये। आपका नाम है श्री ब्रजमोहन खत्री; किन्तु १९४२ में जब वारंट निकला, बी० एम० तूफान के नाम से करांची के बन्दरगाह में नौकरी कर ली। तब से तूफान के नाम से ही इन्हें लोग जानते हैं।

तूफान साहब आज "न्यू थियेटर" ले गये, जहाँ बर्नर्ड शा का "मैन ऐंड सुपरमैन" चल रहा है। १२॥ शिलिंग की दो टिकटें खरीदीं; नीचे की सभी टिकटें बिक चुकी थीं। ढाई शिलिंग से १ पौंड तक की सीटें हैं। टिकट खरीदकर चहलकदमी के लिए ट्रैफेल्गर स्कायर देखने गये। यह स्थान संसार के प्रसिद्धतम स्थानों में से है। १८४०-४५ में यहाँ नेलसन का स्मृति-स्तंभ बना जो १८५ फीट ऊँचा है। चारो ओर चार सिंहों की मूर्तियाँ हैं, जो बड़ी ही शानदार और जानदार हैं! कई फव्वारे हैं, जिनमें कहीं मछली के मुँह से, कहीं मगर के मुँह से पानी तेजी से निकलते दिखाई देते हैं! शाम को यहाँ बड़ी चहलपहल रहती है। बहुत से कबूतर यहाँ चरते-विचरते दिखाई पड़ते हैं—दर्शक उन्हें दाने चुगाने का आनन्द लेते हैं।

न्यू थियेटर—मैनऐंड सुपरमैन—बर्नर्ड शा! यों तो लोहिया ने कहा था, थियेटर अँगरेज जाति का तीर्थ स्थान है। किन्तु मेरा तीर्थ स्थान तो यह है ही। मैं बर्नर्ड शा का भक्त। बर्नर्ड शा की सबसे प्रसिद्ध कृति मैन ऐंड सुपरमैन। जब मैंने इसे पढ़ा, आश्चर्य होता इतनी बड़ी वक्तृताओं को स्टेज पर सफलतापूर्वक कैसे अभिनीत किया जा सकेगा। नाटकीय दृष्टि से प्लाट सादा; दृश्य सादे। किन्तु आज इसका अभिनय देखकर सारे भ्रम दूर हो गये और बर्नर्ड शा सिर्फ विचारक ही नहीं, उच्चकोटि के नाटककार भी थे, यह निर्विवाद हो गया।

जौन क्लिमेंट्स ने जौन टैनर का पार्ट किया था और हैमेंड ने ऐन ह्वाइट फिल्ड का। जब क्लिमेंट्स टैनर का पार्ट कर रहा था, तब बार-बार लगता था कि टैनर नहीं, यह बर्नर्ड शा है! यों बर्नर्ड शा ने कहा भी था कि मैं आत्मचरित क्यों लिखूँ; मैं अपनी रचनाओं में भरा पड़ा हूँ। यदि सबसे अधिक कहीं वह है, तो मैन ऐंड सुपरमैन में। टैनर—एक बेचैन आत्मा; विचारों का पुतला; बेलौस कहनेवाला; किन्तु आह, वह किस तरह मकड़जाले में—विवाह में—फँस जाता है! के० हैमेंड ने ऐन

का पार्ट भी बड़ी खूबसूरती से निभाया—उसके हाव-भाव, बोल-चाल सब भद्रकुलीन अँगरेज कुमारी के। सारे नाटक में बर्नर्ड शा के व्यंग्य भरे हैं—लोग सुनते थे, हँसते थे! हाँ, अपनी जाति पर दी गई गालियाँ सुनकर औरतें ठठाठठा कर हँस रही थीं और अपनी जाति की बेवकूफियों पर मर्द भी लहालोट हो रहे थे! यही तो बर्नर्ड शा की खूबी है जिसे इन दो नर-नारियों ने यहाँ साकार कर दिया था!

सैवेल थियेटर का चाकचिक्य यहाँ के पर्दों में नहीं था; किन्तु जो था, वह जीवन के निकटतम था। पहला दृश्य—एक भद्रपुरुष का घर; दूसरा दृश्य एक रास्ता जिसके बीच में एक पुरानी मोटर; तीसरा एक बरामदा। उस दिन जब हम B. I. F. देख रहे थे, महेशजी ने कहा था, यहाँ यह पता पाना मुश्किल हो जाता है कि क्या नकल है और क्या असल। असली फूल नकली लगते हैं; नकली फूल असली मालूम होते हैं। इन्द्रप्रस्थ में दुर्योधन को जो भ्रम हुआ था, उसकी भी उन्होंने चर्चा की थी। नाटक के पर्दे को देखकर उनकी बातें स्पष्ट हो रही थीं!

नाटक के पात्र-पात्रियों के सम्मान का क्या कहना! नाटक समाप्त होने पर लोग, अपने देश की तरह, झटपट भागते नहीं हैं। तालियाँ पीटते रहते हैं, जब तक कि एक-एक कर सभी पात्र-पात्रियाँ आकर स्टेज पर खड़े नहीं हो जायँ। मुख्य पात्र-पात्री सबसे पीछे आते हैं। वे सब आते हैं, सर झुकाते हैं, खड़े हो जाते हैं। तब पर्दा गिरता है, तालियाँ गड़गड़ाती हैं, फिर पर्दा उठता है, फिर तालियाँ गड़गड़ाती हैं। तीन बार यह क्रम। यदि इसके बाद भी तालियाँ गड़गड़ाती रहीं, तो मुख्य पात्र और पात्री पर्दे के बाहर आकर सर झुकाते और यदि जरूरत समझते, तो कुछ कहते हैं!

जब थियेटर से निकला, भावना-विभोर था। क्या अपने देश में ऐसे नाटककार और ऐसे नट-नटी हो सकेंगे। क्या हम ऐसा मंच बना सकेंगे, जिसकी सीटें हफ्तों पहले से ही भर चुकी हों। क्या हम अपने नट-नटियों का ऐसा ही सम्मान कर सकेंगे?

लंदन, मई ४।५१
स्लाउ : विंडसर : ईटन

उफ, कितना थक गया हूँ।

साढ़े आठ बजे भोर में निकला और अभी १०॥ बजे रात में लौटा हूँ। कल से ही थकावट का अनुभव कर रहा हूँ; किन्तु आज तो हद हो गई। आने के बाद गरम पानी में स्नान किया, तब कहीं थोड़ी शान्ति मिली।

थकावट के कई कारण हैं।

एक तो यहाँ जो पोशाक पहननी पड़ती है, उससे सारा शरीर अजीब ढंग से कसा रहता है। इस पोशाक का कभी अभ्यास भी तो नहीं था—साफ तो यह है कि जिन्दगी में पहली बार ऐसी पोशाक पहनी है! अतः, ऐसा मुझे मालूम होता है कि कोई सिपाही किट में हो!

दूसरा—दिन थोड़े हैं, देखना अधिक है। अतः दिन-रात की दौड़-धूप रहती है। दिन में खा कर सोने का अभ्यास था, यहाँ तो खाने के बाद जरा लेटने का भी समय नहीं।

फिर—यह अँगरेज जाति अजीब है। इसके अधिक काम खड़े-खड़े होते हैं! किसी की प्रतीक्षा करनी है, खड़े रहिये। सौदावारी करनी है, खड़े रहिये। भोजन के पहले हाथ में प्याला और घंटे भर तक खड़े-खड़े गप कीजिये। पेशाब भी खड़े-खड़े और एक मित्र कह रहे थे, हाइडपार्क में खड़े-खड़े······राम! राम!

अँगरेज या तो खड़ा रहेगा, या दौड़ेगा। न यह बैठना जानता है, न धीरे-धीरे चलना। बूढ़ों और बूढ़ियों को भी दौड़ते देखता हूँ, तो आश्चर्य होता है। जवान लड़कियाँ जब दौड़ती हैं, तब तो भली लगती ही हैं।

यहाँ कौन तेल की मालिश करे, कौन पैर दबाये ! थका-माँदा जाता हूँ, अधमुए की तरह लेट जाता हूँ । कब नींद आती है, पता नहीं । जगता हूँ, तो जल्दी-जल्दी तैयार होना पड़ता है । इस पोशाक के पहनने में भी कम उलझन नहीं होती । मोजा पहनिये, गार्टर कसिये । अन्डरवेयर पहनिये, कमर कसिये । पतलून पहनिये—आधे दर्जन बटन लगाइये, दोनों बगल के फीते कसिये, सामने का फीता कसिये और ऊपर से बेल्ट कसिये । कसिये, कसिये, कसिये । शरीर में गंजी, ऊनी गंजी, कमीज, स्वेटर । कमीज के हाथों में बटन, गले में बटन । फिर कोट या शेरवानी । बटन-बटन-बटन-बटन, बटन । हूक ! पैर में जूते पहन कर उसके फीते को कसिये । उफ, एक पूरा व्यायाम ही समझिये ! और ऊपर से फिर ओवर-कोट कसना हो, यह न भूलिये !

कहाँ यह कसन-कसन । कहाँ ढीलीढाली धोती । ढीलाढाला कुर्ता ! बंडी पहन ली, तो फिर क्या कहने ?

परीशान हूँ साहब !

और भोजन भी तो परीशानी का ही कारण बना हुआ है । अपने यहाँ भोजन के समय कपड़े जितने कम रहें, उतना ही अच्छा । जो सिर्फ आधी धोती पहने और आधी धोती ओढ़ कर खाते, वे सबसे बड़े निष्ठावान समझे जाते हैं । यहाँ भोजन के समय सारी पोशाक पहननी है । और खाना तो व्यायाम है ही ।

टेबल पर जितनी तश्तरियाँ आती हैं, उससे अधिक चमचे, काँटे और छुरियाँ आते हैं ! दोनों हाथों से काम लीजिये । काँटे, छुरी, चमचे—सबके पकड़ने के नियम हैं । यदि गलती कीजियेगा, तो लोग आपको अभद्र समझेंगे । यारों ने सिखाया तो, किन्तु अभ्यास तो है नहीं । बगल के साथी को देखते रहिये; तो भी क्या गलती से आप बच सकेंगे ! भोजन में कहाँ तृप्ति मिले, यदि उसे ग्रहण करने में ही परीशानी हो ।

और भोजन भी तो अजीब है। यहाँ हम सरकारी मेहमान हैं, भारतीय भोजन भी मिल जाता है किन्तु उसे खाना पड़ता है अँगरेजी ढंग से। यह और भी बड़ी मुसीबत ! होटल में तो किसी तरह नभ जाता है, कहीं न्योते में गये, तो भीतर पसीना छूटता रहता है !

और न्योता भी यहाँ प्रायः ही खाना पड़ता है—बड़े-बड़े सरकारी अधिकारियों के घर; बड़े-से-बड़े लोगों के घर। खाने के समय एक और भी दिक्कत—खाइये और गप्पें कीजिये। डेढ़ घंटे से कम में तो खाना होता नहीं। खाना पीना दोनों जोड़ दीजिये, तो पूरे दो घंटे की कसरत करनी पड़ती है ?

बताइये, फिर आदमी—खास कर मेरे ऐसा आदमी थके नहीं, तो क्या हो ?

राम राम करके किसी तरह यह यात्रा पूरी हो जाय, तो सबसे पहले घर जाकर फूआ-दाई को बतासे और पोखन ठाकुर बाबा को खीर जरूर चढ़वाऊँगा। जेल में जब इसी तरह की मुसीबतें आती थीं, तो फूआ-दाई और पोखन ठाकुर की बड़ी याद आती थी। यहाँ भी आ रही है। अँगरेजों की मेहमानदारी अजीब है—जेल में भी, उनके घर पर भी।

खैर, इन बातों को छोड़िये, चलिये, स्लाउ और विंडसर !

स्लाउ लंदन से तीस मील पर है। आज इन्द्रदेव की बड़ी कोपदृष्टि रही। घर से भींगते हुए निकला; दिन भर भींगते हुए घूमा। भींगते हुए घूमना यहाँ के लिए मामूली बात है। जहाँ के मौसम का आठ महीना ऐसा हो हो, वहाँ वालों को ऐसा अभ्यास हो जाना स्वाभाविक ही है।

स्लाउ यों तो है पुराना कस्बा, किन्तु इधर लड़ाई के बाद उसका बहुत विकास हो रहा है। लंदन की आबादी को बढ़ने से रोकने के लिए, उसके आस-पास पाँच-छः कस्बे नये सिरे से बसाये या बढ़ाये जा रहे हैं, उनमें यह स्लाउ भी है।

सबसे पहले हम यहाँ के शिक्षा-निरीक्षक—Inspector of Education के दफ्तर में गये। इन्स्पेक्टर साहब ने एक टाइप किया हुआ कागज दिया, जिसमें शिक्षा-सम्बन्धी बातों का संक्षेप में उल्लेख है और फिर संक्षेप में कहा भी। इंगलैंड में शिक्षा के मुख्य तीन विभाग हैं— (१) प्राइमरी विभाग ५ वर्ष से लेकर ११ वर्ष तक की उम्र के लिए (२) सेकेन्डरी—११ वर्ष से १५ वर्ष तक की उम्र के लिए फिर (३) उच्च शिक्षा १५ से बालिग होने तक के लिए। १५ वर्ष तक की शिक्षा निःशुल्क है। पढ़ाने, लिखाने, खेलाने-कूदाने के अलावा दिन का खाना भी बच्चों को दिया जाता है। हर स्कूल में भोजनालय भी है। लड़ाई के जमाने से ही दो वर्ष की उम्र से ५ वर्ष की उम्र के बच्चों के लिए शिशु-विभाग भी है। यहाँ माँ बच्चों को रख कर काम पर चली जाती है। यहाँ बच्चों को खेलाया और खिलाया जाता है, खेल-खेल में कुछ शिक्षा भी दे दी जाती है।

इन्स्पेक्टर साहब हमें स्कूल दिखलाने ले चले। सबसे पहले हम एक प्राइमरी स्कूल में गये। स्कूल के चारो ओर खुले मैदान हैं। स्कूल का भवन बड़ा ही सुन्दर है। इसमें ४०८ विद्यार्थी हैं और १२ शिक्षक। शिक्षकों में अधिक स्त्रियाँ हैं। क्लास में छोटे-छोटे डेस्क और उनसे लगे छोटे-छोटे बेंच। दीवालों पर चारों ओर सुन्दर-सुन्दर चित्र। ये चित्र मुख्यतः क्लास के बच्चों के ही बनाये हुए हैं। इन चित्रों के कारण क्लास हँसता-सा मालूम होता था। टीचर के टेबल के पीछे बड़ा-सा काला बोर्ड। बोर्ड पर सिर्फ उजली खली से ही नहीं, लाल और हरी खली से भी लिखा हुआ।

हम बच्चों से मिले, उनकी कापियाँ देखीं, उनसे बातें कीं। बच्चे बड़े प्रसन्न, बड़े तन्दुरुस्त, उनके कपड़े भी अच्छे! जब हम टीचर से बातें कर रहे, बच्चे आपस में कानाफूसी करते और एक बच्चा एक बच्ची को बुरी तरह छेड़ रहा!

हमारे स्वागत में बच्चों ने एक गाना सुनाया। बच्चे आये, टीचर (महिला) ने कहा, जिसे जो बाजा पसंद है, उसके सामने चला जाय। बड़े करीने से बच्चे बढ़े और अपनी-अपनी पसंद के बाजे के निकट खड़े हो गये। फिर एक बच्चा आगे बढ़कर हाथ से बाजे का इशारा करने लगा; उसी ताल में बाजे बजने लगे। फिर दूसरे बच्चोंने आगे बढ़कर एक गीत गाया, सब उस गीत को दुहराने लगे ! बड़ा आनन्द आया। इस कौमन रूम में भी तस्वीरें लटकी थीं, मालूम हुआ, ये भी बच्चों की बनाई हुई हैं।

शिशु-विभाग—नर्सरी—को देख कर तो मैं निहाल हो उठा। छोटे-छोटे बच्चे छोटी-छोटी कुर्सियों पर बैठे। बड़े इत्मीनान से, कोई इस रुख, कोई उस रुख ! झूले भी लगे थे और चारपाइयाँ भी एक तरफ रखी थीं। जिसे नींद आने लगेगी, उसे सुला दिया जायगा। तरह-तरह के खिलौने भी इधर-उधर रखे हुए हैं। बच्चों के खेलने के लिए गीली मिट्टी भी रखी हुई—मिट्टी से बच्चों को हर जगह अनुराग है। तरह-तरह के रंग और ब्रश भी पड़े हुए। बच्चों को रंग से प्रेम होता ही है। वे तरह-तरह के चित्र भी बनाते हैं। उनके बनाये हुए कुछ चित्र एक तरफ रखे हुए थे। मैंने एक चित्र को लेकर कहा, यह चित्र किसने बनाया है। चार साल की लड़की को पेश किया गया। मैंने पूछा—क्या मैं यह चित्र ले सकता हूँ। टीचर ने मुझे उसे देने के पहले बच्ची से पूछा—क्या तुम इन्हें यह यह चित्र उपहार में दोगी; यह दूसरे देश से आये हैं। बच्ची ने हाँ कहा; चित्र लेकर मैंने फोलियों में रख लिया।

यह चित्र मेरे लिए इँगलैंड का सबसे अच्छा उपहार है !

फिर हम सेकेन्डरी स्कूल में गये। हमने वहीं खाना खाया।

यहाँ ११ से १५ वर्ष के लड़के-लड़कियाँ पढ़ते हैं। कुछ लड़कियाँ छोटी थीं, कुछ की जवानी झांक रही थी। अस्फुटित कलिकायें देखने में सदा आकर्षक होती हैं। जरा भी झिझक नहीं। निर्द्वन्द्व घूम रही थीं।

टीचर और बच्चे साथ ही खाते हैं। टीचरों के लिए ऊपर मेज होता है, बच्चों के लिए नीचे। हम लोग टीचरों के साथ बैठे। यहाँ भी हमारे खाने में भारतीयता रखी गई थी। भोजनगृह से सटा रसोई-घर। जब उसकी खिड़की खुली, बच्चे उस ओर दौड़; किन्तु वहाँ जाते ही 'किउ' में लग गये। यहाँ 'किउ' सबके जीवन में समाया हुआ है। जहाँ देखिये, बात की बात में कतार लग जाती है। बच्चे अपनी-अपनी थाल लेकर आने लगे और अपने साथियों के साथ खाने लगे। खाते समय अपने देश के बच्चों की ही तरह तरह-तरह की हरकतें। किन्तु, जरा भी हल्ला नहीं। मुँह बन्द कर काम करना अँगरेज जाति का स्वभाव बन गया है। बोलेंगे भी, तो बहुत धीरे! नाटकघर में, सिनेमा में, स्टेशनों पर, मेलों में—आप हल्ला कहीं नहीं सुनेंगे और न धक्कम-धुक्की देखेंगे। दौड़ते हुए आयेंगे और झट कतार में खड़े हो जायँगे।

खाने के बाद स्कूल के कुछ हिस्से देखे। कलाविभाग में तस्वीरें हैं, हाथ की कारीगरी है। एक हाल में लड़के-लड़कियाँ नाचना सीख रही थीं। व्यायाम-भवन में कुछ लड़के, इस घोर जाड़े में भी, नंगे बदन व्यायाम कर रहे थे।

यहाँ के हेडमास्टर बड़े अनुभवी हैं, यह बातों से ही पता चला। यहाँ के हेडमास्टर अपने देश के हेडमास्टरों के ऐसा सिर्फ फिगरहेड नहीं होते। इन्स्पेक्टर ने जो कागज दिया है, उससे पता चलता है, हेडमास्टर ही यहाँ सिलेबस बनाता है, करिकुलम बनाता है, कोर्स की किताबें चुनता है और बिना उसकी मर्जी के न कोई मास्टर रखा जा सकता है, न निकाला जा सकता है।

वहाँ से हम इटन आये। इटन का कालेज (स्कूल कहिये) दुनिया में प्रसिद्ध है। इंगलैंड के बड़े-से-बड़े आदमी को आदमी इसी संस्था ने बनाया। इंगलैंड के १७ प्रधानमंत्री इसी कालेज से निकले थे। यह बहुत ही पुरानी संस्था है। हेनरी चतुर्थ ने इसकी नींव १४४० ई० में

डाली। अब भी वह कमरा सुरक्षित है जहाँ ७० विद्यार्थियों को लेकर इसका श्री गणेश हुआ था। अब भी ७० विद्यार्थियों का पूरा खर्च राजकोष से मिलता है और वे राजा के विद्यार्थी—(King's Scholar) कहलाते हैं। हमने स्कूल का वह कमरा देखा; मोटे-मोटे तख्तों की बेंचें, जिनपर जहाँ-तहाँ विद्यार्थियों ने कुछ न कुछ गोद-गाद रखा है।

इसके ऊपर जो एक कमरा है उनमें उन लोगों के नाम खुदे हैं, जो इस स्कूल में पढ़कर निकले। अँगरेजी के दो प्रसिद्ध कवि शेली और ग्रे यहीं के पढ़े हुए थे। वाटरलू के विजेता विलिंग्टन यहीं से निकले थे—उन्होंने बड़े गर्व से कहा था, वाटरलू की विजय इटन की क्रीड़ाभूमि में हुई थी।

इसमें १२ से लेकर १३ वर्ष तक के लड़के लिये जाते हैं और १८ वर्ष की उम्र तक वे यहाँ रहते हैं। इसमें दाखिल होना बहुत मुश्किल है। एक तो खर्च अधिक पड़ता है, फिर बहुत तेज लड़के ही लिये जाते हैं। इटन में जो पढ़ चुके हैं, उनके बच्चों को तरजीह दी जाती है। एक ऐसा परिवार है जिनके लड़के १६५४ से आजतक इसमें पढ़ते आये हैं। एक हजार से ग्यारह सौ तक लड़के इसमें पढ़ते हैं। कुल मिलाकर २४ होस्टल हैं, जिनमें से एक-एक में ४० से ४५ विद्यार्थी रहते हैं।

हेनरी चतुर्थ ने इसी कालेज (स्कूल) के साथ कैम्ब्रिज के कालेज (विश्वविद्यालय) की भी नींव डाली थी। ये दोनों संस्थायें उसकी अमर स्मृतियाँ हैं !

इटन के इस कालेज के साथ ही एक गिरजाघर भी है जिसकी नींव हेनरी चतुर्थ ने ही डाली थी। इस गिरजाघर के दीवालों पर जो चित्र हैं, वे इँगलैंड के प्राचीनतम चित्रों में माने जाते हैं। पिछले महायुद्ध में हिटलर के हवाई जहाजों ने यहाँ भी बम पटके थे। कालेज का तो कोई नुकसान नहीं हुआ, शीशे पर बने एक बगल के सारे चित्र नष्ट हो गये।

इटन के बाद हम विंडसर का किला देखने आये। यह किला भी बहुत पुराना है। बारहवीं शताब्दी से आज तक का इसका इतिहास है। टेम्स के किनारे एक पहाड़ी पर यह बनाया गया है। अपने प्राकृत सौन्दर्य, विशाल अट्टालिकायें, राजभवन की अपूर्व चित्रावली और सेंट जौर्ज के गिरजाघर के लिए विंडसर प्रसिद्ध है। विंडसर वैसा ही है जैसा दिल्ली के लिए आगरा ! या आगरे के लिए फतहपुर सिकरी। लंदन के कर्म-कोलाहल से दूर यह किला आखेट और आमोद-प्रमोद के लिये बनाया गया था।

इसका गिरजाघर इंगलैंड की मध्यकालीन इमारतों के सबसे सुन्दर उदाहरणों में समझा जाता है। पन्द्रहवीं शताब्दी में इसकी नींव पड़ी थी। इसमें कई प्रसिद्ध राजाओं की समाधियाँ हैं, जिनमें पंचम जौर्ज भी हैं। राजकुमारी चार लौट की समाधि देखकर आँखें भर आईं। यह चतुर्थजौज की पुत्री और बेलजियम के राजा की पत्नी थीं। मृत शिशु के प्रसव के साथ ही इस राजकुमारी का देहान्त हुआ था। संगमरमर की मूर्तियों की बारीकी देखने योग्य है। मालूम होता है, अभी राजकुमारी मरी है, जिसके मुँह पर एक झीना कपड़ा डाल दिया गया है। उसकी चार बाँदियाँ रो रही हैं और ऊपर से एक दो परियाँ आकर उसके बच्चे को लेकर उड़ी जा रही हैं।

विंडसर के एक होटल में खा-पीकर हम फिर स्लाउ पहुँचे, जहाँ का कम्युनिटी सेन्टर देखना था। यह सेन्टर भी अँगरेज जाति के संगठन और निर्माण कुशलता का प्रमाण है। लगभग बीस लाख रुपए लगाकर इस केन्द्र की स्थापना की गई है। इसके चार हजार सदस्य हैं। केन्द्र में खेल-कूद, आमोद-प्रमोद, शिक्षा-सहायता सबका व्यापक प्रबंध है। जब हम पहुँचे, तैरने की प्रतियोगिता हो रही थी। नवयुवकों और नव-युवतियों को नंगे बदन, सिर्फ स्नान की पोशाक में देखकर और उनकी तैराकी के उत्साह का निरीक्षण कर बड़ा आनन्द आया। कैसे गठे हुए

शरीर थे उनके; इस जाड़े में भी वे किस तरह नंगधड़ंग उत्साह में पगे थे ! फुटबाल के मैदान में कोई दौड़ रहा था, कोई तरह-तरह के खेल सीख रहा था। एक हौल में ब्रिटेन के महोत्सव के उपलक्ष में प्रदर्शिनी लगी थी, जिसमें यहीं के लोगों की बनाई कला और कारीगरी की बड़ी सुन्दर-सुन्दर चीज़ें सजाई गई थीं।

इंगलैंड में इस बड़े पैमाने का सामाजिक केन्द्र सिर्फ शेफील्ड में है। यों तो देश भर में ऐसे तीन सौ केन्द्र हैं, जिनका वार्षिक सम्मेलन समय-समय पर हुआ करता है !

लंदन, मई ५।५१

मई-दिवस !

कल की थकावट। सोचा, आज पूरा विश्राम करूँ। देर से जगा। मुँह हाथ धोकर ज्यों ही बैठा था, फोन आया। कोई मिश्री लाल जी हैं। हिन्दी में रिसर्च कर रहे हैं। मिलना चाहते हैं। कह दिया, आइये।

आये। नवयुवक हैं। आगरे के रहने वाले हैं। इन्होंने बताया इन्डिया हाउस की लाइब्रेरी में तथा ब्रिटिश म्यूजियम में हिन्दी के अलभ्य ग्रन्थ भरे पड़े हैं। उन्हें भारत ले चलना चाहिये। बात तो ठीक है, इसके लिए चेष्टा भी होनी चाहिये। किन्तु सोचता हूँ, क्या भारत में ये पुस्तकें होतीं, तो इन्हें दीमक नहीं खा गये होते। धन्य अँग्रेजों की संग्रह वृत्ति कि ये अब तक सुरक्षित हैं। अभी हिन्दी संसार में राय कृष्णदास जी एक ही हैं। हाँ, उनके पैर पीछे खींचने वालों की कमी नहीं। तय हुआ, परसों हम इन्डिया हाउस की लाइब्रेरी में चलेंगे।

यों तो मई-दिवस संसार में पहली मई को मनाया जाता है। किन्तु यहाँ की लंदन ट्रेड्स कौंसिल की ओर से उसे आज मनाया जा रहा है। यह बहुत पुरानी संस्था है, १८६० में इसका संगठन हुआ। १९४८ के बाद लंदन में यों सार्वजनिक रूप से मई-दिवस नहीं मनाया जाता था। कई बार आपस के झगड़े हुए। अन्त में सरकार ने मना कर दिया। किन्तु इस बार उसकी इजाजत दे दी गई है।

हाइड पार्क के कोने से एक जुलूस निकलने वाला था। मैं वहीं जाकर देखने लगा। कई पुरानी मजदूर-संस्थायें सम्मिलित हुई हैं। उनके तरह-तरह के झंडे, उनके तरह-तरह के चिह्न। किन्तु हमारे कम्युनिस्ट भाई ऐसे अवसरों को अपने हित में उपयोग करने से कब चूकने वाले! उनका काफला बड़ा है। तरह-तरह की यूनियनों के नाम—किन्तु सबका

एक रंग। कम्युनिस्ट पार्टी कोई जनता की पार्टी नहीं; वह तो एक खास उद्देश्य से संगठित बिना वर्दी की फौज है !

बहुत-सी छोकरियाँ 'डेली वर्कर' बेच रही हैं; उनकी छोटी-मोटी पुस्तिकायें बेच रही हैं। 'डेली वर्कर' के संपादक और उनके स्टाफ के लोग भी इसमें शामिल हो रहे हैं।

बैंड बजाते जुलूस रवाना हुआ। सबसे आगे लंदन ट्रेड कौंसिल का जत्था, उसके बाद अन्य मजदूर-संघों के, फिर कम्युनिस्टों के जत्थे पर जत्थे ! यहाँ जुलूस में झंडे बहुत कम रहते हैं; लम्बे कपड़े पर संगठन के नाम लिखे होते हैं, कुछ लोग गीत गाते हुए चलते हैं। कत्तार में चलना तो अँगरेजी स्वभाव है और उनका स्वभाव है तेजी से चलना। जुलूस में तेजी बढ़ ही जाती है। वह देखिये, सर से पैर तक लाल कपड़े में ढँकी वह युवती इसी तेजी के चलते तो गिर पड़ी। बगल के दो युवकों ने बाँह में हाथ लगाये। वह फिर फुदकती हुई बढ़ रही है।

ऐसे पाँच जुलूस लंदन के भिन्न-भिन्न हिस्सों से निकले थे। ट्रेंगतर स्कायर में सब इकट्ठे हुए। मैं वहाँ भी गया। सड़कों पर इतने लोग मालूम होते थे, यहाँ आकर इस विशाल स्कायर को भर भी नहीं सके। हाँ, नेलसन स्तम्भ के नीचे, सिंहों की पीठ तक, तरह-तरह के मजदूर-संस्थाओं के लाल फरहरे जरूर लटक रहे थे। दर्शकों की भी भरमार थी।

परसों राजा को देखने के लिए लोग उतावले थे, आज मजदूरों को देखने के लिये लालायित हैं। हाँ, एक बात। परसों लोगों के हृदयों में उल्लास देखा था, आज लोगों की आँखों में कुतूहल देख रहे हैं।

वहाँ से लौट कर ब्रिटिश कौंसिल में गया। यह संस्था भी अजीब है। विद्यार्थियों के लिए इसने एक केन्द्र भी खोल रखा है। उसमें सभी देश के लड़के आते हैं। मैं जब उसके कमरे में गया, देखा, काले चेहरे भी वहाँ कम नहीं हैं। मेरी शेरवानी देख कर एक निग्रो छात्र ने पूछा—

आप पाकिस्तान से आये हैं। जब मैंने 'इण्डिया' कहा, तब उसने कश्मीर की चर्चा छेड़ दी। उस बेचारे को समझाया गया था कि चूँकि पंडित नेहरू का घर कश्मीर में है, इसलिए वह खामखा कश्मीर को भारत में रखना चाहते हैं। पंडित जी का घर कई पुश्त से यू० पी० में है और कश्मीर का राजा तो पाकिस्तान से ही मिलना चाहता था, यह तो वह की मुस्लिम जनता थी जो भारत के साथ रहना चाहती थी और चाहती है, यह सुनकर उसे आश्चर्य हुआ! बेचारे ने कहा, उसके कालेज में एक पाकिस्तानी लड़की है, उसीने उससे यह गलत बात बताई थी!

कौंसिल में एक फ्रांसीसी लड़की से भेंट हुई जो यहाँ रोमन-साम्राज्यों की आर्थिक नींव पर रिसर्च कर रही है। वह भी अच्छी तरह अँगरेजी नहीं बोल सकती थी। अपने देश पर उसे बहुत गर्व!

सारी शाम घर पर ही काट दी।

आज तक भारत से एक भी पत्र नहीं आया, न जाने क्यों? अवधेश्वर को एक पत्र रोम से ही भेज दिया था। फिर यहाँ आकर उसे और सुरेन्द्र जी को पहुँच का केबुल कर दिया था। तब से प्रायः प्रति दिन पत्र भेजता हूँ। किन्तु कोई खोज-खबर नहीं ले रहा। पता लगाया है, यहाँ से ५-६ दिनों में पटना तक पत्र पहुँच जाता है। फिर दिल्ली से पत्र क्यों नहीं आया?

हिन्दी केन्द्र के उद्घाटन सम्बन्धी पत्र परसों श्रद्धेय राजेन्द्र बाबू, टंडन जी, गोविन्द दास जी, सम्पूर्णानन्द, माथुर साहब, आदि को भेजा। न—जाने, २१।५ तक उनका भी उत्तर आता है या नहीं।

हमने यूरोप देखने और भारत लौटने का प्रोग्राम बना लिया है। २३ को यहाँ से पेरिस के लिए रवाना होंगे। २८ तक वहाँ रह कर स्वीजरलैंड। स्वीजरलैंड में तीन दिन और इटली में दो दिन। मिश्र में दो-तीन दिन। यों जून के पहले सप्ताह के अन्दर ही पटना पहुँच जाने की सम्भावना है।

लंदन मई ६, ५१
सोशलिस्ट ग्रूप : पार्क स्ट्रीट

स्वभावतः देर से जगा। स्नानादि से निवृत्त होकर बैठा था कि पंचानंद जी आ गये। उनके साथ सिंघल के घर खाने चला।

सिंघल लंदन से दस-बारह मील पर रहते हैं। यहाँ के भारतीय विद्यार्थी विशेषतः लंदन से बाहर रहते हैं। यों तो कोई विभाजक रेखा नहीं कि इन जगहों को लंदन से बाहर कहा जाय। इन जगहों में रहने से मकान-किराये में कमी पड़ती है। लंदन में सबसे बड़ा खर्च मकान—किराये का है। महीने में जितना खर्च होता है, आधा प्रायः किराये में जाता है। यहाँ मकान सजे-सजाये मिलते हैं। कुर्सियाँ, टेबल, पलंग, फर्श सब मकान का हिस्सा माना जाता है।

ट्यूब से चले; ट्यूब ही की गाड़ी आगे जाकर ऊपर चलने लगी। बिजली से चलती है। इसमें एक ही क्लास होता है। लंदन-ट्रांसपोर्ट इसकी मालिक है। इसी की बसें भी चलती हैं। बसों में भी क्लास नहीं। ट्यूब में बैठने का इतना बढ़िया इन्तजाम है कि अपने यहाँ के किसी अच्छे से अच्छे वकील के घर में वैसा बैठने का प्रबन्ध नहीं होगा। गुल-गुल गद्दे—रंगबिरंगे, साफ सुथरे। किराया भी बहुत ही कम।

स्टेशन पर ही सिंघल मिले। कुछ देर गई थी, बेचारे परीशान थे। उनके घर में गया। घर से लगा एक छोटा-सा बगीचा भी। बगीचे में सेब के पेड़ फूलों से लदे थे; थोड़े दिनों में फल आयेंगे। सिंघल कह रहे थे, गरमियों में सेब खाने से ही फ़ुर्सत नहीं मिलती।

हॉट हाउस—नाम सुना था। हर बगीचे में शीशे का एक ऐसा घर बना रहता था, जहाँ जाड़े में सुकुमार पौधों को रख दिया जाता था। वे वहीं पलते और बढ़ते रहते हैं। गरमियों में उन्हें बाहर लाया जाता है।

सिंघल यहाँ के भारतीय विद्यार्थियों के एक टाइप का प्रतिनिधित्व करते हैं। १९४२ की क्रान्ति में काम किया। सोशलिस्ट पार्टी में आये। अलीगढ़ घर है; किन्तु राजपूताना, मध्य भारत और दिल्ली की खाक छानते रहे। अन्ततः एम० ए० किया और यहाँ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर रिसर्च कर रहे हैं। उनकी पत्नी देवहुति भी उनके साथ है। देवहुति भी एम० ए० करके यहाँ पति के साथ ही आई हैं और हर्षवर्धन पर रिसर्च कर रही हैं। दोनों को हिन्दी लिखने-पढ़ने से भी प्रेम है। बी०-बी०-सी० में दोनों अपनी चीजें देते हैं। यहीं काम करके अपना काम चलाते हैं। सिंघल इन्डिया लीग में काम करते हैं।

भारतीय ढंग का भोजन। सिंघल की मस्ती; देव की गृह-निपुणता। बड़े प्रेम से खाना खाया।

यहाँ आज कल स्थानीय संस्थाओं—काउन्टी कौंसिल-का चुनाव हो रहा है। कई घरों के दरवाजे पर लटकता देखा—अमुक को वोट दीजिये; कन्जर्वेटिव या मजदूर। इस क्षेत्र में कंजर्वेटिव अधिक हैं। एकाध जगह मजदूर की तख्ती देखी! काउन्टी कौंसिलों में कन्जर्वेटिव ही अब तक जीतते आये हैं।

यहाँ से सोशलिस्ट पार्टी के ग्रूप की बैठक में आया। लगभग पन्द्रह व्यक्ति थे—भारत के प्रायः हर हिस्से से वे आये हैं। लंदन के इन नौजवान सोशलिस्टों को देख कर मन में तरह-तरह की भव्य और करुण भावनायें उठती हैं। एक तरफ कम्यूनिस्ट पार्टी है जो हर जगह अपनी शाखा रखती है, हर व्यक्ति को पार्टी में लाने की कोशिश करती है और पार्टी के हर व्यक्ति के पास ही नहीं, जो कोई उनके सम्पर्क में आते हैं, उन सब तक पार्टी के हर-छोटे बड़े साहित्य को पहुँचाने की कोशिश करती है। दूसरी तरफ हम हैं, जो खोज-खबर भी नहीं रखते कि पार्टी के सदस्य या पार्टी के सहायक कहाँ हैं, क्या करते हैं! उनके तक साहित्य पहुँचाने की बात तो बहुत दूर की है! इन लोगों ने बताया कि लोहिया ने वादा किया, लिमये ने वादा किया, किन्तु कोई साहित्य नहीं मिला।

इकबाल ने मेरा परिचय दिया। फिर मैंने लोगों से आग्रह किया कि वे प्रश्न पूछें। अकाल की क्या स्थिति है और पार्टी इस सम्बन्ध में क्या कर रही है—मुख्य विषय यही रहा। बिहार की स्थिति बताई और पार्टी के काम बताये। फिर थोड़ी चर्चा चुनाव की हुई और अन्त में अरुणा-आसफ अली पार्टी से अलग हुई हैं, इस सम्बन्ध में प्रश्न आये। यहाँ अरुणा को लेकर बड़ी चर्चा है। मालूम होता है, कम्यूनिस्टों ने इस प्रश्न को बड़ा बनाया है। भारत में तो हमने इसे स्वाभाविक रूप में ही लिया है। मैंने बताया कि एक बड़े व्यक्तित्व के हटने का यह पहला मौका नहीं है। श्रीप्रकाश, रंगा, सम्पूर्णानन्द, गौतम ऐसे लोग हटे हैं। अरुणा जी का व्यक्तित्व इनमें से किसी से भी बड़ा नहीं और वह जो मार्क्सवाद की दुहाई देती हैं, वह छोटे मुँह बड़ी बात है। मार्क्सवाद का क ख ग भी जानती हैं, यह भी सन्देहास्पद है।

एक ग्रुप फोटो के बाद बैठक समाप्त हुई। उसके बाद श्री के घर पर गया। शम्भू बाबू का बेटा, जयप्रकाश जी का पोता। अपना-पा तो है ही। उसका विचार भी प्रगतिवादी है। कामेश्वर भी साथ थे। लंदन के रहन-सहन की काफी बातें हुईं। अँगरेज व्यक्तिगत जीवन में कितने परिश्रमी, कितने ईमानदार, कितने अनुशासन-प्रिय और भूले-भटके के कितने अच्छे सहायक हैं, दोनों लड़कों ने भूरि-भूरि प्रशंसा की। अँगरेज विद्यार्थी पढ़ता भी बहुत धुन से है। लाइब्रेरियों में विद्यार्थियों की जमघट लगी रहती है। प्रोफेसर तो यहाँ पथप्रदर्शक मात्र है, विद्यार्थी स्वयं पढ़ते हैं।

श्री के ही साथ इम्पायर में सिनेमा देखा। इम्पायर यहाँ का सबसे बड़ा और शानदार सिनेमा-गृह है। एक राज भवन-सा ही लगता है। किन्तु श्री को कुछ अफसोस हुआ कि लेट से पहुँचने के कारण सिनेमा के पहले जो नृत्य होता है, हम उसे देख नहीं सके।

कल स्काटलैंड की ओर जाना है; एक बजे रात तक सामान सम्हालता रहा।

अब इस "टू पार्क स्ट्रीट" को छोड़ना है, अतः दो चार शब्द यहाँ के बारे में।

यह एक शानदार होटल है। कौमनवेल्थ से आये हुए मेहमानों के लिए ही मुख्यतः यह होटल चलाया जाता है। काफी खर्चीला है। साज-सज्जा और प्रबन्धक–दोनों का क्या कहना? शाही मेहमानों के लायक ही यह होटल है। सुना है, इसके खर्च को लेकर एक बार पार्लियामेण्ट में सवाल भी हुए; किन्तु मान लिया कि "जस पूजा चाहिये, जस देवता।"

यहाँ जब खाने बैठता हूँ, तरह-तरह के चेहरे दिखाई देते हैं। हब्सी तो कई दिन और कई दिखाई पड़े। उनके साथ भी हमेशा एक-न-एक अँगरेज, जो हमारे मि० सैम्पूलस की तरह उनसे घुल–घुल कर बातें कर रहा। एक दिन भारतीय चेहरे का एक आठ–नौ साल का बच्चा दिखाई पड़ा। मालूम हुआ वह सिलोन का है। कई दिनों से भारतीय चेहरे वाली दो-तीन औरतों को देख रहा हूँ। परसों एक अखबार में छपा, पाकिस्तान की एक बेगम साहबा किसी भोज में गई तो अपने सोने के डब्बे से मसाला निकाल कर सब्जियों में मिलाया। उनका फोटो भी छपा था; वह चेहरा भी यहाँ दिखाई पड़ा। अभी आज एक देवीजी फर्राटे की उर्दू में एक साथी से बातें करने लगीं। तमाशा यह है कि ये मुसलमान औरतें यहाँ शलवार नहीं पहनतीं, साड़ी ही पहनती और सच पूछिये तो इसमें खूब खुलती भी हैं। एक काले अधेड़ साहब के साथ वह जो एक षोड़सी आज हमारे सामने टेबल पर बैठी थीं, भारतीय ही तो है। और भी कई चेहरे—मर्द औरत के—यहाँ अपने देश के देख चुका हूँ।

अँगरेजों की एक रूची यह है कि अपरिचितों से बातें नहीं करते। यहाँ जो भारतीय आते हैं वे भी आपस में इसे ही बरतते हैं। और सबसे बुरी बात यह है कि आपस में भी अँगरेजों के ही तरह 'हाउ डू यू डू' आदि के प्रहसन करते हैं।

ग : मुफस्सिल की ओर

मई ७-५१

देहात की पहली झलक

आज ही डरहम जाना है। सवेरे से ही तैयारी। धीरे-धीरे अँगरेजी पोशाक भी सधती जा रही है। यही नहीं, अकेले अपनी चीजों की सम्हाल की प्रवृत्ति भी बढ़ रही है। अपने देश में मैं अपनी सारी चीजें घर के लोगों पर ही छोड़े रहता था, अतः कुछ दिनों तक बड़ी परीशानी हुई थी।

महेश जी आये। उनके साथ B. I. F. की ओलम्पिया की प्रदर्शनी देखने गया। ओलम्पिया में विशेषतः छोटे-छोटे औजारों और कल-पुर्जों की प्रदर्शनी है। प्रेस के सामानों को देखना था। तरह-तरह की नई डिजाइनों की मशीनें देख कर आश्चर्य-चकित रह जाना पड़ा और सबसे अधिक आश्चर्य चकित रह जाना पड़ा एक दुकान पर जाकर जहाँ हिन्दी में लिखा था—"यहाँ हिन्दी बोली जाती है।" यहाँ टाइप की ढलाई की प्रदर्शनी थी! हरी पट्टी पर, बड़ी सुन्दर हाथ की लिखावट में यह वाक्य लिखा हुआ था। एक सज्जन खड़े थे, जिन्होंने टूटी-फूटी हिन्दी में बातें की और चलते समय 'सलाम' किया! लंदन में अभी 'प्रणाम' नहीं पहुँचा है!

होटल में आये, खाना खाया। ओमप्रकाश और एकबाल मिलने आये। एक कम्युनिस्ट, एक सोशलिस्ट—बेनीपुरी तुम भी एक अजीब विन्दु हो, जहाँ तरह-तरह की रेखायें मिलती हैं।

ढाई बजे हमने होटल छोड़ा, साढ़े तीन बजे हमारी गाड़ी लंदन से छूटी!

विलायत की रेल पर चढ़ने का यह पहला मौका रहा। ज़रा इस रेल को देखिये!

रेल के भीतर पहुँचते ही आपको मालूम होगा कि किसी सजे-सजाये घर में पहुँच गये। सीटें क्या हैं, गद्देदार शोफे हैं। एक पाँत में तीन की जगह। बीचमें बाँहीं की तरह बना दिये गये हैं, जिससे एक-एक आदमी एक-एक सीट पर मौज से बैठ सकें। गद्दे रंगीन हैं—बड़े ही नेत्र-रंजक छींट के। पीठ की ओर भी गद्दे लगे हैं। बड़े सामान तो ब्रेकवान में रखे जाते हैं, छोटे सामानों के लिए ऊपर रेलिंग-सी लगी है।

शौचादि के लिए जो कमरा है, वहाँ शीशे आदि सजे-सजाये हैं। ज्यों ही आप भीतर घुसे, बाहर आप से आप लिख जायगा—"Engajed"! ज्यों ही निकलिए, फिर Vacant लिख जायगा!

सम्पूर्ण ट्रेन में यहाँ से वहाँ चले जाइये। ट्रेन की एक तरफ लम्बा बरामदा-सा बना हुआ है। कहीं भीड़-भाड़ नहीं, कहीं धक्कमधुक्की नहीं।

हम सरकारी मेहमान हैं, फर्स्ट क्लास में जा रहे हैं। हमारे दो डब्बों में लिखा है—भारतीय और सिलोनी प्रतिनिधियों के लिए सुरक्षित। क्या यह शान फर्स्ट क्लास डब्बों की ही है। नहीं, ऐसी बात नहीं। यहाँ सेकेन्ड क्लास तो है नहीं—थर्ड क्लास के डब्बों की ओर गया। लेकिन वहाँ भी ऐसे ही सजे-सजाये डब्बे, इसी तरह की गद्दीदार सीटें। यहाँ का फर्स्ट क्लास उच्चवर्गीय लोगों के मानसिक सन्तोष का ही साधन है। सुविधा में कोई फर्क नहीं, और, फर्स्ट और थर्ड क्लास के किराये में भी सिर्फ डेढ़ गुने का अन्तर है!

चाय और रात का खाना रेल में ही हुआ। होटलों के ही ऐसा सजा-सजाया भोजन घर। वहाँ जाइये, खाइये, पीजिये। पीना यहाँ की जिन्दगी है। इस ठंडे मुल्क में भीतर कुछ गरमा-गरम पदार्थ उतारना ही पड़ता है।

यही नहीं, रेल के सारे डब्बे भी बिजली से गरम रखे जाते हैं।

जब लंदन काफी पीछे छूट गया, हमारी आँखों के सामने इँगलैंड की देहात नाना तरह के दृश्य दिखाने लगी। हरे-भरे खेत; पेड़ों की पाँत, चरागाहों में पशु, दूर पर चमकते हुए गाँव, आकाश में बादल, जब-तब झींसी-फुही—सारी दृश्यावली देखते ही तबीयत हरी-भरी हो गई!

अपने यहाँ की तरह के छोटे-छोटे खेत कहीं नहीं दिखे। जमीन नीची-ऊँची है, मध्य प्रदेश की तरह की, या छोटा नागपुर की तरह की। मिट्टी काली है। जुताई ज्यादातर ट्रैक्टर से ही होती है। जहाँ-तहाँ ट्रैक्टर चलते या खड़े दिखाई पड़े। कई जगह घोड़ों से भी जुताई या हेंगाई करते हुए देखा। छोटे खेतों में ट्रैक्टर कैसे चलते। बड़े-बड़े चकले। चलकों के बीच छोटी-छोटी झाड़ियों की कतारें। पंक्तियाँ सीधी। जहाँ-तहाँ बड़े-बड़े पेड़ भी। यहाँ के पेड़ जाड़े भर काले-कलूठे बने रहते हैं; बसंत आते ही ऐसे फूट पड़ते हैं कि क्या कहने? कई पेड़ों में पत्तों के साथ ही फूल भी निकल आते हैं गुच्छे के गुच्छे। देखिये, कहीं लाल, कहीं गुलाबी, कहीं उजले—कितने सुन्दर लगते हैं! खेतों के बीच उसके सुहाग सिन्दूर से ये लगते हैं!

खेतों में हरियाली ही हरियाली। कहीं अन्न के पौदे हैं। कहींघास उपजी है। गेहूँ बोया जा चुका है, हाँ, कहीं-कहीं बुआई शुरू ही हुई है। गहरी जुताई हुई है, मिट्टी खूब मिल गई है—यह यहाँ से ही दिखाई पड़ रहा है।

जहाँ के खेतों में घास उपजाई गई है, वहाँ प्रायः पशु भी चरते दिखाई दिये। पशु-सिर्फ गाय और घोड़े। गायें कितनी हृष्ट-पुष्ट! क्या किसी के पुट्ठे की हड्डी भी आप देख सकेंगे? एक अपने देश की गायें हैं, एक ये गायें हैं! हम गाय को माता मानते हैं; किन्तु उन्हें रखते कैसे हैं? नतीजा यह है कि किसी शहर में आप सच्चा दूध पा सकेंगे? और, यहाँ तो लंदन में भी जितना दूध चाहिये, पीजिये। घर-घर दूध पहुँचाने की व्यवस्था! बोतल में बंद उस उजले पेय को देख कर ही पीने को तबीयत मचल जायगी! इफरात दूध क्यों न मिले—जब दूध की जननी को इतनी खातिरदारी से रखा जाता है!

गायें प्रायः चितकबरी—कत्थी रंग पर या काले रंग पर उजले-उजले धब्बे ! छोटी-छोटी सींग । कोई चर रही है, कोई शान से सिर उठा कर देख रही है, कोई बैठ कर पागुर कर रही है ।

जो घोड़े चरते दिखाई देते हैं, वे भी बड़े पुष्ट ! तभी तो लोहे के हल को खींचते हैं ।

गाँव दूर-दूर पर हैं । उनके पक्के उजले घर यहाँ से चमक रहे हैं । इच्छा है, किसी एक गाँव में एक दिन के लिए जाऊँ और वहाँ का ग्रामीण जीवन देखूँ ।

आकाश के बादलों को देख कर एक ओर मेघदूत का "आषाढ़स्य प्रथम दिवसे" याद आ रहा है, दूसरी ओर अपने बिहार के सूखे का स्मरण हो रहा है । यहाँ इन्द्रदेव इस तरह छाये हुए हैं; वहाँ उनके दर्शन भी दुर्लभ हो रहे हैं । यहाँ के लोग इस साल वर्षा से तबाह हैं, वहाँ हमारी आँखें आकाश की ओर देखते-देखते पथरा रही हैं । अभी यार्क में स्थानीय अखबार खरीदा । उससे पता चला कि वर्षा के कारण बाढ़ आ गई है, बड़ी बाढ़ । फसलें बर्बाद हो रही हैं ।

बगल में जो एक जगह नदी देखी, वह काफी उमड़ती हुई दिखी थी । नहरों में भी पानी लबालब दिखाई पड़ा !

अँग्रेज अपने भोजन के लिए दूसरे देशों की कृपा पर आश्रित हैं । इधर उनका प्रयत्न है कि अपने देश से ही काफी अन्न उपजा लें । इसलिए, जहाँ भी थोड़ी-बहुत जमीन उन्हें मिलती है, उसे, जोतने में लगे हुए हैं । रेल की सड़कों की बगल की जमीनें भी जुती हुई हैं । जहाँ-तहाँ जङ्गल दिखाई पड़े, तो उनके निकट तक की जमीन हल के नीचे आ गई दिखी । किन्तु एक बात । अन्न उपजाने के जोश में जङ्गलों को काटने या चरागाहों को उजाड़ने की गलती अंग्रेज नहीं कर रहे हैं । जलावन के लिए जङ्गल चाहिये ही और ढोरों के लिए चारागाह भी रखना ही है ।

हाँ, पंछी बहुत कम दिखाई पड़े। मैंने मि० सेग्पुल्स से पूछा भी। वह कहते हैं, पंछी तो कम नहीं है। अब धीरे-धीरे दिखाई पड़ने लगेंगे। कहीं-कहीं कौवे दीखे, जो बड़े भद्दे लगते थे। अपने देश के कौवों के पंखों में जो एक चमक होती है, वह यहाँ कहाँ? मुर्गियों को पालना तो यहाँ एक व्यवसाय ही बन गया है। कई जगह उनके झुण्ड चरते दिखाई पड़े, कई जगह उनके दरबों की पाँतें दिखाई पड़ीं। जब आकाश में इस तरह बादल घिरे हों, बगलों की पांत उड़ती नजर न आवे, तो आकाश कैसा सूना मालूम पड़ सकता है, कल्पना कीजिये!

लगभग दस बजे रात में हम डरहम पहुँचे। १२॥ बजने जा रहा है। अब डरहम के बारे में कल।

मई ८, ५१
डरहम, न्यू कैसल

उत्तर आइये और ठण्डक बढ़ी—यहाँ भी यही हाल है। रात में जब ओढ़ने के नीचे गया, हाथ पैर ठण्डा होने लगा। स्लीपिंग गाउन को पैर से लपेट कर सोया। गरम पानी का जो थैला कम्बल के नीचे था, उसे रात भर कलेजे से चिपकाये रहा।

भोर में नींद टूटी, तो चिड़ियें चहचह कर रही थीं। देखा, सारे घर में सुनहली धूप छाई हुई है! बड़ा प्रसन्न हुआ कि इस आनन्दी वातावरण में घूमने-फिरने, देखने सुनने में अच्छा रहेगा।

किन्तु इंगलैंड के मौसम क्या विश्वास? छन में धूप, छन में छाया। छाया तक रहे, तो खैरियत। देखते देखते झिर-झिर कर पानी बरसने लगता है। आज दिन भर हम जाड़े के मारे परेशान रहे—वर्षा तो वर्षा; ठण्डी हवा के वैसे झोंके जो हड्डी तक को हिला दें!

जलपान के बाद हम डरहम की कौंसिल आफ सोशल सर्विस के दफ्तर में गये। स्लाउ की कम्यूनिटी सेंटर के भवन का विस्तार आश्चर्य में डालता है। इस कौंसिल के कार्यक्षेत्र का विस्तार अचम्भे में डाल देता है। इसके संचालक ने बड़े फख्र के साथ कहा, ब्रिटेन की यह सबसे बड़ी गैरसरकारी संस्था है!

डरहम इङ्गलैंड के उत्तरी हिस्से में है। वेल्स का दक्षिणी हिस्सा और इङ्गलैंड का उत्तरी हिस्सा पिछड़े हुए भूखण्ड में गिने जाते हैं। किन्तु प्राचीन काल से ही डरहम अपनी शान रखता है। इसकी यूनिवर्सिटी बहुत पुरानी है, इसका गिरिजाघर इङ्गलैंड के गिरिजाघरों में प्राचीनतम स्थान रखता है, इसकी आबादी इङ्गलैंड में सबसे घनी आबादियों में गिनी जाती है और डरहम का कोयला संसार के उत्तमोत्तम कोयले से मुकाबला करता है।

डरहम कौंटी लगभग २५ मील लम्बी और इतनी ही चौड़ी है। इस सोशल सर्विस कौंसिल की शाखायें इस कौंटी के गाँव-गाँव में फैली हुई हैं। इस संस्था को राजनीति से कोई सरोकार नहीं। इस तरफ प्रसिद्ध है कि जहाँ राजनीति होगी, वहाँ घूँसेबाज़ी लाज़िमी है। डरहम मजदूर दल का अखाड़ा है। अतः यहाँ की राजनीति बड़ी उग्र है। इसलिए इस समाज-सेवी संस्था को राजनीति से पृथक रखा गया है। राजनीति सम्बन्धी सैद्धान्तिक बातें भी यहाँ वर्ज्य है। यह संस्था सिर्फ ऐसे काम करती है जिससे जनता की आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक शक्तियों का विकास हो—सेवा के कुछ ठोस काम किये जायँ, भले ही वे काम देखने में छोटे-से छोटे क्यों न हों।

इसका प्रारम्भ भी छोटे-छोटे कामों से हुआ था। १९३० की मन्दी के कारण इस हिस्से में बड़ी बेकारी फैल गई। १९३६ में कोयले की जो बड़ी हड़ताल हुई थी, उसने स्थिति बिगाड़ दी थी। गाँव-गाँव में बेकार बैठे लोगों का झुण्ड बढ़ता गया। हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने से क्या फायदा—कुछ सार्वजनिक काम ही क्यों न किया जाय? गाँव में जो खेलने का मैदान था, उसमें घुटने भर घास उग आई थी; जहाँ फूल खिलते थे वहाँ काँटे उग आये थे; कोई ऐसी जगह नहीं जहाँ शाम को बैठ कर कुछ गपशप किया जाय। एक गाँव के बेकार नौजवानों ने इस दिशा में काम शुरू किया; दूसरे गाँवों ने अनुकरण किया। "बेकारों का क्लब" के नाम से १९३७ में जो चीज़ शुरू हुई, वह आज इस तरह एक बड़ी संस्था बन गई है।

यह कौंसिल कौंटी भर में फैली हुई लगभग हज़ार संस्थाओं का संघबद्ध रूप है, जिनमें सवा सौ संस्थायें तो बड़ी प्रमुख हैं। ये संस्थायें कर्मक्षेत्र के लेहाज से बँटी हुई हैं, भूमि के लेहाज से नहीं। जैसे एक संस्था है जो औरतों में काम करती है, दूसरी नौजवानों में, तीसरी लड़कियों में, चौथी पेंसन पाये सैनिकों में, पाँचवीं थके-माँदे बूढ़ों में। कहीं कहीं बागवानी की,

मुर्गी पालने की, सिलाई की, संगीत की, नृत्य की अलग-अलग छोटे-बड़े कामों की अलग-अलग संस्थायें हैं। ऐसी सवा सौ संस्थायें हैं। एक हजार गाँवों में इनकी शाखायें हैं, इसके सदस्य हैं। महीने-दो महीने पर इनकी बैठकें हुआ करती हैं जिनमें अपने-अपने कार्यक्षेत्रों पर वे विचार करते हैं। ये सभी संस्थायें नाना नदियों के रूप में आकर इस सोशल सर्विस कौंसिल रूपी समुद्र में मिलती हैं।

डरहम में कौंसिल की शानदार इमारत है जिसके निर्माण में २५ हजार पाउण्ड लगे हैं। इसके स्टाफ में साठ-सत्तर आदमी काम करते हैं। एक वर्ष में इसका ५ हजार पाउण्ड का खर्च है। इस रकम में आधी यहाँ की कौंटी-कौंसिल देती है; एक हजार पाउण्ड सरकार देती है और डेढ़ हजार पाउण्ड चन्दे से आता है। सभी संस्थायें अपने-अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र हैं और अपने आय-व्यय का स्वयं प्रबन्ध करती हैं। हर गाँव में एक सार्वजनिक भवन हो, जहाँ वहाँ की संस्थाओं का दफ्तर रहे और जहाँ आमोद-प्रमोद के सभी साधन जुटे हों, कौंसिल इस दिशा में बड़े जोरों से प्रबन्ध कर रही है और उसे पूरी सफलता मिल रही है।

संस्थायें बनाने और चलाने की कला अँगरेजों की नस-नस में है। हम संस्थायें बनाते तो हैं, किन्तु ज्यों ही संस्था बनी नहीं कि झगड़े शुरू हो गये, वातावरण दूषित हो गया, संस्थायें भी गईं। इस संस्था में एक ऐसी संस्था भी सम्बद्ध हुई है जो १८८३ में बनी थी! कितनी पुरानी संस्था!

इंगलैंड-भर में ऐसी बड़ी-बड़ी संस्थाओं की संख्या लगभग दो सौ है। इन संस्थाओं को लेकर "नैशनल कौंसिल आफ सोशल सर्विस" की स्थापना की गई है। इंगलैण्ड के राजा इसके संरक्षक हैं। एक लाख पाउण्ड सालाना इसका बजट है। इसके पास सवा पाँच लाख पाउण्ड का कोष है। इसके द्वारा समाज-सेवा सम्बन्धी सैकड़ों पुस्तक-पुस्तिकाओं के प्रकाशन के साथ दो त्रैमासिक पत्रिका भी निकलती है—(१) सोशल सर्विस (२) दि विलेज! दूसरी पत्रिका सिर्फ गाँव की समस्याओं पर ही लेख छापती है।

वहाँ से लौटते समय हम एक 'पब' में गये। वहाँ एक बूढ़े सज्जन थे, जो बड़ी देर तक हमें मजदूर पार्टी की त्रुटियों को समझाते रहे। मुझे तो कुढ़न हो रही थी और मित्र आनन्द ले रहे थे।

खा-पी कर हम 'न्यू कैसल' गये। वहाँ जाने पर पता चला कि विधान द्वारा प्रवर्तित हेल्थ सर्विस क्या चीज़ है। आज इंगलैंड का एक भी आदमी ऐसा नहीं है, जो बिना दवादारू के मर जाय। डाक्टर मुफ्त, दवायें मुफ्त। सिर्फ आपको खबर भर कर देना है, डाक्टर का पहुँचना लाज़िमी है।

बच्चों की ओर इस देश में कितना ध्यान है। बच्चों की शिक्षा और स्वास्थ्य की पूरी जिम्मेवारी सरकार ने ले ली है। क्यों न हो, किसी देश के भविष्य का दारमदार तो बच्चों पर ही होता है। पन्द्रह वर्ष की उम्र तक उनकी पढ़ाई का जिम्मा तो सरकार ने ले ही लिया है, जिसकी एक झलक हमें स्लाउ में मिली थी। न्यू कैसल में हमने बच्चों के स्वास्थ्य-सम्बन्धी प्रबन्ध का दिग्दर्शन किया।

न्यू कैसल की आबादी लगभग तीन लाख है—पटना की आबादी के आसपास समझिये। इसमें १८ शिशु-कल्याण और मातृत्व के केन्द्र हैं। ज्यों ही माता गर्भवती होती है, धाइयाँ उनके घर जाकर उन्हें सलाह देने लगती हैं। डाक्टर भी देखभाल कर आते हैं। माता के लिए उचित भोजन और दवा का भी, आवश्यकता होने पर, प्रबन्ध कर दिया जाता है। आसानी से बच्चा पैदा होने के लिए घर पर भी धाइयाँ भेज दी जाती हैं और जो चाहें वे मातायें अस्पताल में भी आ सकती हैं। बच्चा होने पर उसके शरीर की पूरी जाँच की जाती है और जिन तत्वों की कमी उसके शरीर में पाई जाती है, उसके लिए दवा का प्रबन्ध किया जाता है। हर माता और उसके शिशु के लिए खास दूध का प्रबन्ध है। जमुआ का छूना, कुकुर खाँसी, दाँत का निकलना, छूत की बीमारियों का होना—इन सबके लिए विशेष प्रबन्ध है। जब लड़के स्कूल जाने लगते हैं, तो

वहाँ बराबर डाक्टर जाता और उनके स्वास्थ्य की जाँच करता है। इस शहर भर में सात अस्पताल सिर्फ ऐसे हैं, जहाँ स्कूल में जानेवाले लड़कों का ही इलाज होता है। हमने एक ऐसे अस्पताल को देखा भी। उसके दरवाजे पर ही बच्चों की कई पत्रिकायें टेबल पर रखी हुई थीं, जिन्हें चिकित्सा के लिए आये हुए बच्चे बड़े चाव से पढ़ रहे थे। छूत की बीमारियों का, हड्डी टूटने का, दाँत निकालने या बनाने का, आँख कान का, अलग-अलग विभाग देखा!

जब हम डरहम से न्यू कैसल जा रहे थे, बीच का दृश्य देख कर झरिया से धनबाद का रास्ता याद आ गया। उसी तरह दोनों ओर कोयला की खानें—कोयला निकालने के लिए घिरनियाँ; कोयला ढोने के लिए बिजली के तार; जहाँ-तहाँ चिमनियाँ। मोटरों और ट्रकों की वैसे ही भरमार। हाँ, रास्ते में मजदूरों के लिए जो बस्तियाँ देखीं; काश अपने यहाँ के बाबुओं को भी वैसा घर नसीब होता। खान के मजदूरों की यहाँ बड़ी कदर है। अभी उस दिन 'डेली हेरल्ड' में एक सम्पादकीय लेख देखा—"दो आदमी"। बड़ी उत्सुकता से पढ़ा। ऊपर एटली साहब के स्वास्थ्य-लाभ पर प्रसन्नता प्रगट की गई थी। उत्सुकता हो रही थी कि अब दूसरा आदमी कौन आता है? एटली साहब की प्रशस्ति के बाद खान-मजदूर की यशोगाथा गाई गई थी! एटली साहब ने कहा था, खान-मजदूर कुछ घंटे अधिक काम करके देश को जलावन के अकाल से बचावें! खान-मजदूरों ने उनकी बात पूरी कर दी थी! ऊपर एटली साहब की तसवीर थी; नीचे एक खान-मजदूर की!

यह हमारे लिए दुर्भाग्य की बात रही कि हमारी इस यात्रा में खान देखने या खान-मजदूरों से मिलने का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया।

आज की डायरी तब तक समाप्त नहीं कर सकता, जब तक यहाँ की स्त्रियों के बारे में कुछ नहीं लिखूँ। यहाँ की स्त्रियों के बारे में अपने देश में बड़ी भ्रान्त धारणा है। लोग समझते हैं, इंगलैंड की स्त्रियाँ उच्छृङ्खल

होती हैं, दुराचारिणी होती हैं, विलासिनी होती हैं ! किन्तु, यहाँ उन्हें देख कर उनके प्रति असीम श्रद्धा का उदय होता है। हमारे ऋषियों ने स्त्रियों को जो अर्धाङ्गिनी कहा है, वह यहीं चरितार्थ होता है। गृहस्थी का आधा बोझ वही ढोती हैं ! इतनी कार्यशील होती हैं कि देख कर आश्चर्य होता है। सड़कों पर आप औरतों को तेजी से दनादन बढ़ते पायँगे। उनमें छोकड़ियाँ भी हैं, अधेड़ भी, बुढ़िया भी। किसी के पैर में लचक नहीं। बुढ़ियाँ भी दौड़ कर गाड़ियाँ पकड़ती हैं, सड़कें पार करती हैं। हाथों में सामान का भारी गट्ठर लिये हुए उनका दनादन बढ़ना हैरत में डाल देता है। आफिसों में क्लर्क का, टाइपिस्ट का काम वे ही करती हैं। दुकानों पर सौदे वे ही बेंचती हैं। हमारी मोटरें वे ही चला रही हैं। हरे रंग का चुस्त कोट, बालों को छोटा कर उसे ऊपर की ओर सम्भाले हुई, अपने देश के वालंटियरों के ढंग की टोपी, हाथ में चमड़े का दस्ताना, स्टीयरिंग ह्वील पर उनकी कलाइयाँ नाच रही हैं और वे आपसे गप्प भी करती जाती हैं ! किन्तु गप्प में अपनी ड्यूटी नहीं भूलतीं—नहीं तो कितनी गाड़ियाँ चूर हो जायँ। देखिये, एक गाड़ी का पहिया पंचर हो गया। झट नीचे जाकर डट गईं और तुरत ठीकठाक कर फिर गाड़ी ले उड़ी !

बड़े घर में भी नौकर नहीं रहते। घर के सारे काम वे ही करती हैं, हाँ, पुरुष भी उसमें हाथ बँटाते हैं। लोगों ने कह रखा था, गाड़ी में जब औरतें आ जायँ, तो खड़ा होकर उन्हें जगह देनी चाहिये। किन्तु अब की नई नारियाँ इसे अपना अपमान समझती हैं ! आप उनपर दया मत दिखाइये, उनके पैर काफी मजबूत हैं।

पुलिस में भी स्त्रियों के दस्ते हैं। मि० सेम्पुल्स कह रहे थे; वे बड़ी जबर्दस्त होती हैं; कुश्ती जानती हैं, बड़े-बड़े जवानों को भी गिरा सकती हैं !

कारखानों में भी औरतों की बड़ी संख्या काम करती है। बहुत से काम हैं, जिनके लिए स्त्रियाँ ही रखी जाती हैं। बुनाई के काम में तो उनकी मनोपली जैसी है।

९–५–५१

टीम वैली : अपाहिजों की पाठशाला

भोर से ही बूँदाबूँदी हो रही थी, किन्तु जलपान कर हम टीम वैली के लिए रवाना हुए। बड़ा ही मनोरम दृश्य था। लगता था हम छोटा-नागपुर की पहाड़ियों से गुज़र रहे हैं—वैसी ही पहाड़ियाँ, वैसी ही झाड़ियाँ। हाँ, फर्क यह और बड़ा—कि जहाँ छोटा नागपुर का प्रान्त उजाड़ लगता है, वहाँ यहाँ तराइयों में जहाँ-तहाँ बड़ी-बड़ी और साफ़-सुथरी बस्तियाँ दिखाई पड़ती थीं। सड़कों का क्या कहना—मोटर पर ज़रा भी शरीर नहीं हिलता था।

हम टीम वैली पहुँचे। इस वैली की बड़ी मनोरम कहानी है। १९३० के बाद इस क्षेत्र में बेकारी फैली। काम करने योग्य हट्ठे-कट्ठे बेकार लोगों की संख्या ढाई लाख थी। इन लोगों को काम में किस तरह लगाया जाय, इस पर सोच-विचार कर मिनिस्टरी आफ लेबर ने इस वैली में कुछ कारखाने खोलने का विचार किया। मिनिस्टरी की प्रेरणा से एक कम्पनी खुली जो यहाँ फैक्टरियाँ बनाने लगी। कम्पनी सिर्फ कारखानों के घर बना देती और सस्ते भाड़े पर दे देती थी। धीरे-धीरे कई कारखाने यहीं खुले और धड़ल्ले से काम शुरू हुआ।

जब लेबर सरकार आई, उसने तय किया कि देश में हम किसी व्यक्ति को बेकार नहीं रहने देंगे। बेकारी दूर करने के लिए नये उद्योग-धन्धे चाहिये। इसमें प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने सारे देश में छः स्थान चुने, जिन्हें विकास क्षेत्र---Development Area—के नाम से पुकारने लगी। अनुभवों से यह भी देखा गया, खास कर टीम वैली के अनुभवों से कि छिटफुट उद्योग धन्धे खोलने के बनिस्बत एक जगह पर



ग्रामर स्कूल

अधिक उद्योग-धन्धों को चलाना मजदूर और पूँजी दोनों के लिए फायदे का होता है। अतः उसने सारे देश में छः स्थान चुन लिये। इनमें दो स्थान स्काटलैंड में हैं; तीन स्थान इंगलैंड में हैं और एक स्थान वेल्स में। इसके लिए उसने १९४५ में एक कानून भी बनाया—Distribution of Industries Act. इस कानून के बाद छिटफुट से कारखाने नहीं बनाये जा सकते।

टीम वैली में जो कम्पनी बनी थी, सरकार ने उसे ले लिया और उसके विकास के लिए एक करोड़ २० लाख पाउण्ड सरकारी खजाने से दिया। तब से आज तक यहाँ पर १५६ फैक्टरियाँ बन चुकी हैं। इन फैक्टरियों में ४५००० मजदूर काम करते हैं जिनमें ६० सैकड़े स्त्रियाँ हैं। इन फैक्टरियों में काम करने वाले मजदूरों की निपुणता बढ़ी है, उत्पादन बढ़ा है। सिर्फ उनके वेतन में प्रतिवर्ष एक करोड़ पाउण्ड की वृद्धि हुई है। काम कितनी शीघ्रता से होता है, इसका एक किस्सा बताया गया। मशीन बनाने के लिए एक कारखाने को ठीका मिला। खरीददार ने कहा कि १३ महीने के अन्दर मुझे यह मशीन चाहिए, आप कितने दिनों के अन्दर दे सकेंगे। मैनेजर ने कहा, १२ सप्ताह में। उसे आश्चर्य हुआ, किन्तु सबसे बड़ा आश्चर्य उसे तब हुआ, जब ७ सप्ताह में ही उसे मशीन तैयार मिल गई।

यहाँ निकट ही कोयला है; इसलिए चीज़ सस्ती बन पाती है। मशीन के पुर्जे और जहाज बनाने का काम यहाँ बड़े पैमाने पर होता है। कपड़े और ऊन की मिलें भी यहाँ चालू हुई हैं। लंकाशायर के कपड़े के उद्योग को भी यह चुनौती दे रहा है। यहाँ का ऊनी माल तो सबसे अच्छा बनता है। हमें ऊनी माल बनाने का एक कारखाना दिखलाया गया। इस कारखाने को १९३९ में ही एक जर्मन ने खोला था, जिसे नाज़ियों ने निकाल दिया था। पहले छोटे पैमाने से काम शुरू किया गया, किन्तु अब कारखाना बहुत बड़ा हो गया है। हमने ऊनी कपड़े और कालीन बनाते देखा। कारखाने में ज्यादातर औरतें काम करती हैं। क्या मशीन की दुनियाँ

है—थान के थान किस तरह झटपट तैयार होता जाता है। थान तैयार होने पर उसे जाँच-घर में भेज दिया जाता है। वहाँ मशीन के द्वारा ही पसार कर देख लिया जाता है। फिर जहाँ ज़रा भी कसर रहती है, उसे तुरत मरम्मत कर दिया जाता है। फिर पैकिंग रूम में भेज दिया जाता है। नाप-नाप कर थान बनाये जाते; फिर उन्हें कागज में लपेट कर पैक किया जाता है।

मशीन बनाने के एक छोटे-से कारखाने में भी हम गये। बड़े-बड़े पुर्जे दूसरे कारखाने से ढल कर आते हैं। छोटे पुर्जे, जिनकी संख्या ही अधिक होती है, यहाँ ढाले जाते हैं और फिर उन्हें फिट किया जाता है। एक पाँत में शुरू में आपने ढाँचा देखा, ढाँचे में क्रमशः पुर्जे जुटते गये और अन्त में देखिये यह चाकलेट बनाने की मशीन तैयार हो गई जिसमें सिर्फ चीनी, रंग और कागज रख दिया जाता है और चाकलेट की गोलियाँ निकलती जाती हैं!

सरकार फैक्टरियाँ बना देती है, कौंटी-कौंसिल मजदूरों के घर बनवा देती है। देखिये ये घर—कत्तारों में। लाल ईंट के पक्के मकान; ऊपर लाल-लाल खपड़ैल! इस हरीभरी पहाड़ियों में वे कैसे सुन्दर दीख रहे हैं। यहाँ जो मजदूरों के लिए सुलभ है, काश, हमारे देश में मध्यश्रेणी के लोगों को वैसे मकान मिलते!

फैक्टरी बनाकर सरकार २१ वर्ष के ठीके पर कम्पनियों को दे देती है। उसमें वे अपनी मशीनें बैठाते और कारखाने चलाते हैं। शुरू के पाँच वर्षों तक उन्हें कम किराया देना पड़ता है। टीम वैली के अधिकारी कह रहे थे, उन्हें आशा है, तीस साल के अन्दर वे सरकार को ३॥ सैकड़े सूद के साथ सारे रुपये वापस कर देंगे!

बार-बार दामोदर वैली की याद आती थी। क्या यह सम्भव नहीं है कि वहाँ भी ऐसी योजना बनाई जाय? तब बिहार की पूरी कायापलट हो जा सकती है!

लौट कर हम लोगों ने एक रेस्तराँ में खाना खाया। इन्फौरमेशन वालों का कहना था कि हमने इसमें इसलिए खाना रखा है कि आप देखिये, मध्यवित्त के लोग यहाँ क्या खाते हैं ? किन्तु हम तो हिज-मेजेस्टी के मेहमान थे। हमारे कुछ साथियों को यहाँ का खाना अच्छा नहीं लगा।

उसके बाद हम एक अजीब संस्था को देखने गये। यहाँ अपाहिज बने लोगों को उद्योग-धन्धा सिखाया जाता है। किसी का हाथ कटा, किसी का पैर कटा; कोई बहरा, कोई लूँजा। किसी को मृगी आती है, किसी को थाइसिस हो गया है, किसी को लकवा मार गया है। ऐसे लोगों में से जो काम सीख कर अपनी जीविका चलाना चाहते हैं, यहाँ उनको शिक्षा दी जाती है। घड़ी मरम्मत करने, जूते बनाने, टाइप राइटर की मरम्मत करने, बागबानी करने, क्लर्क और टाइपिस्ट बनने, सिलाई करने आदि की शिक्षा यहाँ दी जाती है। इस संस्था की स्थापना १९४३ में कुछ पादरियों ने की। अब तक सात-आठ सौ ऐसे लोग यहाँ से शिक्षा पाकर निकल चुके हैं। शिक्षा ही नहीं दी जाती है, उनके लिए काम भी खोज दिया जाता है। इस साल ११७ आदमी शिक्षा पा रहे हैं। शिक्षार्थियों को यहीं रखा जाता है। उनके रहने के लिए ऐसा अच्छा प्रबन्ध है, जैसा अपने यहाँ के होस्टलों में भी प्रबन्ध नहीं। कुछ लोग स्वयं आते हैं, कुछ को सरकार का मजदूर विभाग भेजता है। हर ऐसे शिक्षार्थी पर सरकार इस संस्था को प्रति महीना ४।। पौंड (सत्तर रुपये) देती है। जब हम निरीक्षण कर रहे थे, मजदूर-विभाग के एक इन्स्पेक्टर से भी भेंट हुई, जो यहाँ के एक विभाग के शिक्षक से बातें कर रहे थे। इन्स्पेक्टर समय-समय पर आकर देखते हैं कि काम कैसा हो रहा है।

इसके सुपरिन्टेन्डेन्ट एक ऐसे सज्जन हैं, जो भारत (कैम्पबेलपुर) में रह चुके हैं। उस बुड्ढे की फुर्ती और उत्साह देखने ही लायक। हम दंग थे! इन सात-आठ वर्षों में यह संस्था ७०० से ऊपर ऐसे आदमियों को

शिक्षित कर जीविका में लगा चुकी है ! याद रखिये, यह अनाथालय नहीं है; शिक्षण-केन्द्र है। यहाँ उसे ही लिया जाता है, जो शिक्षा पाना चाहता है। जो काम नहीं करना चाहते, या काम सीखने में ढिलाई करते हैं, उनके लिए यह जगह नहीं। घड़ी बनाने के विभाग में ऐसे लोग थे, जो लोग साधारण कुर्सियों पर बैठ भी नहीं सकते। उनके लिए खास कुर्सियाँ बनाई गई हैं और जब वह जाने लगेंगे, उन्हें अपनी-अपनी कुर्सी दे दी जायगी। टाइप राइटर की मरम्मत करना सीखने के पहले उसके लिए औजार बनाना भी सिखा दिया जाता है। ये औजार भी उन्हें दे दिये जाते हैं !

सारे देश में ऐसी चार संस्थायें हैं। संस्था का मकान बड़ा ही सुन्दर और सुसज्जित है। हमारे यहाँ के किसी रईस को भी यह सजावट कहाँ मिलेगी ! फूलों से तो अंग्रेज जाति को न-जाने कितना प्रेम है। चारों ओर फूल ही फूल तो हैं ही; कमरों में गमले लगे थे जिनके फूलों का सौन्दर्य बरबस मन को मोह लेता था। शीशे के घर में तापमान को ठीक रख कर टमाटो और फूल उपजाते देख कर अँग्रेजों के पुरुषार्थ पर ईर्षा हुई।

यहाँ से न्यूकैसेल गये। न्यूकैसेल टाइन नदी पर बसा है और समुद्र-तट से ८ मील दूर पर है—यों तो न्यूकैसेल से समुद्र तट तक आबादी ही आबादी है। यहाँ पहले रोमनों ने एक किला बनाया था; फिर जब ऐंग्लो सैक्सन आये, तो उन्होंने भी इसके महत्व को समझा। विजयी विलियम के लड़के रॉबर्ट करथूज ने यहाँ एक नया किला १०८० ई० में बनाया और तभी से इसका नाम 'न्यू कैसेल' पड़ा। न्यूकैसल उद्योग-धन्धों के लिए प्रसिद्ध है और ज्ञान-विज्ञान के लिए भी। यहाँ का "किंग-कालेज" बहुत ही नामी है। कृषि, इंजनीयरिंग और डाक्टरी की पढ़ाई यहाँ बहुत अच्छी होती है। दिमागी सरजरी के लिए तो यह संसार-भर में एक ही संस्था है। देश-देश से लड़के यहाँ पढ़ने आते हैं—टर्की, मिस्र, मध्यपूर्व और भारत के लड़के यहाँ बहुत हैं।

न्यू कैसेल में ब्रिटिश कौंसिल की एक शाखा है, जहाँ हमें भारतीय विद्यार्थियों से मिलना था। अभी देर थी, अतः हमने समुद्र-तट देख लेना उचित समझा। समुद्र-तट तक बस्तियाँ ही बस्तियाँ हैं। टाइन के मुहाने पर बन्दरगाह है। हम समुद्र के किनारे थोड़ी देर तक घूमते रहे। समुद्र में पाँच-छः जहाज आ जा रहे थे। बड़ी-बड़ी तरंगें उठ रही थीं। हवा में ऐसी ठंडक थी कि हड्डी तक छिद रही थी। समुद्र के किनारे-किनारे बड़ी अच्छी सड़क बना दी गई है। उसपर मोटरें दौड़ रही थीं और मानव की युगल-मूर्त्तियाँ—बाँह में बाँह डाले, हँसतीं, मुस्कुरातीं !

ब्रिटिश कौंसिल में सात-आठ विद्यार्थी मिले, उनमें से चार तो बिहार के ही थे। पांडे, सिन्हा, वर्मा के अतिरिक्त सर चन्द्रेश्वर के लड़के श्री अखिलेश्वर भी थे। पांडे यहाँ के भारतीय विद्यार्थियों के संघ के सभापति हैं और सिन्हा उसके मंत्री। बिहार के लड़के बाहर जाकर क्या कमाल करते हैं, काश, हमारे बिहार के लोग जान पाते !

इन बच्चों से मिलकर कितनी प्रसन्नता हुई ! ये बच्चे हमें देख कर कितने प्रसन्न हुए। इसी प्रसन्नता को लिये लगभग ग्यारह बजे रात में डरहम आया और बिहार की प्रतिभा को मन ही मन प्रणाम करता हुआ सो गया।

हाँ, ब्रिटिश कौंसिल से डरहम आते समय बीच में न्यू कैसल के सबसे बड़े अखबार के दफ्तर में गया। यहाँ से चार अखबार निकलते हैं—(१) न्यू कैसेल जरनल (भोर में) (२) इवनिंग क्रौनिकल (शाम को) (३) 'सन' नामका एक साप्ताहिक रविवार को और एक और साप्ताहिक, जिसका नाम भूल रहा हूँ। इस दफ्तर का सारा काम न्यू हेरल्ड के ढंग पर ही होता है, हाँ, छोटे पैमाने में। यहाँ हमलोगों की तस्वीर ली गई और जाते समय उसके प्रिंट हर आदमी को दे दिया गया !

मई, १०।५१

डरहम, स्टौकटन, चूड़ी का टुकड़ा!

बूँदाबूँदी हो ही रही थी, किन्तु तैयार होकर ९॥ बजे स्टौकटन के लिए रवाना हो गया! रास्ते का दृश्य मनोरम था। वही छोटानागपुर वाला दृश्य। खेतों में अंकुर के लेते हुए गेहूँ के पीले पत्ते नेत्रों को आनन्द देते थे। चरागाहों में भेड़ें चर रही थीं। अलग से देखने पर वे बड़े-बड़े भूरे सूअर ऐसे लगते थे। लम्बे-लम्बे बालों से ढँके; मोटे-ताजे! पशुओं को दुबला-पतला रखना तो यहाँ जैसे पाप है।

स्टौकटन टीज नदी पर बसा हुआ है। वह टीज का कछार कई बातों पर गर्व करता है। रेल का प्रथम आविष्कार यहीं हुआ। स्टिफेन्सन की पहली रेल गाड़ी १८२५ में स्टोकटन से डारलिंगटन तक दौड़ी थी। उसकी नं० १ रेलगाड़ी अब तक डारलिंगटन में सुरक्षित है। दियासलाई का आविष्कार पहले-पहल यहीं १८२७ में हुआ। लोहे और ईस्पात के उद्योग-धन्धे के लिए वह प्रसिद्ध है। बड़े-बड़े पुल यहीं से बन कर संसार भर में जाते रहे हैं। रसायनिक पदार्थों के उत्पादन में ही यह बेजोड़ है। सिमेंट, खाद, प्लास्टिक आदि के कारखानों का भी जनक रहा है।

हम यहाँ पहुँच कर सबसे पहले यहाँ की सबसे प्रसिद्ध संस्था "पावर गैस कारपोरेशन" को देखने गये। यही वह संस्था है जो सिन्दरी के लिए खाद बनाने का कारखाना तैयार कर रही है। यह बहुत पुरानी संस्था है, १८७६ में इसकी स्थापना हुई थी। यह संस्था संसार-भर को कारखाने के पुर्जे बनाकर भेजती है। रूस में भी इसने कारखाने भेजे हैं और अमेरिका में भी। पावर गैस के कारखाने बनाने में इसने ऐसी विशेषता प्राप्त कर ली है कि कोई दूसरा अभी तक मुकाबले में नहीं आया।

इसके चेयरमैन एक बूढ़े सज्जन हैं, किन्तु कितनी फुर्ती। उनके चार-पाँच सहकारी और थे। बड़े फख्र से कहा—हममें से यहाँ एक आदमी भी ऐसा नहीं है जो संसार को एकाध बार छान नहीं आया हो। वह स्वयं कई बार भारत गये हैं। उनके एक सहकारी इसी मार्च में भारत से लौटे हैं।

सिंदरी कारखाने को लेकर ही बहुत देर तक बातें होती रहीं। उसकी तैयारी में बहुत देर लग गई और रुपये भी अधिक खर्च हुए—हमने भारत में होने वाली इस आलोचना का उत्तर उनसे माँगा। बड़ी सफाई से समझाने की चेष्टा की। स्कीम १९४५ में ही तैयार हो गई थी, किंतु हमें आर्डर मिला १९४८ में। पहले जो आर्डर हम ले चुके थे, उसे पूरा करके देना था। खर्च इसलिये बढ़ गया कि चीजों का दाम तब से बहुत बढ़ गया है। तोभी कारखाना तो हमने पूरा तैयार कर दिया है, हाँ, उत्पादन में जरूर देर हो रही है। सामने पड़े पाँच फाइलों को टेबुल पर बिछाते हुए बताया कि किसी कारखाने के लिए पाँच सीढ़ियाँ होती हैं—(१) घर (२) कारखाना (३) कच्चा माल (४) उसके चलाने वाले (५) उत्पादन। घर तैयार हो चुके हैं, कारखाना भी बिठलाया जा चुका है। आपके पास वहाँ कच्चा माल इतना है कि आपका कारखाना संसार में खाद का सबसे बड़ा कारखाना बन जा सकता है—एशिया में तो इतनी बड़ी चीज़ आज भी नहीं है। लेकिन दिक्कत है निपुण लोगों की। पच्चीस-तीस आदमी अभी तक आपको मिले हैं; आदमियों को सिखलाना पड़ेगा। ज्यों ही वे सीख जायेंगे—उत्पादन होने लगेगा।

आप क्यों नहीं विशेषज्ञ देते हैं—इस प्रश्न का उत्तर उन्होंने दिया कि हमारे पास फालतू आदमी नहीं हैं। हाँ, हम सिखला दे सकते हैं। हमारे कारखाने में आज भी ६–७ भारतीय काम सीख रहे हैं; उनके नाम भी उन्होंने हमें दिये। उनमें से दो से कारखाने में हमारी भेंट भी हुई। वे दोनों दक्षिण के थे।

यहाँ हमें प्रयोगशाला दिखलाई गई; फिर हमें एक ऐसी कमीटी के सामने ले जाया गया, जिसमें कारखाने के प्रतिनिधि और मजदूरों के प्रतिनिधि बैठते और पिछली त्रुटियों तथा आगे के कामों पर विचार करते हैं। मजदूरों के तीन प्रतिनिधि थे। किसी बात पर झगड़ा होने पर उसे कैसे तय किया जाता है, इसी पर, हमने उनसे प्रश्न किये। हमें बताया गया कि किस तरह पचीस वर्षों से वे लोग मिलजुल पर काम कर रहे हैं और इसके अन्दर कभी ऐसा प्रश्न नहीं आया जो आपस में ही तय नहीं कर लिया गया। हाँ, यदि आपस में तय नहीं हो, तो कानून के अनुसार पंचायत में पेश किया जा सकता है। उस पंचायत में एक मजदूर के और एक कारखाने के प्रतिनिधि तथा एक कोई वकील—ये तीन आदमी होते हैं। बहुमत से तय किया जाता है। हममें से एक आदमी ने पूछा, यदि उस फैसले को नहीं मान कर मजदूर हड़ताल कर दें, तो उन्हें सज़ा मिलती है या नहीं। इस प्रश्न पर मजदूरों के प्रतिनिधियों के चेहरे तमतमा गये, किंतु मालिकों के प्रतिनिधियों में से एक ने झट जवाब दिया—कानूनन उन्हें सज़ा मिल सकती है, लेकिन माफ कीजिये, हजारों आदमी को जेल में नहीं डाला जा सकता! उन्होंने फख़ के साथ कहा, पिछले बीस वर्षों में हमारे यहाँ सिर्फ एक दिन की हड़ताल हुई है और वह भी एक ग़लतफ़हमी के चलते! कारखाना और मजदूर में पूरा सहयोग और भाईचारा नहीं हो, तो उद्योग चल नहीं सकता—उसने बड़ा ज़ोर देकर कहा!

फिर हमें कारखाना दिखलाया गया। छोटे-बड़े पुर्जों की ढलाई किस तरह होती है और किस बड़े पैमाने पर होती है, यह देखकर विस्मय-विमुग्ध हो रहे थे। कारखाने में कुछ औरतें भी काम कर रही थीं, यह और भी विस्मय की बात थी!

स्टौकटन से लौट कर हम न्यू कैसल गये, जहाँ उन विद्यार्थियों ने हमें विशेष रूप से बुलाया था। पांडे, वर्मा और सिन्हा साथ ही एक मकान लेकर रहते और स्वयं खाना बनाते हैं। मुर्गी का भारतीय ढंग का बना

गोश्त और पराठा खाकर बड़ी तृप्ति हुई। अखिलेश्वर भी आये थे, जो एक होटल में रहते हैं। उनके एक अन्य भारतीय मित्र भी आये थे, जो बम्बई के रहने वाले हैं और यहाँ डाक्टरी सीख कर अब एक अस्पताल में काम कर रहे हैं। कुल मिला कर साल में उन्हें ९०० पाउण्ड मिलता है, जिसका मतलब लगभग बारह हजार रुपये होते हैं। डाक्टर साहब की अपनी कार है, उसी कार पर हमें डरहम पहुँचा गये।

शाम को हमें एक डिनर दिया गया था, जिसमें शहर के कई प्रमुख लोग आये थे। जिनमें सबसे महत्वपूर्ण और दिलचस्प आदमी थे मि० साम वाटसन! वाटसन साहब इंगलैंड के खान-मजदूरों के राष्ट्रीय संघ के प्रधान मंत्री हैं। बड़े फख्र के साथ उन्होंने कहा, चार पुस्त से मैं खान-मजदूर हूँ और मेरा जन्म खान के अन्दर हुआ था। यों तो वह सारे इंगलैंड की संस्था के प्रधानमंत्री हैं, किंतु उन्हें अपने डरहम पर नाज़ है, जहाँ की काउन्टी कौंसिल में १३० में १०६ मजदूर प्रतिनिधि हैं और मजदूर-सरकार में उनके तीन मिनिस्टर हैं। जितने लोग आये थे, सबको दुरपेंटते थे। उनके चेहरे से, बात से, इशारे से वर्ग-चेतना चुई पड़ती थी। जब उन्हें मालूम हुआ कि मैं भारत की सोशलिस्ट पार्टी का आदमी हूँ, तो उन्होंने कहा, यहाँ क्या देख रहे हैं, खानों में आकर देखिये, हमने क्या कमाल किया है। जब मैंने बताया कि हम तो उनके कार्यक्रम से बँधे हैं, तब उन्होंने कहा—हूँ, वे आपको कारखाने दिखलाते हैं, किन्तु उनके जीवन से वंचित रखना चाहते हैं जो इन कारखानों के प्राण हैं! वे उत्पादन तो दिखलाते हैं, लेकिन आन्दोलन से अलग-अलग रखना चाहते हैं। जब वह बोल रहे थे, उनका इशारा यहाँ के सिविल सर्वेंट पर था, जो मजदूर-सरकार के अन्दर काम करते हुए भी पुरानी मनोवृत्ति को नहीं छोड़ सकते हैं।

लंच के पहले बातें हुईं, लंच के समय बातें होती रहीं और बाद में भी बड़ी देर तक बातचीत चलती रही। अधिकांशतः मि० वाटसन ही बोलते रहे! जब कोई बोलता था, झट उबल पड़ते थे, आपका भी जन्म

खान में हुआ रहता, तो मेरी ही तरह सोचते ! उन्हें अपने मजदूर होने पर फख्र था ! मुझ से कहा—जो काम हम सौ बरस में कर सके हैं, उसे आप दस वर्ष में कैसे कर लेंगे ? आप ऊपर से चीड़ें बनाने की कोशिश में हैं, हमने नीचे से चीड़ें बनाई हैं। फिर यह भी कहा, आप लोगों पर सारी एशिया का भविष्य है। अपनी जनसंख्या को ही देखिये—४० करोड़ आदमी ! एशिया क्या संसार का नेतृत्व आपके हाथ में आयगा ही—हाँ, धीरज से काम करते ही चलिये ! किसी ने कहा, आज कैन्टरबरी के डीन यहाँ के विश्वविद्यालय में लेक्चर देने आये हैं। यह सुनते ही जैसे भड़क पड़े—वह डीन नहीं है, डीन की खाल ओढ़कर वह रूस का एजेंट है ! फिर रूस की तानाशाही की निन्दा करने लगे और अमेरिका की तारीफ ! अमेरिका की तारीफ सुनकर हममें कुछ लोग उबल पड़े और बताया कि जब हम भूखों मर रहे हैं, वह सौदा कर रहा है ! इसके बाद ब्योरे से उन्होंने बताया कि अमेरिका नहीं होता, तो सारा योरप भूखों मर गया होता। मारशल प्लैन की बड़ी तारीफ की और इसपर दुख प्रगट किया कि उसे भारत के साथ इस समय ऐसा बर्ताव नहीं करना चाहिये। लेकिन इसके लिए भी उन्होंने कैफीयत दी !

सोने के पहले डायरी लिखना शुरू किया। पान तो यहाँ मिलते नहीं, सुपारी निकाली। जब सुपारी निकाल रहा था, उसमें से चूड़ी का एक टुकड़ा निकल आया ! निस्सन्देह यह रानी के हाथ की चूड़ी का टुकड़ा है। जब से मैं जाने को तैयार हुआ, सुपारी काट कर तैयार कर रही थी। मालूम होता है, जल्दी-जल्दी में एक चूड़ी टूट गई, किन्तु उसने ध्यान भी नहीं दिया। किन्तु इस चूड़ी के टुकड़े ने मेरा सारा ध्यान रानी पर, फिर अपने सारे परिवार पर केन्द्रित कर दिया। जब घर से पाँच हजार मील दूर हूँ, तब अपने घर का महत्व मालूम हो रहा है। अहा, मैं कितना बड़ा सौभाग्यशाली हूँ ! रानी ऐसी पत्नी मुझे मिली है ! अपनी जवानी देकर उसने मुझे जवान रखा है। उस दिन दिल्ली में लेडी नी को आश्चर्य हुआ था कि

मैं पचास वर्ष का हूँ; अभी उस दिन लंदन में उस फ्रेंच लड़की ने कहा था—आपकी उम्र ३५ और चालीस के बीच हो सकती है! मुझे दस-पन्द्रह वर्ष छोटा करके अपने को जिसने दस-पन्द्रह वर्ष अधिक बूढ़ी बना लिया है। उसकी स्मृति में मेरा सिर क्यों नहीं झुक जाय? रानी, तुम धन्य हो! और रानी के आस-पास जो परिवार बना है—तीन बेटे और एक बेटी का सौभाग्यशाली पिता हूँ और दो पोतों का परम सौभाग्यशाली पितामह! थोड़े में ही सब कुछ प्राप्य है। घर की इस सुखद स्मृति के साथ निद्रा-देवी की गोद में जा गिरा! किसी की गोद में गिरना ही चाहिये; रानी न सही, निद्रा ही सही।

११ मई, १९५१

सहयोग-समितिः एडिनबरा की ओर

भोर में नीचे जलपान को गया, तो वहाँ डीन आफ कन्टरबरी से भेंट हुई। हमें देख कर स्वयं अपना परिचय दिया और हमारे ही टेबल पर आकर जलपान करने लगे। चेहरा काफी भव्य—बातचीत में काफी प्रभावशाली। मेरे यहाँ गांधी और नेहरू भी आये थे, इस बात पर उन्हें गर्व। जब मैंने बताया कि उनके 'सोवियत सिक्स्थ आफ दी वर्ल्ड' के आधार पर मैंने 'लाल रूस' लिखा था, तो उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई और फिर तो रूस की बड़ाई और अमेरिका की निन्दा करने लगे। तर्क पर तर्क देकर सिद्ध करने लगे कि अमेरिका युद्ध चाहता है क्योंकि उसकी अर्थ-नीति के लिए युद्ध आवश्यक है और रूस शान्ति चाहता है क्योंकि उसकी अर्थनीति का विकास संसार में शान्ति के लिए ही हो रहा है। रूस ने फिर अपनी चारो ओर 'आइरनी घेरा' क्यों डाल रखा है, मैंने पूछा। कहने लगे, ऐसी बात नहीं है; मैं तो कई बार गया हूँ। वह भूल जाते हैं कि सब कोई उनके ऐसा रूस का प्रशंसक नहीं है। मैंने कहा कि रूस का सबसे बड़ा दुश्मन रूस ही है—क्योंकि यदि वह तटस्थ व्यक्ति को अपने यहाँ जाने देता, तो वे उसके प्रशंसक बनकर रहते, यदि वहाँ की हालत ऐसी है, जैसी आप बता रहे हैं। एक व्यक्ति के पूछने पर उन्होंने कहा कि रूस का सामाजिक निर्माण ईसा के सही उपदेशों पर ही हो रहा है, इसलिए पादरी होते हुए भी मैं उसके पक्ष में हूँ।

हमारे भ्रमण-कार्यक्रम में सहयोग-समितियों के लिए पहले जगह नहीं थी। हमारे आग्रह पर आज उसके लिए जगह बनाई गई थी। अतः हमें न्यू कैसल के सी० डब्लू० एस० के भवन में ले जाया गया। सी० डब्लू० एस० कोआपरेटिव होलसेल सुसाइटी का संक्षिप्त रूप है।

अंग्रेजों की सभी संस्थाओं की तरह यह संस्था भी बहुत पुरानी है और उनका दावा है कि सहयोग की इतनी बड़ी संस्था संसार में कहीं नहीं है। १८६४ में इस संस्था का जन्म हुआ। जब छोटी-छोटी सहयोग समितियों का विकास होने लगा, तो सोचा गया कि एक ऐसी संस्था बनाई जाय जो इन सहयोग समितियों को सस्ती कीमत पर माल मुहैया करे। मैनचेस्टर के दो छोटे कमरों में सिर्फ दो आदमी और एक बच्चे को लेकर इसका काम शुरू किया गया। आज इस संस्था के सदस्यों की संख्या एक करोड़ पाँच लाख है। इंगलैंड की जनसंख्या लगभग पाँच करोड़ है—इसका मतलब यह हुआ कि हर पाँच आदमी में एक आदमी इस संस्था का सदस्य है। यदि सिर्फ बालिग़ आदमियों को लिया जाय, तो हर तीन बालिग़ आदमी में एक आदमी इसका सदस्य अवश्य है।

यह संस्था इंगलैंड, वेल्स और उत्तरी आयरलैंड में काम करती है। लंदन, न्यू कैसल, ब्रिस्टल, कारडिफ और नार्थम्पटन में इसकी अन्तर्देशीय Regional offices कार्यालय हैं। न्यू कैसल के इसके कार्यालय की इमारत देख कर ही दंग रह जाना पड़ता है।

इसका संचालन २८ डायरेक्टरों के एक बोर्ड द्वारा होता है। डायरेक्टरों का चुनाव सहयोग समितियाँ करती हैं। बोर्ड की मीटिंग हर सप्ताह मैनचेस्टर, लंदन और न्यू कैसल में क्रमशः होती है। तीन महीनों पर सभी सुसाइटियों के प्रतिनिधियों की साधारण बैठक होती है। हर छः महीने पर मुनाफा बाँटा जाता है। साल में एक बार आय-व्यय का ब्यौरा प्रकाशित होता है। एक सदस्य दो सौ पाउण्ड से अधिक का शेयर नहीं खरीद सकता। इस सुसाइटी द्वारा दो सौ कारखानों, मिलों और फार्मों का संचालन होता है। कपड़े, जूते, फरनीचर, बर्तन आदि उपभोक्ता की चीज़ों के उत्पादन पर ही विशेष ध्यान दिया जाता है। संसार में कोई ऐसी व्यापारी संस्था नहीं है, जो इतनी चीज़ों का एक साथ ही उत्पादन करे। इस संस्था द्वारा साल में ३२ करोड़ पाउण्ड या कारबार होता है। सुसाइटी का अपना बैंक

है, जो दो अरब पाउण्ड का लेन-देन करता है। इसकी अपनी बीमा कम्पनी भी है, जिसके पास ८ करोड़ की निश्चित सम्पत्ति है! खेती के २४, दूध के २७, आँटे के ८, कपड़े के ८, सिलाई के १९, जूते के ८, फर्नीचर के १३, छपाई के ६—यों ही भिन्न-भिन्न के उद्योगों के कारखाने, हैं जिनकी संख्या दो सौ है और जिनमें लगभग तीस हजार आदमी काम करते हैं। सोसाइटी के उद्योग भारत, लंका आदि विदेशों में भी हैं। सुसाइटी के अपने जहाज भी हैं।

हमें सुसाइटी द्वारा संचालित सिलाई के एक कारखाने को दिखाया गया। इसमें लगभग पाँच सौ आदमी काम करते हैं, जिनमें औरतें ही औरतें हैं। आर्डर लिखने से लेकर कपड़े तैयार करने तक के सारे कामों का बँटवारा है—कहीं कपड़ा नापा जा रहा है, कहीं उसपर निशान लगाया जा रहा है, कहीं कटाई हो रही है। कटाई की ऐसी मशीनें हैं, जो छः सात इंच की तह को एक ही साथ सफाई से ऐसे काटती हैं कि जैसे छुरे से मक्खन काटा जा रहा हो। सिलाई के काम भी बँटे हैं। कोट की सिलाई ८० हिस्सों में बँटी है, और पैंट की सिलाई ३८ हिस्सों में। दोनों तरफ मशीनें लिये लड़कियाँ बैठी हैं, बीच में लगातार खिसकने वाले टोकड़े लगे हैं, झट टोकड़े से निकाल कर अपना काम कर दिया और उसे दूसरे टोकड़े में डाल दिया। जरा भी गफलत हुई कि टोकड़ा आगे खिसक गया और सबके हाथ रुक गये! हर घंटे इस तरह २२ कोट और ४५ पैंट तैयार होते हैं। सप्ताह में ४४ घंटे काम करना होता है, जिसके लिए ४ पाउण्ड ८ शिलिंग मुशाहरा मिलता है। यदि इससे ज्यादा काम हुआ, तो बोनस मिलता है जो सबमें बँट जाता है! सुसाइटी की ओर से होटल चलाया जाता है, जहाँ कर्मचारियों को बहुत सस्ता भोजन मिलता है।

देखिये यहाँ से वहाँ लड़कियों की कतारें! अधिकांश युवतियाँ हैं—मुग्धा से लेकर प्रौढ़ा तक! सबकी होठों पर हँसी; आपस में कुछ बुदबुदा भी रही हैं, किन्तु हाथ नहीं रुकते! और यह क्या? सबके सामने अपने

कपड़े टांगने की जो अलगनी है, उसमें प्रायः ही फोटो टँगे हैं ! ज़्यादा फोटो फिल्म के सितारों का है ! हाथ काम में लगे हैं, किन्तु दिमाग़ ! और ज़रा इनके बालों की ओर तो देखिये। अपने ढँग से बालों को सँवारने के लिए तरह-तरह की कमानियाँ लगवा रखी हैं ! ओह, औरत ! तू सौन्दर्य के लिए कितनी भूखी है।

मुसाहटी के भोजनागार में ही खाने गया। देखा, चम्मच, तश्तरी, ऐश ट्रे सब पर C.W.S. की छाप। सिगरेट पर भी C.WS. ये सारी चीजें इनके अपने कारखाने की ढली या बनी हुई हैं !

चार बजे न्यूकैसल से इडिनबरा के लिए रवाना हुआ। थके-माँदे और लोग तो सो गये; लेकिन मेरी आँखें तो दृश्यों को देखने में पागल हो रही थीं। आज चमचमाती धूप थी। प्राकृत सौन्दर्य को वह और भी चमका रही थी। नये उगे गेहूँ के पीले-पीले अंकुरों वाले खेत। जहाँ अंकुर छोटे, या जहाँ तुरत की जुताई, वहाँ कौओं के झुण्ड। कहीं-कहीं कबूतरों के झुण्ड भी उड़ते दीख पड़ते। हरी-हरी घास वाले खेतों में झुण्ड के झुण्ड भेड़ें चर रहीं—इतनी मोटी कि अलग से बनैले सूअर-सी दिखाई पड़ती हैं ! गायें भी, वैसी ही मोटी, मस्त ! खेतों में कहीं-कहीं ट्रैक्टर चल रहे। एक जगह भेड़ के एक बड़े झुण्ड को चरवाहा चरा रहा—उसका कुत्ता भेड़ों को भटकने से रोक रहा ! चरवाहे की सूरत-सकल देख कर बर्न्स की कविता याद आ गई !

थोड़ी देर के बाद हमारी गाड़ी समुद्र के किनारे से जाने लगी ! रेलिंग पकड़ कर मैं विस्मय-विमुग्ध तरंगों की उछालें देख रहा था। बीच में टीज-माउथ नामक एक नगर मिला।[1] समूचा शहर लाल ईंट और लाल खपरैलों के कारण लाल-लाल दीख रहा था। टीज नदी पर तीन पुल देखे ! उसके मुहाने पर बहुत-सी समुद्री चिड़ियाँ किलोलें कर रही थीं। एक खेत में बहुत-से खरगोश एक साथ दिखाई पड़े ! अरे, हम सचमुच अब स्काटलैंड में हैं न ? लोगों की पोशाक में भी परिवर्तन परिलक्षित हो रहा है।

और, यह है एडिनबरा। स्टेशन पर कुमारी शा हमारी अभ्यर्थना को खड़ी थीं। इस शहर की प्रचार-अफसर आप ही हैं।

कितना बड़ा स्टेशन; स्टेशन से अपने होटल में। कैसी शान है इस होटल की। शाम को जब नीचे उतरे, लौंज में एक सज्जन मिलने आये। यह मि० रसेल थे, जो पहले बिहार के चीफ सेक्रेटरी थे। मुझे पहले से जानते थे। बिहार के एक-एक आदमी के बारे में पूछने लगे। श्री बाबू, अनुग्रह बाबू आदि के साथ स्वामीजी की चर्चा भी छेड़ी और प्रो० बारी की हत्या पर बड़ा अफसोस प्रगट किया। "जनता" के बारे में भी पूछताछ की। बिहार के और अखबारों के बारे में भी पूछा—खासकर मुरली बाबू की चर्चा की। सर चन्द्रेश्वर और रजनधारी बाबू को भी याद कर रहे थे।

रसेल साहब की बात से अँगरेजों का एक गुण और भी खुला। यह जाति भूलती नहीं है। हर व्यक्ति की विशेषता तक की उन्हें याद थी।

रसेल साहब के साथ ही खाना हुआ। यहाँ खाने के बारे में दो-शब्द कह देना अनुचित नहीं होगा।

सबसे पहली बात याद रखने की यह है कि यहाँ भोजन का अर्थ अन्न नहीं है और न पीने का अर्थ पानी है। भोजन के पहले, बातें करते हुए, कुछ पीया जाता है। बीयर सबसे सादा पेय है। तब लोग खाने के टेबल पर बैठते हैं। बाईं ओर बड़े आलू की तरह गोल-गोल छोटी-छोटी पाव-रोटी रख दी जाती है और मक्खन। पाव रोटी को तोड़ कर, छुरे से मक्खन मिला कर कुतरते जाइये। इतने ही में 'सूप' आ जायगी; सब्जियों की, या गोश्त की। उसे चम्मच से लेना शुरू कीजिये। देखिये, मुँह से आवाज़ न हो। फिर मुख्य खाना आता है—जिसमें गोश्त या मछली का अंश सबसे अधिक; साथ में कई तरह की सब्जियाँ। इन्हें छुरे और काँटे से खाइये—यहाँ हाथ से खाना मना है। हाँ, चम्मच से भी आप काम चला

सकते हैं ! खाने के बाद या तो पुडिंग; या ज़्यादातर फल और आइस-क्रीम। कितना भी जाड़ा हो, यहाँ लोग आइसक्रीम खाते हैं ! अन्त में काफी !

खाना चार बार होता है। भोर में ब्रेकफास्ट—सबसे पहले नारंगी या टमाटर का रस ; फिर अंडे या कुकुरमुत्ते या मछली उबाल कर या तल कर। फिर टोस्ट मक्खन और जाम। अन्त में चाय या काफी। शाम को सिर्फ चाय—किन्तु सवाल होगा हल्की या भारी ? हल्की चाय में बिस्कुट ; भारी चाय में केक और सैंडविच। रात का खाना दिन की तरह ही—कमसे कम बीयर से शुरू कीजिये और काफी पर समाप्त कीजिये। दिन का खाना लंच कहलाता है, रात का डिनर ! खाते समय सारी पोशाक पहन कर बैठना होता है। चम्मच, काँटा और छुरी पकड़ने के कायदे हैं और ये कई तरह के होते हैं—भिन्न-भिन्न भोजन के अनुसार ! किन्तु अब धीरे-धीरे फार्मेलिटी उठती जा रही है ! सफाई और शिष्टता का खयाल करते हुए आप जैसे भी खाइये !

साफ बात तो यह है कि अँगरेजों को फ़ुर्सत नहीं कि देखें आप किस तरह खा रहे हैं। यदि निर्द्वन्द्व हो कर गलती भी कीजिये, तो समझेंगे इन लोगों की यही चाल है। हाँ, खाते समय इधर-उधर जूठन गिराना, तेजी से मुँह चलाना या होठों में जूठन लगाये रहना ये बहुत गंदी चीज़ समझते हैं। यदि ओंठ के किसी कोने में जूठन लग जाय, तो नेपकिन से बीच में आप पोछ ले सकते हैं। नेपकिन वह कपड़ा या कागज है जो खाने के पहले टेबल पर या सजाकर ग्लास या तश्तरी में रखा रहता है। उसे आपको अपनी जांघों पर रख लेना है !

कपड़े के बारे में भी अब अँगरेज़ पुराने ढर्रे को छोड़ चुका है। आप फुलपैंट और बंद गले का कोट पहनिये, तो कोई हँसेगा नहीं। शेरवानी और फुलपैंट का मेल भी मजे में चल जाता है। यह पोशाक आपकी कदर ही बढ़ायगी। सूट पहनने में बड़ी झंझटें हैं—टाई बाँधना

ही एक कला है। अतः जिन्हें सूट की आदत नहीं, वे व्यर्थ में अपने को झंझट में नहीं डालें। बन्द गले का कोट यहाँ जोधपुर कोट कहलाता है और प्रिंस की पोशाक समझा जाता है। शेरवानी देखते ही आपको लोग भारतीय समझेंगे।

किले वाली पहाड़ी है। ज़रा स्ट्रीट से पार्क होते पहाड़ी तक नज़र तो दौड़ाइये। एक तो प्राकृतिक दृश्य—रंगविरंगे फूल; तुरत निकली पत्तियों और कलियों से लदे वृक्ष, मखमली घासें, खूबसूरती से निकाली गई पग-डण्डियाँ! फिर, ज़रा इनमें घूमने-फिरने वालों और वालियों को देखिये! हर युवक की बगल में युवती—जिसकी कमर में हाथ डाले वह इस तरह चिपका लगता है, मानों उसे सशरीर आत्मसात कर लेना चाहता हो। यही नहीं, वह देखिये, यहाँ-वहाँ घास पर, पहाड़ी पर क्या हो रहा है? युवक-युवतियाँ एक दूसरे से लिपटे पड़े हैं। यह छोटा-सा झुण्ड तो विचित्र है—तीन-चार युवक, तीन-चार युवतियाँ—उनमें से एक युवक किस तरह चित्त लेटा है और एक युवती किस तरह उसके कलेजे पर सिर धरे बेहोश-सी पड़ी है!

यहाँ प्रेम निर्द्वन्द्व है—निर्बन्ध है। हो सकता है, इस झुंड में उस युवती का भाई भी हो; किन्तु यह अभिन्न मिलन यहाँ इतना स्वाभाविक माना जाता है कि इसे कोई बुरा लेता नहीं है। यहाँ आलिंगन और चुम्बन का अर्थ रति नहीं है, यह बात हम हमेशा याद रखें!

कल शाम को जब टहलने निकला था, एक भवन पर पढ़ा था, यहाँ कला-प्रदर्शनी हो रही है। कला का यह जीवित रूप तो देख लिया, चित्रित रूप भी देखें! एडिनबरा में एक संस्था है—Royal Scottish Academy. स्काटलैंड के बड़े-बड़े साहित्यिक और कलाकार इसके सदस्य हैं—१४ सदस्यों में ८ को 'सर' की उपाधि प्राप्त है। इस संस्था की स्थापना १८२६ में हुई थी। इसके द्वारा हर वर्ष एक कला-प्रदर्शनी का आयोजन किया जाता है। यह कला-प्रदर्शनी उसकी १२५ वीं प्रदर्शनी है।

प्रदर्शनी के तीन विभाग हैं—(१) मूर्तिकला (२) चित्रकला और (३) स्थापत्य कला। प्रवेश-शुल्क देकर हमने भीतर प्रवेश किया।

मूर्तिकला के कक्ष में ८७ मूर्तियाँ रखी गई हैं। सामने ही एक युवक और युवती की आदमकद मूर्त्ति है। दोनों ही नंगे हैं। जहाँ यथार्थ कला है, वहाँ वासना कहाँ—इस मूर्त्ति को देखकर यह कथन सोलह आने सार्थक सिद्ध होता है। किसी फ्रेंच कला-कार की बनाई हुई है! अंगों का गठन देखने ही योग्य। सूचीपत्र में इस मूर्त्ति का मूल्य १५०० पाउण्ड लिखा हुआ है? इसी चित्रकार की दूसरी मूर्त्ति की कीमत २५०० पाउण्ड है! मूर्त्तियों के तरह-तरह के ढंग हैं। काँच की बनी यह मूर्त्ति देखिये, जिसके नीचे लिखा है—Homage To Poets. यह नारी-मूर्त्ति! अजीब कंकाल! क्या कवियों की अतृप्त कामना की ओर इशारा है?

चित्रकला के तैलचित्र विभाग में चर्चिल साहब का बनाया हुआ एक चित्र है। एक पुल का भाव-चित्र है। रंगों का ज़ोर देखने लायक है। बेन निकोलसन का Still life—निस्पन्द जीवन—इस विभाग का सबसे अधिक मूल्यवान चित्र है—४५० पाउण्ड उसका दाम है। बिलकुल नये ढंग की चित्रकारी है—अंडाकार शकलें—ज्यों-ज्यों ग़ौर से देखिये, इसकी निस्पन्दता स्पष्ट होती जाती है! २०० पाउण्ड का एक चित्र "घर की ओर" मुझे बहुत पसंद आया—बड़ा ही सजीव। एक किसान घोड़े पर घर लौट रहा है, दूसरे घोड़े की रस्सी उसके हाथ में है; संध्या का दृश्य; चेहरे पर थकावट के साथ ही घर पहुँचने की उत्सुकता! जल-चित्र और फोटोग्राफी के भी कुछ अच्छे नमूने थे। एक बच्चे का चित्र तो बेजोड़ था, उसपर पुरस्कार भी मिला था। मन में होता था, इसे ले चलूँ और 'चुन्नू-मुन्नू' के मुखपृष्ठ पर देदूँ। स्थापत्य कला में तरह-तरह के घरों के नमूने थे—एक छात्रावास के नमूने को देखकर तबीयत खुश हो गई! काश, अपने देश में भी हम ऐसे छात्रावास बना पाते!

ज्यों ही हम प्रदर्शनी से निकले, देखा हाइड पार्क की तरह यहाँ भी पार्क के किनारे व्याख्यान हो रहे हैं। एक जगह एक वृद्धा बोल रही थी—

उसके नीचे लिखा हुआ था—National Congress of Scotland हम उस ओर बढ़े। हमें देखते ही वह बुढ़िया बोलने लगी—वह देखिये, दो सज्जन आ रहे हैं। वे भारत के होंगे। हमारी ही तरह उनकी भी हालत थी। किन्तु वे आज आज़ाद हैं। हमें भी उन्हीं की तरह लड़कर आज़ादी लेनी है! हमने उस बुढ़िया से कुछ पुस्तिकायें भी खरीदीं! स्काटलैंड में आज़ादी की चर्चायें चल रही हैं। सदियों तक स्काटलैंड और इंगलैंड में लड़ाइयाँ चली हैं। एडिनबरा क़िले का चप्पा-चप्पा इसका गवाह है। स्काटलैंड वालों को खुश रखने के लिए बहुत कुछ किया गया है। इंग-लैंड का एक राजकुमार 'ड्यूक आफ एडिनबरा' कहलाता है। राजा स्वयं यहाँ आकर रहते भी हैं। स्काटलैंड की शिक्षा, स्वास्थ्य और कृषि-विभाग का संचालन यहीं से होता है। तो भी एक पिपासा तो लोगों में है ही।

शाम हो रही थी; किन्तु एडिनबरा देखने की हमारी पिपासा शान्त नहीं हुई थी। एक टैक्सी की और सारा शहर घूम आये। टैक्सीवाला काफी हुशियार था। नेलशन कालम की पहाड़ी पर ले जाकर उसने सारे शहर का एक दृश्य दिखलाया। फिर विश्वविद्यालय का क्षेत्र दिखलाया। यहाँ का विश्वविद्यालय १५८२ में बना। यहाँ का मेडिकल स्कूल संसार भर में नामी है, जहाँ भारत के विद्यार्थी भी प्रायः पढ़ने आते हैं। विश्व-विद्यालय के पुस्तकालय में चार लाख पुस्तकें हैं।

उसने अलग से ही वाटसन-कालेज दिखलाया, जो ब्रिटेन के पब्लिक स्कूलों में बहुत ही प्रसिद्ध है और जहाँ के लड़के, इटन के बाद, सबसे अधिक संख्या में ब्रिटेन के मिनिस्टर होते आये हैं।

अन्त में हमने उससे कहा कि वह हमें किसी मजदूर के घर ले चले। उसने कहा—तो, मेरे घर क्यों नहीं चलिये। हम उसके घर गये। जाते ही आँखें खुल-सी गईं। अरे, यहाँ के मजदूर भी इस तरह रहते हैं। उसने अपनी पत्नी को हमारा परिचय दिया। पत्नी ने घर के कमरे दिखलाये। एक कमरा था, जहाँ वह बैठी थी। सामने अँगीठी। तीन गद्दीदार कुर्सियाँ,

टेबल पर एक बड़ी घड़ी रखी और एक रेडियो बज रहा। एक घर में बाथ रूम। शेष दो घरों में एक-एक पलंग और बगल में बच्चे के लिए पालने। तीन बच्चे हैं इनके। एक बच्ची १४ साल की, जो सिनेमा देखने गई थी। दो बच्चे—चार और एक साल के—दोनों सो गये थे। बीच में इतने दिन...? पति ने जवाब दिया, लड़ाई-भर मैं युद्ध क्षेत्र में था न?

उसकी पत्नी की पोशाक और रहन-सहन देख कर क्या हमारे यहाँ की मध्य श्रेणी के बाबुओं की पत्नियों को भी ईर्ष्या नहीं हो सकती है? काफी सुन्दरी भी थी। राजनीति की बात चली, तो मजदूर-दल की सरकार की प्रशंसा करने लगी जिसने हर बच्चे के लिए दूध का प्रबन्ध कर रखा है—शाम-सुबह दूध के बोतल आपसे आप दरवाजे पर रख दिये जाते हैं। दिन का खाना तो बच्चे स्कूल में खाते ही हैं। एक टोरी ने हमसे कहा था कि मजदूरों का वेतन इतना अधिक बढ़ा दिया गया है कि वे अब आधे पैसे शराब में ही फूँक देते हैं। जब हमने इसकी चर्चा की, तो हमारे ड्राइवर ने गम्भीरता से कहा— हमें ४ पाउण्ड ८ शिलिंग सप्ताह में मिलते हैं। मैं हूँ मेरी बीबी है, तीन बच्चे हैं। आप ही सोचिये, हम कहाँ से शराब पी सकेंगे? हाँ, कुछ टिप मिल गया, तो थोड़ी मौज कर ली। क्या इन टोरियों से हमारा यह सुख भी नहीं देखा जाता? हमने उसकी पत्नी से पूछा—आप कुछ काम नहीं करतीं? उसने बड़ी सादगी से अपने बच्चों की ओर इशारा करते हुए कहा—करती हूँ, बच्चों को पिलाती हूँ, खाना बनाती हूँ और तो भी समय बचा तो कुछ बुनाई करती हूँ। उसकी अँगुलियाँ उस समय भी स्वेटर की जाली के ताने-बाने में लगी थीं।

शाम को होटल आये। खाना खाया, डायरी लिखी, सो गया।

१२ मई, ५१

पिट्लोचरी, डंडी

एडिनबरा अच्छी तरह नहीं देख सका, इसका कुछ दर्द लिये वहाँ से रवाना हुआ। मौसम अच्छा था। चारों ओर सुनहली धूप छाई थी। हमारी मोटरें नये दृश्यों को दिखलाती बढ़ रही थीं।

शहर के बाहर बहुत से नये मकान दीख पड़े। इस समय मजदूर-सरकार का मुख्यतः तीन बातों पर ध्यान है—(१) नये-नये कारखाने बनाओ जिसमें कोई बेकार नहीं रह जाय और दूसरे देशों में माल भेजा जाय (२) खेती को बढ़ाओ कि भोजन के लिए दूसरे देशों पर निर्भर नहीं रहना पड़े और (३) मजदूरों के लिए नये मकान बनवाओ। यहाँ की जलवायु ऐसी है कि हमारे मजदूर की तरह वे झोपड़े में या बाहर रह नहीं सकते। मकान चाहिये ही और जब मकान बने, तो बढ़िया क्यों न बने—जब उनकी ही सरकार है। छोटे-छोटे मकान—हर मकान के आगे-पीछे फुलवाड़ी। मकान लाल ईंट और खपरैल के—खपरैल नेपाली ढंग के। मकानों के डिजाइन बड़े अच्छे—अलग से वे खिलौने से लगते हैं।

कुछ मकान फैब्रिक के भी। किन्तु हमारी ड्राइवर कह रही है, ये मकान अच्छे नहीं होते। दिल्ली में भी तो इसका प्रयोग करके इसी नतीजे पर पहुँचा गया है।

यह हमारी ड्राइवर। यह स्काटलैंड की है। अभी युवती है। पति पाकिस्तानी फौज में है—पेशावर में। अगले साल लौटेगा वह। तब तक कमा कर खाती है और अपने माँ-बाप की भी परवरिश कर रही है। उसे भी अफसोस है कि उसके प्यारे शहर एडिनबरा को हम नहीं देख सके।

उसीसे पता चला, इस शहर में पाँच थियेटर हैं। सिनेमा की तो बात ही अलग !

थोड़ी ही देर में हम फोर्थ नदी के तट पर पहुँचे, जहाँ बहुत बड़ा पुल है। इस पुल को इंजीनियरिंग का एक कमाल ही माना जाता है। यह लड़की कह रही थी, बनाते समय कितनी जानें भी गईं—किन्तु प्रयत्न नहीं छोड़ा गया। पुल से सिर्फ रेलगाड़ी ही जा सकती है। हमें छोटे जहाज से इस नदी को पार करना पड़ा। हर आध घण्टे पर यह जहाज खुलता है। खुली छत का जहाज है जिसपर आसानी से पन्द्रह-बीस मोटरें चढ़ा ली जाती हैं।

हम लोग इस समय पिट्लोचरी जा रहे हैं, जहाँ जल-विद्युत का एक बहुत बड़ा प्रयोग चल रहा है। हमारे चारों ओर हरे-भरे खेत हैं। गेहूँ के बदले यहाँ जई ज्यादा बोई जाती है। स्काटलैंड की जई बहुत प्रसिद्ध है। जई के पीले-पीले छोटे-छोटे पौधे बड़े सुहावने लगते हैं। समूचा स्काटलैंड पहाड़ी प्रदेश है। देखिये, पहाड़ी के नीचे की ज़मीन से शुरू करके ऊपर वहाँ तक खेती कर दी गई है जहाँ तक मिट्टी मिल सकती है। लम्बे-लम्बे बड़े-बड़े खेत। इन्हें मेंड़ें नहीं बनानी पड़तीं, क्योंकि यहाँ वर्षा कभी मूसलधार नहीं होती। साल-भर भींसी-फुही। अतः ज़मीन के धँसने—एरोज़न—का प्रश्न ही नहीं उठता। फिर खेती करनी है ट्रैक्टर से—छोटे खेत किस काम के होते। हाँ, यहाँ खेतों में घोड़े भी अधिक दिखाई पड़ते हैं। स्काटलैंड के लोगों की तरह ही यहाँ के घोड़े बड़े हट्टे-कट्टे होते हैं।

भेड़ों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। स्काटलैंड की ऊन दुनिया में नामी है। भेड़ों की देह पर चार-पाँच इंच की ऊन यहाँ से ही दिखाई पड़ती है। ज्यादातर धूसर रंग की; किन्तु उसकी चमक और लहरान बताती है कि वह बड़ी मुलायम और कीमती होगी।

नीची-ऊँची ज़मीन; सड़कें पहाड़ियों की बगल-बगल टेढ़ी-मेढ़ी ! तो भी हमारी मोटर पचास मील की रफ्तार से भागी जा रही है।

ड्राइवर युवती मोटर चलाती हुई भी हमारी बातों को जवाब देती और नई-नई बातें बताती जाती है। हर बात पर उसका 'अहा–हा' कैसा अच्छा लगता है !

पिट्लोच्री हम लोग लगभग एक बजे पहुँचे। यहाँ के फिशर होटल में खाना खाया। इंगलैंड में होटल भी एक अजीब संस्था है। हर अच्छी जगह में होटल और होटल का रुआब क्या कहना ? उनके साजबाज के सामने दरबार भी झूठ। फिर हम सरकारी मेहमान हैं—हमें अच्छे ही होटल में तो ठहराया जाता है।

खाने के पहले जो मेनू आया, उसमें एक चीज़ लिखी थी, "खिजड़ी"। यह खिजड़ी क्या है—उत्सुकता हुई। मालूम हुआ, यह हमारी 'खिचड़ी' है, जो चावल में मछली मिला कर बनाई जाती है। भला, हम उसे क्यों छोड़ते ?

अपने देश की तीन चीज़ें यहाँ के भोजन में खूब घुलमिल गई हैं। 'चटनी', 'करी चिकन' और यह 'खिजड़ी' भी मिल ही गई। भूगोल की सीमायें ही नहीं टूट रही हैं, भोजन और रहन-सहन की सीमायें भी टूटती जा रही हैं और मैं कल्पना करता हूँ कि वह दिन दूर नहीं जब याता-यात के साधन और सुलभ हो जायँगे, लोगों को आपस में मिलने-जुलने का और भी अधिक अवसर मिलेगा; हृदय मिलेंगे, शरीर मिलेंगे। आपस में शादी-व्याह धड़ल्ले से चल पड़ेगा ! भारत का युवक शाम के हवाई जहाज से लंदन की ससुराल को चलेगा और दूसरी शाम को अपनी सालियों-सरहजों से चोंचलेबाजी करेगा ! यों ही भारतीय युवतियों का व्याह भी विदेशों में होगा। लोगोंका रक्त-सम्बन्ध इतना घना हो उठेगा कि तब कोई देश दूसरे देश पर एटम बम की बात सोच भी नहीं सकेगा क्योंकि वहाँ भी उसके प्रियजनों की संख्या बड़ी होगी !

खाने के बाद जल-विद्युत-कार्यालय के प्रतिनिधि ने हमें यहाँ की योजना के बारे में संक्षेप में बताया।

नार्थ स्काटलैंड पूरा पहाड़ी प्रदेश है। यहाँ बहुत-सी छोटी-छोटी नदियाँ हैं, जो बड़े वेग से बहती हैं। १८९६ ई० में ही एक उद्योगपति का ध्यान गया और उसने जल से विद्युत निकालने का प्रयोग प्रारम्भ किया। इस दिशा में इसका यह प्रयोग उस समय के संसार में अकेला था। पिछले युद्ध के ज़माने में इस ओर सरकार का भी ध्यान गया और उसने एक योजना बनाई। किन्तु उस योजना का विरोध इस पहाड़ी प्रदेश के लोगों ने किया। उनके तर्क यह थे—(१) इन नदियों को बाँधने से इस प्रदेश की प्राकृतिक शोभा नष्ट हो जायगी (२) इन नदियों में समुद्र की ओर से जो मछलियाँ आती हैं खास कर अति स्वादिष्ट मछली सैमन उनका आना-जाना रुक जाने से भोजन-पदार्थ में कमी होगी और (३) जल-विद्युत से सस्ती बिजली मिलने के कारण यहाँ के कोयले के उद्योग को क्षति पहुँचेगी। सरकार ने उनके विरोधों की जाँच के लिए तथा उनपर ध्यान रख कर एक सुधरी हुई योजना बनाने के लिए एक कमीटी बिठाई। उसी कमीटी की सिफारिश पर तय हुआ है कि इन नदियों का उपयोग बिजली के लिए अवश्य किया जाय इससे स्थानीय जनता को भी लाभ होगा। ३० वर्ष में १०२ बाँध तैयार किये जायँगे और उनसे इतनी बिजली निकलेगी कि सारे स्काटलैंड का सारा काम—खाना पकाने से लेकर कारखाना चलाने तक—निकल जायगा। जल-विद्युत की इस योजना के संचालन के लिए एक बोर्ड बना दिया गया है। बोर्ड को जो मुनाफ़ा होगा, वह सब स्थानीय जनता के हित में खर्च किया जायगा। हर बाँध पर ऐसी व्यवस्था कर दी गई है कि मछली को कोई नुकसान नहीं पहुँचे। योजना के बनाने और चलाने में स्काटलैंड के ही आदमी रखे जाते हैं; यही नहीं, कोशिश की जाती है कि सामान भी स्काटलैंड के ही लगाये जायँ।

१९४३ से इस योजना पर काम हो रहा है। अभी तक ५ बाँध तैयार

हो चुके हैं और उनसे बिजली इतनी निकल रही है कि एडिनबरा में भी सप्लाई की जा रही है। गाँव के लोग भी धीरे-धीरे बिजली की उपयोगिता समझने लगे हैं, अतः उनके यहाँ भी खासी खपत होती है। ३० और बाँध में हाथ लगे हैं। बड़ी मुस्तैदी और चुस्ती से सारा काम हो रहा है। हम लोगों ने इसके तीन बाँध देखे। सैमन-मछली के लिए जो उपाय किया गया है, वह तो अजीब है। एक घर में शीशे की खिड़की के निकट बैठा हुआ आदमी देखता रहता है कि सैमन कहाँ है और उसकी रफ्तार किस ओर की है, जो काफी बड़ी होती है, उसे फँसा लिया जाता है।

इस स्थान से पर्थ होते हुए हम डंडी आये। शाम हो रही थी। सामान होटल में रखवा कर एक साथी को लेकर बाजार देखने निकला। डंडी भारत में जूट की मंडी होने के कारण मशहूर है। यह टे नदी के मुहाने पर बसा है। यहीं टे समुद्र से मिलती है, अतः उसकी धार बहुत चौड़ी है—समुद्र के मुहाने सी ही दीखती है। नदी के तट पर बन्दरगाहों की भरमार है। टे नदी पर ही वह पुल है, जिसे संसार का सबसे बड़ा पुल कहा जाता है। यों तो अब एक-दो दूसरे पुलों ने इसकी श्रेष्ठता पर दावा किया है।

यहाँ भी हाइडपार्क की तरह एक स्थान है। देखा, वहाँ भीड़ लगी हुई है। एक तरफ एक पादरी साहब धर्म-गीत गा रहे थे; दूसरी ओर एक कम्यूनिस्ट वक्ता धुआँधार बके जा रहा था। दोनों के श्रोताओं में भी आदान-प्रदान चल रहा था। कुछ आदमी छोर पर रहना या छोर को देखना पसन्द करते हैं। दोनों ही छोर है ही—फिर एक छोर का आदमी दूसरे छोर पर कूद पड़े, तो आश्चर्य क्या ?

आज एक दुखदाई घटना हो गई। हमारे दो साथियों में कहासुनी हो गई और वह भी मि० सैम्पुल के सामने ही। अभी तक जानबूझ कर अपने साथियों के बारे में विशेष नहीं लिखा। उनमें से कुछ की हरकत देखकर बड़ा दुःख होता है। हम छः आदमी, इस पर-पुर में भी, एक

होकर न रह सकते हैं, न बोल सकते हैं। सबसे बुरी बात तो यह है कि कुछ लोग यह दिखलाने को बेतरह व्यस्त रहते हैं कि हम सबसे योग्य हैं। यहाँ तक सुना है कि ऐसे लोग मि० सैम्पुल्स के सामने अपने लोगों की मखौल उड़ाते हैं।

कहाँ अँगरेजों का चरित देख रहा हूँ, कहाँ अपनी कमजोरियाँ देख रहा हूँ। न-जाने हमारे देश का उद्धार कितने दिनों में होगा। गुलामी गई, गुलाम-दिमाग़ी नहीं गई है!

---

१४ मई, ५१

डंडी, ग्लासगो

आज दिन भर सूर्य-देवता चमकते रहे। इंगलैंड में चमकता हुआ दिन एक वरदान है। यह मौसम ऐसा है, जिसमें काफी धूप और गरमी की आशा की जाती है। किन्तु इस वर्ष अजीब हालत रही है। इस साल का हेमन्त यहाँ बहुत बुरा रहा है। लोगों का कहना है—एक वृद्ध महाशय कह रहे थे—तीस वर्षों से ऐसा बुरा जाड़ा कभी नहीं पड़ा था। आठ महीनों से लगातार झींसी-फुही होती रही है! कुछ लोगों का कहना है, एटम के प्रयोग के कारण ऐसा हुआ है!

जलपान के बाद हमलोग डंडी का एक जूट-कारखाना देखने गये। उसके अध्यक्ष हमारे स्वागत को खड़े थे। यह कारखाना डंडी का सबसे पुराना कारखाना है। १८३२ में इसकी स्थापना हुई। इसके संस्थापक ने, जिनका चित्र कारखाने के आफिस में टँगा हुआ था, सिर्फ १२ आदमियों को लेकर इसका शुभारम्भ किया। डंडी से जो जहाज जाते थे, उनपर जूट आता था। इसका प्रयोग रस्से बनाने के काम में होता था। उस भले आदमी ने जब इसके रेशे देखे, तब उसके ध्यान में आया कि इससे बुनकर बोरे भी बनाये जा सकते हैं। उसने काम शुरू कर दिया और धीरे-धीरे काम इतना बढ़ा कि उसके माल संसार के कोने-कोने में जाने लगा।

जहाँ जूट की गाँठें रखी थीं, वहाँ से दिखलाना शुरू किया। फिर उसकी धूल झाड़ने से लेकर बुन-बुना कर माल तैयार होने की सारी क्रिया दिखलाई। बुनाई तो कपड़े की ही तरह होती है, उसमें कोई विशेष बात नहीं दिखी। किन्तु किस तरह पटुए को नाना मशीनों से ले जाकर अन्त में

उसे रेशम ऐसा बना डालते हैं—यह क्रिया तो सचमुच भौंचक में डालने वाली थी ! एक कल से दूसरी कल में किस तरह पाट के लच्छे नाचते जा रहे और बिना एक रेशा टूटे हुए वे नई-नई शकलें पकड़ते जाते थे !

इस कारखाने में अधिकतर स्त्रियाँ ही काम करती हैं। हाँ, जहाँ दर्जी वाले कारखाने में मुग्धा और प्रौढ़ायें अधिक थीं, वहाँ इस कारखाने में प्रौढ़ा और वृद्धाओं की ही भरमार थी। कारखाने में भर्ती होनेवाली औरतों की उँगुली, आँख और निपुणता की जाँच किस तरह वे करते हैं, यह भी अचम्भे में डालने वाला था।

दिन में ओवरसीज लीग की तरफ से भोज था। शहर के गण्यमान्य व्यक्ति पधारे थे। भोज के बाद हम ग्लासगो के लिए रवाना हुए।

जब मोटर पर चढ़ रहे थे मिस शा ने हमें अखबार दिया। उस अखबार में हमारे चित्र थे और हमारे बारे में समाचार था। समाचार में विशेषता यह थी कि मेरे बारे में उसमें खास चर्चा थी क्योंकि मैं शेरवानी पहने था ! यह चित्र जब हम कारखाना देख रहे थे, लिया गया था, और दो तीन घंटे के अन्दर यह छप कर बँट रहा था !

डंडी से ग्लासगो तक का प्राकृतिक वैभव भी अनूठा था। स्काटलैंड पहाड़ी प्रदेश है, पहाड़ी प्रदेश यों ही खूबसूरत होता है। किन्तु जब प्राकृतिक सौन्दर्य के साथ मानव का पुरुषार्थ का संयोग होता है, तो फिर क्या कहना ? जहाँ भी जोतनेवाली जमीन मिली, सारी की सारी जोत दी गई है। पहाड़ियों की तलहटी से लेकर उसकी चोटियों तक खेतियाँ हो रही हैं। जगह-जगह जंगल भी लगाये गये हैं ! एक ही तरह के कत्तार से लगे उन पेड़ों को देख कर बड़ा आनन्द आता था। रास्ते में पंछी भी अधिक दिखाई पड़े। भेंड़े और घोड़े भी जहाँ-तहाँ दिखे !

ब्रिटेन में कुल मिला कर ६ करोड़ एकड़ जमीन है, जिसमें ४ करोड़ ८० लाख एकड़ में खेती होती है ! किन्तु इसपर काम करते हैं सिर्फ १५ लाख किसान ही—जनसंख्या का अधिकांश तो उद्योगधंधे में

लगा है । अधिकांश खेतों का रकबा पाँच एकड़ से ऊपर है। खेती विशेषतः बड़े पैमाने पर की जाती है !

पिछली लड़ाई के पहले ब्रिटेन सिर्फ ३१ सैकड़े भोजन पैदा करता था; लड़ाई के दरम्यान उसे बढ़ा कर ३९ तक ले जाया गया ! मजदूर-सरकार ने १९४७ में खेती-सम्बन्धी नई नीति अख्तियार की, जिसके अनुसार वह १९५२ तक खेत की उपज को लड़ाई के पहले की अपेक्षा ड्योढ़ा बढ़ा देना चाहती है। इसके लिए वह किसानों को हर तरह की सहायता दे रही है—नये औजार, नई खाद, पूरी कीमत, जरूरत पड़ने पर कर्ज भी ! फिर खेती क्यों नहीं बढ़े। खेती के साथ दूध और गोश्त की पैदावार बढ़ाने के लिए भी हर तरह की सहायता वह कर रही है।

ग्लासगो के रास्ते में एक बड़ी मनोरम झील पड़ती है, जिसका नाम है लोक लोमंड। मिस शा की इच्छा हुई कि हमलोग उसे भी देख लें। और सचमुच, इस झील ने इस दिन को हमारे लिए बड़ा ही रोमांचकर बना दिया। संध्या हो रही थी, एक छोटी-सी मोटर-नाव लेकर हम झील देखने चले। झील के किनारे नावों की भरमार—तरह-तरह की—रंगीन, सादी, छोटी-बड़ी। हमारी नाव जब झील के बीच में गई, तरंगों पर वह झूले की मजा देने लगी। ऐसा रूमानी वातावरण हुआ कि मिस शा गुनगुनाने लगीं और मि० सैम्पुल्स ने एक प्रेम कथा मुझे सुना दी। एक युवक-युवती में प्रेम हुआ। दुनियाँ को प्रेम से न-जाने क्या चिढ़ है, लड़के को फाँसी की सजा हुई, लड़की को जेल की। इस झील के उस पार जो पहाड़ी है, उसी पर उस लड़के को फाँसी देने को ले चले। लड़के ने लड़की से कहा—"मैं ऊपर जा रहा हूँ, तुम नीचे जाओ। किन्तु जब तक तुम पहुँचोगी, देखोगी, मैं वहाँ पहुँच चुका हूँ।"

झील के किनारे इधर-उधर युवक युवतियों का झुंड घासों पर, झाड़ियों में घूम रहा। देखिये, वह लाल फ्राक ! न-जाने किसके कलेजे पर वह ज्वालामुखी धधक रही है और यह देखिये यह हट्टा-कट्टा नौजवान

न-जाने कौन-सी आग दिल में लिये नंगे बदन अकेले नाव उड़ाये जा रहा है !

इस स्थान पर सैलानी लोगों की आमद-रफ्त लगी ही रहती है। कई होटल हैं। उन्हीं में से एक में हमने रात का भोजन किया। भोजन के समय हमारी तीनों लड़की ड्राइवर भी साथ में बैठीं। इस देश में प्रजा-तंत्र है न ? यहाँ ड्राइवर को साथ में खिलाने में किसी को संकोच क्यों हो ? जब पीने की बारी आई, तीनों लड़कियों ने इन्कार किया और एक ने सिगरेट पी तो इस बुरी आदत पर अफसोस ज़ाहिर करती हुई। जो लोग विलायत की हर लड़की को फाहशा समझते हैं, काश वे आज होते।

पहाड़ियों और मैदानों को पार करते हुए अन्ततः हम ग्लासगो के निकट आये। मुख्य शहर में प्रवेश करने के पहले देखा, यहाँ भी बड़े पैमाने पर घर बन रहे हैं !

पिछली लड़ाई के जमाने में नये घर तो बने नहीं, पुराने घरों में से हर तीन पर एक घर बम-वर्षा से बरबाद होगये। अतः लड़ाई समाप्त होते ही घर बनाने की ओर ध्यान दिया गया और इसे सरकार ने अपने हाथ में लिया। १९५० तक दस लाख परिवारों के लिए मकान तैयार किये जा चुके हैं और अगले तीन वर्षों तक हर वर्ष दो लाख बनाने की योजना काम में लाई जा रही।

सरकार ने इन मकानों के लिए विशेषज्ञों से तरह-तरह के नये डिजा-इन बनवाये हैं, जिसमें परिवार पूरे सुख से रह सके और जिसकी सूरत-शकल भी चित्त को प्रसन्न करनेवाली हो। हर मकान के आगे-पीछे थोड़ी ज़मीन, जिसमें फूल-पत्ते—क्या ऐसे मकान हमारे मध्यश्रेणी के लोगों के भाग्य में भी बदा है ?

१५ मई, ५१

न्यू लानार्क : जहाजों का कारखाना

यह ग्लासगो है। ब्रिटेन का द्वितीय प्रधान नगर। ग्यारह लाख इसकी जनसंख्या है। क्लाइड नदी पर बसा है यह। जहाज बनाने में इस नगर का कोई सानी नहीं है। ब्रिटिश कामनवेल्थ के दो सबसे बड़े जहाज यहीं बनाए गये थे—'क्वीन मेरी' और 'क्वीन एलिजाबेल्थ'। और सबसे मजबूत जंगी जहाज़ "वानगार्ड" भी यहीं बना था।

हम जिस होटल में ठहराये गये हैं उसके सामने ही ग्लासगो का प्रमुख पार्क है। इस पार्क की एक ओर 'सिटी हाउस' है—ग्लासगो के सार्वजनिक जीवन का केन्द्र। बड़ी शानदार इमारत है उसकी। किन्तु सबसे शानदार चीज़ तो है यह पार्क।

देखिये, यह ऊँचा स्तम्भ। नीचे से देखिये, तो टोपी खिसक पड़े। इस स्तम्भ पर यह किसकी मूर्त्ति है? किसी बादशाह की? किसी विजेता की? नहीं, यह मूर्त्ति एक साहित्यकार की है—पढ़िये क्या लिखा है? "वाल्टर स्काट"! सर वाल्टर स्काट—स्काटलैंड का अमर साहित्यकार, जिसने अपने उपन्यासों में स्काटलैंड के चप्पे-चप्पे को शाश्वत जीवन दे दिया। हमने ऐसे ही प्रमुख स्थान पर एडिनबरा में इसे देखा था, यहाँ भी देख रहे हैं। स्काटलैंड के हर बड़े शहर में स्काट की ऐसी ही शानदार मूर्त्तियाँ हैं!

समूचे पार्क में ऐसी अनेक मूर्त्तियाँ हैं—भाप का आविष्कारक जेम्स-वाट को उस कोने में देखिये और प्रसिद्ध पर्यटक लेविंग्स्टन भी यहाँ हैं! राजनीतिज्ञ ग्लैडस्टन भी और कविवर बर्न्स भी। मुख्य प्रवेश-द्वार पर प्रहरी की तरह प्रसिद्ध सेनापतियों की मूर्तियाँ हैं!

पार्क में बड़ी चहल पहल रहती! हरी मखमली घास; बीच-बीच में

रंगबिरंगे फूलों की क्यारियाँ ! युवक-युवतियों की जोड़ियाँ बड़ी रात तक किलोलें करती हैं यहाँ ।

हमारे कार्यक्रम के अनुसार आज न्यू लानार्क की काटन मिल को सबसे पहले देखना था । न्यू लानार्क ग्लासगो से बीस-बाईस मील पर है ! क्लाइड नदी के किनारे बसा यह छोटा-सा गाँव । यहाँ क्लाइड नदी कितनी पतली है, छिछली है—अपने यहाँ के मामूली पतले नाले की तरह ! यह मिल भी कोई बड़ी नहीं—कुल चार-पाँच सौ मजदूर काम करते हैं यहाँ । किन्तु, इंगलैंड के नये इतिहास में ही नहीं, समाजवादी इतिहास में भी इस गाँव का नाम सदा सोने के अक्षरों में अंकित रहेगा । क्यों ? क्योंकि इसी स्थान पर रोबर्ट ओवेन ने सबसे पहली बार समाजवाद का प्रयोग किया था । ऐसा कारखाना बनाया जाय, जिसमें हर मजदूर का हिस्सा हो, वह वेतनभोगी मजदूर-मात्र न रह कर, कारखाने का बाज़ाप्ता हिस्सेदार हो । जो कुछ अपनी सम्पत्ति थी सभी बेच कर इस स्वप्न को साकार करने में लगा दिया ! निस्सन्देह, उस समय उनका वह प्रयोग सफल नहीं हुआ—किन्तु इतिहास से उनका नाम कौन हटा सकता है ? एक बार रामजे-मेकडोनल्ड ने गर्व से कहा था—हमारा देश मार्क्स का नहीं, ओवेन का है !

मिल को घूम-फिर कर देखा—रूई की धुनाई, फिर कताई, फिर बुनाई ! एक वृद्ध सज्जन बड़े उत्साह से हमें दिखला रहे थे और कताई-बुनाई में लगी लड़कियाँ हमारी भेष-भूषा की ओर उत्सुकता से देख रही थीं—किन्तु मेरा ध्यान कहीं अन्यत्र था ! मैं रह-रह कर क्लाइड के किनारे उस महान व्यक्ति की आत्मा को ढूँढ़ रहा था !

कारखाने में ओवेन के हाथ का लिखा उस समय का हिसाब-किताब भी है । कैसी सुन्दर, साफ लिखावट । इच्छा होती थी, इसे बार-बार चूमूँ !

मेरे साथी भोजन की फिक्र में थे, मैं उस स्थान को देखना चाहता था, जहाँ ओवेन रहते थे। दो सौ वर्षों का वह घर आज भी कायम है। अब उसमें इस मिल के एक कर्मचारी रहते हैं। मकान बड़ा ही सुन्दर— क्लाइड के किनारे है, एक ओर गिरजाघर है, दूसरी ओर क्लाइड के उस पार पहाड़ ! घर के मालकिन ने कहा, हम इस घर को पुराने ही ढंग से रखे हुए हैं।

अब न वह देवी है, न वह कड़ाह ! मिल का संचालन अन्य मिलों की तरह होता है। बार-बार मन में जिज्ञासा होती थी, क्यों नहीं मजदूर-सरकार कम से कम यहाँ एक जगह ओवेन के उस स्वप्न को पूरा करती है। हमारे कार्यक्रम में उसने इस स्थान को रखा, इससे यह स्पष्ट है कि वह इसके महत्व को नहीं भूली है। किन्तु ओवेन की स्मृति में और भी कुछ किया जाना चाहिये।

वहाँ से लौटकर हम क्लाइड के किनारे जहाज के एक कारखाने को देखने गये। एक ही साथ पाँच जहाजों के बनाने में हाथ लगा था। कोई तैयार होने पर था, किसी की नाप-जोख ही हो रही थी। वे विशाल जहाज ! उसके सामने मनुष्य गुलिवर के लिलिपुटियन ऐसा मालूम होता था। उसी तरह काम में लगा हुआ, खींच-तान करता हुआ, ठुकाई-पीटाई करता हुआ। बड़े-बड़े क्रेन, बड़े-बड़े लोहे को आसानी से उठा कर जहाज पर इधर-उधर पहुँचा रहे। इन जहाज की पेटी का लोहा छः इंच मोटा था। कारखाने के भीतर देखा, इतने मोटे लोहे को इस तरह मशीनें काट देती थीं जैसे कैंची मुलायम रेशम को। उसमें इस तरह छेद किये जा रहे थे, जैसे टकुए को खरबूजे में घुसाया जाय !

आज भोर से ही पानी पड़ रहा था। और, इस देश का काम सब खड़े-खड़े ! पाँच बजते-बजते मुझसे खड़ा नहीं रहा गया। मैं मोटर में आकर बैठ गया और वहाँ से होटल आकर बड़ी देर तक लेटा रहा !

एडिनबरा की ही तरह ग्लासगो को अच्छी तरह नहीं देखने का अरमान रह गया। यह बहुत बड़ा औद्योगिक केन्द्र है। लोहे, रसायनिक पदार्थ, तागे, बिजली के घरेलू सामान आदि यहाँ के कितने उद्योग संसार में प्रसिद्ध हैं। यहीं फोर्थ नदी का पुल और लंदन का टावर बना था। यहीं वह पहला हवाई जहाज बना था जिसने एटलांटिक को पार किया था। यहाँ का रायल टेकनिकल कालेज अपने ढंग का संसार का सबसे पुराना कालेज है। इंजीनियरिंग, डाक्टरी, विज्ञान और साहित्य की अच्छी पढ़ाई के लिए भी ग्लासगो प्रसिद्ध है। यहाँ के विश्वविद्यालय में पाँच हजार विद्यार्थी पढ़ते हैं। यहाँ की लाइब्रेरी और आर्ट गैलरी भी प्रसिद्ध है!

एक महीने में एक सम्पूर्ण देश को देखना। क्या यह सम्भव है? जितना हम देख पा रहे हैं, यही बहुत है। हाँ इन्हें देख कर जो जिज्ञासा जगी है, वह शायद फिर यहाँ बुला ले। सोचता हूँ, अब हर गर्मी के मौसम में कहीं न कहीं विदेश की सफर कर आऊँगा!


शेक्सपियर का जन्म-स्थान

ङ : शेक्सपीअर के गाँव में

स्ट्रैट फोर्डग्रौन एवन

१६ मई, ५१

हाँ, आज स्थान का नाम ऊपर ही रहना चाहिये। जो अकस्मात लिख गया, वही सत्य है। यह स्थान ऊपर है और काल इसके नीचे। मई की ऐसी सोलहवीं तारीख हजारों बार आई और गई, आयगी और जायगी, किन्तु यह स्थान अजर है और इसी प्रकार अजर-अमर रहेगा!

प्रणाम करो इस स्थान को ओ संसार के मानवो! इसी स्थान पर शेक्सपीअर जन्मा था, जिसने मानवता को गौरव दिया। शेक्सपीअर या कालिदास किसी खास देश के नहीं होते! वे सारी मानवता के हैं— सारी मानवता के आभूषण हैं, शृंगार हैं। सारे मानव उसके निकट सर झुकायें—सादर, सविनय!

लगभग ६ बजे संध्या को यहाँ आया और ९ बजे यह डायरी लिखने बैठा हूँ। रोम-रोम आनन्द से उच्छ्वसित हो रहे हैं!

मैं भी एक छोटा-सा नाटककार हूँ। इस तरह शेक्सपीअर मेरे गोत्र के थे—यह भावना और भी भाव-विभोर बना रही है।

ज्यों ही इस होटल में पहुँचा, सभी साथी अपने-अपने सामान गिनने और सँजोने में लग गये। किन्तु मेरी आत्मा तो जैसे छटपट कर रही थी। झट बाहर निकला। सोचा, रात होने के पहले जितना भी देखा जा सके, देख लिया जाय।

सबसे पहले, पूछते-पाछते, उस स्थान पर गया जहाँ शेक्सपीअर का जन्म हुआ था! ६ बजे तक ही वह खुला रहता है, हमारे जाते-जाते

७ बजने को थे। अतः घर बंद पाया। हाँ, उसके आगे लिखा था, यहीं शेक्सपीअर का जन्म हुआ था। हमने उस घर को किस तृषित दृष्टि से देखा!

दुमंजिला खपरैलका मकान। गुण-पूजक अँगरेज-जाति इसे उसी रूप में जुगा कर रख रही है, जिस रूप में यह शेक्सपीअर के समय में था। किन्तु उसकी मरम्मत पर इतना ध्यान है कि कहीं ज़रा भी टूट-फूट या जीर्णता नहीं दिखाई पड़ती। घर मुख्य सड़क पर ही है। तो भी दीवाल से सटे कुछ फूल लगा दिये गये हैं, जो अपनी रंग-बिरंगी-चमक से हमारी आँखों को तृप्त कर रहे थे!

भीतर जाकर तो कल देखूँगा, अभी चला उस स्थान को जहाँ शेक्सपीअर की स्मृति में रंगमंच बनाया गया है। जब शहर में घुस रहा था, वहाँ मोटरों की भीड़ लगी थी। रास्ता पूछते-पाछते वहाँ भी पहुँच ही गया।

अपने कलाकारों की पूजा करना कोई इन लोगों से सीखे। ग्लासगो में जो सबसे बड़ा पार्क है, उसमें सबसे ऊँचे स्तम्भ पर स्काट की मूर्ति है और अगल-बगल राजनीतिज्ञों या सेनापतियों की। इस गाँव में अँगरेजों ने शेक्सपीअर के लिए क्या किया है, वह यहाँ आने पर ही मालूम किया जा सकता है।

हमारे सामने यह पार्क है, यह एवन नदी है, यह स्मारक-थियेटर है। पार्क में घुसिये और देखिये यह शेक्सपीअर की मूर्ति। एक ऊँचे चबूतरे पर कैसी भव्य-दिव्य दिखाई पड़ती है यह। इसे लार्ड रोनाल्ड गावर ने १८८८ ई० में तैयार कराया था और उसी साल १० अक्टूबर को इस मूर्त्ति को प्रतिष्ठापित किया गया!

इस मूर्त्ति में शेक्सपीअर ध्यानमग्न बैठे से दीखते हैं, मानों किसी नाटक की तैयारी के बारे में कुछ सोच रहे हों। मूर्त्ति के आसन के नीचे जो चबूतरा है, उसके चारों ओर शेक्सपीअर के ही कुछ पद्य उद्धृत किये गये हैं। पीछे की ओर यह पद्य उद्धृत है—

Life's a walking shadow
A poor player
That struts and frets
His houp upon the stage
And then there is no more.

इस मुख्य मूर्त्ति से कुछ दूर हट कर चारों कोने पर चार मूर्त्तियाँ हैं, जो शेक्सपीअर के नाटकों के चार मुख्य पात्रों का सही चित्रण-सी लगती हैं। उनकी मूर्त्ति के आगे दाहिनी तरफ फाल्स्टाफ है—कैसा हँस रहा है वह, मानो सारे संसार पर, उसकी क्षणभंगुरता पर या उसकी बेवकूफियों पर। फिर प्रिंस हाल—मुँछउठान जवानी का प्रतीक, बेफिक्र, बेलौस। अपना मुकुट उतार कर सौंप रहा है। किन्तु बताइये, पीछे जो दो मूर्त्तियाँ हैं, वे किनकी होंगी? शेक्सपीअर को जिसने पढ़ा है, वह तुरत कह देगा, उनमें एक तो हेमलेट की जरूर होगी! हाँ, ठीक, हैमलेट ही तो। साथ में एक मानव खोपड़ी लिए वह कैसा घूर रहा है उसे! और दूसरी मूर्त्ति—लेडी मैकबेथ की! अपने हाथ को किस तरह भय-त्रस्त दृष्टि से देख रही है! अरे, इससे कहीं खून तो नहीं टपक रहा है!

शेक्सपीअर के इन चार पात्रों की मूर्त्तियाँ देखते समय ऐसा लगा इंगलैंड की आत्मा इनमें निहित है—ये चार मूर्त्तियाँ अँग्रेजों की चार मौलिक भावनाओं के प्रतीक सी लगीं।

पार्क में चारों ओर सब्जी और फूल ही फूल। सब्जी को इस तरह रखा गया है कि उस पर चलिये तो मालूम हो, मखमल पर चल रहे हैं। फूलों की सजावट का क्या कहना। बड़े और छोटे फूलों को एक ही क्यारी में किस प्रकार रंगों के मेल पर ध्यान देते हुए लगाया गया है। नीचे डेज़ी खिल-खिला रही है, तो ऊपर ट्यूलिप सिर हिला रहा है। यों ही फूलों और रंगों की अजीब रंगामेज़ी!

और यह तालाब है ! इसका पानी ? शेक्सपीअर के पार्क के तालाब में एवन-नदी के पानी के अतिरिक्त दूसरा कौन पानी रखा जा सकता है ? बगल के एवन से ही यंत्र द्वारा पानी लेकर इसे भरा गया है। और, इस भरे हुए तालाब में वे राजहंस तैर रहे हैं ! उजले-उजले, बड़े-बड़े। उनकी लम्बी गरदन, उनकी चौड़ी चोंच ! जब उजले परों को फट-फटाने लगते हैं, तो मालूम होता है, शेक्सपीअर की कविता अब सपन्न होकर उड़ने जा रही है।

किन्तु दर्शकों और पर्यटकों का झुंड उन्हें इतना प्यार दे रहा है कि वे उड़ेंगे क्यों ? देखिये, कुछ लोग उनके लिए दाने फेंक रहे हैं, कुछ उनका चित्र उतार रहे हैं !

उफ, भावना-विभोर होकर मखमली फर्श को अपने जूतों से मत बरबाद कीजिये, पगडंडी पकड़कर आगे बढ़िये। यह सामने स्मारक थियेटर है ! इसकी स्थापना आदि के बारे में ज़्यादा खोज ढूँढ़ करने की आज फुर्सत कहाँ है ? हम सीधे भवन के बरामदे में पहुँचे जहाँ, दर्शकों की भीड़ लगी थी ! सवा सात बज रहे थे, सूचना-पट में देखा, ७।। से खेल शुरू होगा—आज हेनरी फोर्थ दिखलाया जा रहा है। कहा गया था कि होटल में खाना साढ़े आठ तक ही मिलेगा। किन्तु सोचा, जहन्नुम में जाय खाना—खाना तो रोज खाते ही हैं, आज यह अवसर क्यों चूकें ? किन्तु दरयाफ्त करने पर पता चला, बैठनेवाली एक भी सीट खाली नहीं। हाँ, खड़े-खड़े देख सकते हैं। साढ़े दस बजे तक खड़ा रहने की हिम्मत तो थी नहीं। हाँ, चलते समय साढ़े तीन शिलिंग में १६५० की स्मृति-पुस्तिका खरीद कर सन्तोष किया !

फिर एवन के किनारे टहलने लगे ! तरह-तरह की भावनायें उठ रही थीं। यह नदी हमारी लखनदेई से बड़ी नहीं है। किन्तु धन्य इसका भाग्य ! एक सपूत इसके किनारे पैदा हुआ और यह जगत प्रसिद्ध बन गई।

छोटी-छोटी मोटर बोटें थीं, इतनी उमंग मन में थी कि सोचा, इनमें से एक पर चढ़ जाऊँ और जो पैसे माँगे, देकर इसकी लहरियों का मज़ा लूँ। किन्तु उसी समय एक साथी मिल गये और उन्होंने कहा, शेक्सपीअर की वाटिका आप लोगों ने देखी है या नहीं ?

उनकी बात पूरी भी नहीं होने पाई और मैं उस ओर दौड़ पड़ा। वह हँसने लगे—आप तो इस समय शेक्सपीअर मैड हो रहे हैं ? हाँ, ज़रूर मुझ पर इस समय शेक्सपीअर का पागलपन सवार था ? काश, जिंदगीभर ऐसा ही पागलपन सवार रह पाता।

पूँछते-पाछते उस बगीचे में गये, जिस बगीचे में शेक्सपीअर के हाथ का लगाया मलबेरी का एक पेड़ आज भी जीवित है। इस पेड़ को जीवित रखने के लिए क्या-क्या न प्रबंध किये जाते हैं। पुरानी डालों में लोहे के भरसाहे लगाये गये हैं। चारों ओर का चबूतरा फूलों से भरा हुआ! मलबेरी में अभी-अभी पत्ते निकल रहे थे!

झट उसकी डाल को पकड़ कर चूम लेने से अपने को रोक नहीं सका। शायद कभी शेक्सपीअर ने भी उसमें कोपलें निकलते हुए देख कर उसे इसी तरह चूमा हो।

मलबेरी के पेड़ के सामने शेक्सपीअर की एक मूर्त्ति है, जो पहले लंदन में थी, अब यहाँ लाई गई है। इसमें शेक्सपीअर बिल्कुल जवान लगते हैं—अभी-अभी मसें भींग रही हैं—एकहरा, छरहरा बदन। काफी खूबसूरत। दोनों ओर दो देवियाँ खड़ी हैं—एक हैं नाटक की देवी; दूसरी संगीत की देवी! एक के चेहरे पर सकुचाहट, उसकी निगाहें नीची; दूसरी शेक्सपीअर के मुँह की ओर देख रही है!

बगीचे को कि तरह सजा कर रखा गया है, क्या वर्णन किया जाय—*गिरा अनयन, नयन बिनु बाणी!*

इस बगीचे से सटे नैश का वह भवन है, जिसमें शेक्सपीअर अन्तिम दिनों में रहते थे! इस समय तक उस भवन का कपाट भी बन्द हो चुका था।

हमने आश्चर्य से पाया, हम अपने होटल के बिलकुल निकट पहुँच गये हैं। यह होटल शेक्सपीअर होटल कहलाता है और इसका संचालन शेक्सपीअर की स्मारक-समिति की ही ओर से होता है। यह होटल हमेशा भरा रहता है। बाहर से, देश-विदेश-से जो लोग आते हैं, वे इसी होटल में ठहरना पसन्द करते हैं।

होटल के प्रबन्ध में भी शेक्सपीअर की छाप है। इसके हर कमरे का नाम शेक्सपीअर की पुस्तकों के नाम पर रखा गया है। जहाँ हम भोजन करते हैं, उसका नाम है, As you like it. जहाँ पीने का दौर चलता है, उसके दरवाजे पर लिखा है—Measure for measure. पीकर जहाँ गपशप होती है, ठहाके लगाये जाते हैं, उसका नाम है Tempest और जहाँ अकेले-दुकेले बैठकर चिंतन किया जाता है उसका नाम—Mid Summe-nights Dream. । मैं जिस कमरे में ठहराया गया था, उसका नाम था—Comedy of Errors. ज़रूर कोई ग़लती हुई है, किन्तु कितनी सुखान्त !

आज मौसम भी बड़ा अच्छा रहा। ग्लासगो से जब हम चले, आसमान साफ था। ज्यों-ज्यों ट्रेन आगे बढ़ती गई, धूप खिलने लगी। गाड़ियों में मैं प्रायः किनारे पर बैठता हूँ, जिसमें बाहर का दृश्य देखता चलूँ। शीशे की खिड़कियाँ; जब धूप शरीर से स्पर्श करने लगी, बड़ा आनन्द आया !

हम इडिनबरा गये थे इंगलैंड के पूर्वी किनारे से और लौटे हैं पश्चिमी किनारे से। थोड़ी दूर तक तो दृश्य अच्छा नहीं रहा। किन्तु जब हम मध्य इंगलैंड में पहुँचे, प्राकृतिक दृश्य बड़े सुभावने दिखे !

रास्ते में एक जगह है—Gretna Green. यह जगह इंगलैंड में बड़ी रोमांटिक रही है। जब प्रेमी-प्रेमिका यह देखते थे कि उनके माँ-बाप उनके विवाह में बाधक हो रहे हैं, तो वे भाग कर यहीं आ जाते थे। यहाँ घोड़े के पैर में नाल ठोंकने वाले लुहार को भी शादी कराने का हक़

था। अतः चर्च की झंझटों में नहीं पड़ कर इन लुहारों से ही वे अपने विवाह के बाज़ाता रस्म करा लेते थे।

रास्ते में लंकाशायर मिला। १६२१ की स्मृतियाँ जाग्रत हुईं जब यहाँ के कपड़ों की होली हमने जलाई थी। समय कितना बदलता है? तीस साल के बाद हम उसी लंकाशायर से, उसकी सरकार के मेहमान के रूप में, गुज़र रहे थे!

बरमिंघम में हमें गाड़ी छोड़ देनी पड़ी। वहाँ से हम मोटर से स्ट्रैटफोर्ड आये हैं।

बरमिंघम के बाद ही दृश्यावली इतनी सुन्दर थी कि हम अनुभव करने लगे, सचमुच हम किसी कलाकार की जन्मभूमि में जा रहे हैं। चारों ओर हरी-भरी भूमि! ज़मीन पर आप से उग आये फूलों की भरमार! लाल, पीले, नीले—ये फूल गुच्छे-के गुच्छे उगते हैं! पेड़ भी अधिक और अनेक किस्म के! कोई अपनी मौलश्री की तरह के, कोई नीबू की तरह के, कोई पाकड़ की तरह के। बड़ या पीपल की तरह बड़े-बड़े पत्ते वाले पेड़ यहाँ भी नहीं दिखाई पड़े। देवदार की तरह लम्बे, सजीले पेड़ जहाँ-तहाँ प्रहरी-से खड़े थे!

बरमिंघम से ही मुझे लग रहा था कि कहीं तीर्थ-स्थान में जा रहा हूँ। मन में वैसी ही पावन, पुनीत, पुलकमयी भावनायें। होटल में आने पर यह राय दी गई थी कि खाकर बाहर जाइये! मैंने सोचा—कहीं तीर्थ में दर्शन करने के पहले भोजन किया जाता है!

शेक्सपीअर की इस जन्मभूमि की साज-सज्जा को देख कर बार-बार राजापुर और बिस्फी की याद आ रही है! क्या हम राजापुर में तुलसी-दास की और बिस्फी में विद्यापति की स्मृति में कुछ ऐसा ही आयोजन नहीं कर सकते हैं?

सोचा है, कल सम्पूर्णानन्द जी को लिखूँगा कि कम से कम राजापुर के लिये तो कोई प्रबंध करेंगे ही! आज लंदन के हिन्दी-केन्द्र की शुभ-

कामना सम्बन्धी उनका पत्र भी आया है ! कुमार गंगानन्द सिंह को लिखूँगा, यदि बिस्फी में वह विद्यापति का स्मारक बना सके, तो यह एक काम ही उन्हें इतिहास में अमर कर देगा ।

शेक्सपीअर की स्मृति में मस्तक झुका कर, आज यहीं डायरी समाप्त करता हूँ। अभी बहुत देखना है, बहुत लिखना है !

स्ट्रैटफोर्ड औन एवन
१७ मई ५१

अभी-अभी जो नाटक देख आया हूँ, उसके बारे में क्या कहूँ? कह सकता हूँ, यदि इसे नहीं देख लेता, तो सारी यात्रा व्यर्थ हो जाती!

किंग रिचार्ड द्वितीय खेला जा रहा था। ज्यों ही परदा हटा, सबसे पहले तो रंगमंच देख कर ही दंग रह गया। सादी लकड़ी से बना दुमंजिला रंगमंच। ऊपर जाने के लिए दोनों तरफ से सीढ़ियाँ। मंच पर आने के लिए तीन रास्ते—दो बगल से, एक दुमंजिले के नीचे से। मंच के एक कोने में एक कुर्सी रखी।

इस सादे रंगमंच पर रोशनी के चमत्कार से ऐसे दृश्य उपस्थित किये जाते कि चकाचौंध में पड़ जाना होता। बस एक ही पर्दे पर सारा खेल। यही मंच कभी राजभवन बन जाता, कभी युद्ध का मैदान। कभी बगीचा बन जाता, तो कभी कैदखाना। ज़्यादातर काम प्रतीकात्मक होते।

ज़रूरत पड़ने पर बीच-बीच में पात्र ही कुर्सियाँ या दूसरे समान उठाये हुए आते और चलते समय ले जाते। यह इस तरह होता कि नाटक का ही एक अंग मालूम होता, ज़रा भी अस्वभाविकता नहीं मालूम पड़ती।

ऐतिहासिक खेल था, अतः पोशाक पुराने ढंग की ही बनवाई गई थी। किन्तु उसमें कोई चाकचिक्य नहीं। मालूम होता कि नित्य दिन पहनी जाने वाली ही पोशाक है।

किंग रिचार्ड का पार्ट माईकेल रेडग्रेव ने किया था और उसके प्रतिद्वंदी हेनरी बोलिंगब्रुक का पार्ट ह्यू ग्रिफिथ ने। रिचार्ड की रानी का पार्ट हीदर स्टैनर्ड ने।

रिचार्ड के पार्ट का क्या कहना ? सुख-दुख, हास्य-रुदन, उच्छ्वास-संताप सबका पार्ट इतना अच्छा कि नाट्यकौशल पर जितनी भी तालियाँ पीटी जायँ, थोड़ी ! समूचे खेल में कहीं भी ज़रा झोल नहीं। सब अपनी जगह पर ऐसा सटीक कि मालूम होता कि नाटक नहीं, सत्य घटना देख रहे हैं। मुख्य पात्रों की संख्या २५ थी, छोटे-छोटे काम करनेवाले अनेक। किसी के अभिनय में कहीं त्रुटि नहीं दिखाई पड़ती थी। पृष्ठभूमि का संगीत इतना आकर्षक था कि उसकी धुन ही सारा वातावरण तैयार कर देती थी ! प्रारम्भ में उधर नेपथ्य संगीत शुरू हुआ, इधर रोशनी की रंगीनियाँ रंगमंच पर जादूगरी करने लगीं और फिर जादू के पुतले की ही तरह एक-एक पात्र भिन्न-भिन्न रास्तों से आ पहुँचे। कुछ दुमंजिले पर चढ़ गये, कुछ नीचे खड़े हुए। इस दृश्य ने ही भाव-विभोर बना दिया ! फिर एक दृश्य के बाद दूसरा दृश्य इतनी तेज़ी से और इतने नाटकीय ढंग से बदलने लगा कि चकित-विस्मित हो जाना पड़ता था !

समाप्ति के समय तो पूछिये ही नहीं। तालियों की गड़गड़ाहट में, पाँच मुख्य पात्रों को छोड़ कर, शेष पात्र आकर मंच पर खड़े हुए। फिर माइकेल रेडग्रेव को बीच में करके पाँचों पात्र आये। अब तो तालियों की पूछिये नहीं। तीन बार सर झुका कर उन्होंने दर्शकों को नमस्कार किया। तालियाँ पिटती रहीं—पाँचों मुख्य पात्रों ने आगे बढ़ कर फिर तीन बार नमस्कार किया। तालियाँ पिटती ही रहीं। पात्र जाने लगे। चलते-चलाते रेडग्रेव और हैरी एन्ड्रूज मंच के दोनों छोर पर बढ़े, घूम कर एक दूसरे को देखा फिर दर्शकों को नमस्कार कर चलते बने !

रिचार्ड जब अपनी पत्नी से बिदा हो रहा था और जब वह जेल में अपने जीवन पर चिंतन कर रहा था; तो प्रायः सबकी आँखें सजल हो गई थीं। रेडग्रेव बिदा के समय जब मंच पर आया तो उस समय भी उसके चेहरे पर अभिनय-जनित खिन्नता थी ! शोकान्त नाटक में ऐसा होता ही है—यदि अभिनेता अपने पार्ट में अपनी पूरी जान डाल सके !

आज भोर में डनलप का कारखाना देखने जाना था। इच्छा नहीं होती थी कि स्ट्रेटफोर्ड को छोड़ कर बाहर जायँ—किन्तु, कार्यक्रम को टालना भी अच्छा नहीं लगा। यह जाना भी अच्छा हुआ, हम अच्छी तरह उस भूभाग को देख सके, जो शेक्सपीअर की क्रीड़ाभूमि रहा है! स्ट्रेटफोर्ड वारविक काउन्टी में है। इस काउन्टी को इंगलैंड की हृदय-स्थली कहा जाता है। भौगोलिक दृष्टि से भी और ऐतिहासिक एवं प्राकृतिक दृष्टि से भी। बड़ा ही भव्य भूभाग है। फूलों, पेड़ों और पंछियों की भरमार। फिर बंसत की बहार। चेरी, प्लम और एपुल के पेड़ क्रमशः लाल, उजले और पीले फूलों से लदे आँखों को मुग्ध कर रहे थे। ज़मीन पर नीले, बैंगनी और लाल-पीले फूलों की बहार का भी क्या कहना? क्यारियों में ही फूल नहीं, रास्तों में जहाँ भी घास-फूस उगे हैं, वहाँ फूल ही फूल है! सचमुच यह भूभाग इंगलैंड की हृदय-स्थली है।

वारविक में वह किला देखा, जिसमें अपने नवयुवक प्रेमी से मिलने इलिजावेथ आया करती थी! सुना, किले को अब भी सजा कर रखा जाता है और उसमें कितने ही सुन्दरतम चित्र हैं। फाटक से ही हम उसका सौन्दर्य देख कर मुग्ध हुए। किले के आसपास की ज़मीन भी बड़ी मनोहारिणी है। एक छोटी-सी नदी बहती है, जो उसके सौन्दर्य को और भी बढ़ा देती है!

वारविक के रमणीय पार्क में बहुत से बच्चे खेल रहे थे। आज तक हमने इंगलैंड में कभी दुबला-पतला, पिल-पिला या फटा-चिटा पहने बच्चे को नहीं देखा। एडिनबरा में हम रविवार को थे। स्कूल में छुट्टी थी और धूप भी उगी थी। झुंड के झुंड बच्चे पार्कों में दिखाई पड़े। उनके खेलने-कूदने के लिये पार्कों में झूले वगैरह का बड़ा सुन्दर प्रबन्ध है।

आज की सुनहली धूप, रंगीन धरती, बच्चों का कलरव, चिड़ियों की चहचह—आनन्द का क्या कहना?

रास्ते में एक दूसरा किला पड़ा—उसका नाम है केलिनवर्थ। इस

किले के नामसे एक उपन्यास लिखकर स्काट ने इसे अमर बना दिया है। क्रौमवेल के समय यह नवाबों का अखाड़ा था। उसने इस पर कब्जा कर इसे ध्वस्त-पस्त कर दिया। आज भी किले का भग्नावशेष मात्र है।

डनलप का कारखाना देखा। १६१५ में इस कारखाने की स्थापना हुई। दस हजार आदमी यहाँ काम करते हैं और २६० एकड़ में इसका कारखाना है। यों तो इस कारखाने की शाखायें संसार-भर में हैं। एक कारखाना कलकत्ता में भी है। सिर्फ विलायत की भिन्न-भिन्न शाखाओं में ९० हजार आदमी काम करते हैं।

मजदूरों की सुख-सुविधा के लिये पूरा प्रबंध है। ३० वर्षों से यहाँ ज्वायंट वर्क्स कौंसिल काम करती है, जिसमें मजदूर और मालिक साथ में बैठ कर सभी समस्याओं पर विचार करते हैं। मजदूरों के लिए थियेटर घर, सिनेमा घर और तरह-तरह के खेलों के लिए २७ एकड़ ज़मीन के खेल का मैदान है। पाँच हज़ार मजदूर यहाँ के भोजनागार में भोजन करते हैं।

कच्चे रबड़ को लेकर किस तरह टायर और ट्यूब बनाये जाते हैं, हमें घूम-घूम कर बतलाया गया। हर महीने ४५,००० टायर इस कारखाने से निकलते हैं।

हमने वहीं भोजन किया; फिर कुछ लोग तो रह गये; मैं तीन अन्य साथियों के साथ स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन लौट आया।

यहाँ आकर आज शेक्सपीअर का जन्म-गृह देखा और फिर उस घर को देखा जहाँ शेक्सपीअर की मृत्यु हुई। आह, इन घरों को किस तरह सुरक्षित रखा गया है!

शेक्सपीअर के जन्म-घर में ज्यों ही घुसिये, सबसे पहले आपको वह कमरा दिखाया जायगा, जिसमें बैठ कर शेक्सपीअर काम किया करते थे। भीतर दीवालों की वे ही लकड़ियाँ हैं, जो चार सौ वर्ष पहले थीं। तरह-तरह के उपचार से उन्हें सड़ने और घुनने से बचाया जाता है। नीचे की

फर्श टूटी-फूटी है, जिस तरह वह शेक्सपीअर के समय में थी। उसमें एक तरफ वह कुर्सी रखी हुई है, जिस पर बैठ कर शेक्सपीअर लिखा करते थे। एक लम्बा सन्दूकचा ऐसा काट का बना है, जो उनके टेबुल के काम में शायद आता होगा।

उससे सटा कमरा उनके बाप का है, जिसमें बूढ़े की दुकान थी। पहले इन दोनों कमरों के बीच में दीवाल थी, किन्तु अब दीवाल हटा दी गई है, जिसमें एक साथ ही दोनों कमरों को देख लिया जाय। इस कमरे में शेक्सपीअर के सम्बन्ध के बहुत-से कागजपत्र शीशे में जड़ाकर टाँग दिये गये हैं।

शेक्सपीअर के बैठने के कमरे से सटा हुआ दूसरी तरफ का कमरा रसोई-घर है। उस समय के सारे बर्तन वहाँ सुरक्षित हैं—चुल्हा, कलछी, हाँडी, थाल आदि। लकड़ी के जिस बर्तन में मांस के छोटे-छोटे टुकड़े किये जाते थे, उसे भी रखा गया है। इस घर में एक ऐसी चीज़ है जो इंगलैंड में भी अकेली है। छत से ज़मीन तक एक पतली लकड़ी लगी है और ज़मीन से एक बालिश्त ऊँचे पर उसमें लोहे का एक फ्रेम लगा है, जिसे बच्चे की कमर से लगा दिया जाय तो वह कोल्हू के बैल की तरह घूमता रहेगा! यदि मास्टर शेक्सपीअर नटखट रहे होंगे, जैसा कि मालूम होता है, वे थे, तो उन्हें इस फ्रेम में जकड़ कर बैल की तरह घूमना पड़ा होगा। इसे देखकर यशोदा द्वारा कृष्ण का ऊखल में बाँधना याद आ गया!

दुमंजिले पर वह घर है जिसमें शेक्सपीअर का जन्म हुआ था! उसमें एक बिछावन भी है, किन्तु उस पर शेक्सपीअर सोते होंगे, यह नहीं कहा जा सकता। हाँ, वह भी सोलहवीं शताब्दि का ही है। पहिया लगी हुई एक बक्स-गाड़ी है, जिसमें शिशु शेक्सपीअर को लिटा कर उनकी माँ सड़कों पर घुमाती होगी, ऐसी कल्पना तो की ही जा सकती है! घर की दीवालों पर भी शेक्सपीअर सम्बन्धी कागजात शीशे में फ्रेम करके टाँग

गये हैं। शेक्सपीअर का हस्ताक्षर है और उनके जीवित रहते समय ही प्रकाशित उनकी कुछ पुस्तकें भी हैं।

घर के पीछे एक बगीचा है। निस्सन्देह इस बगीचे में बचपन में शेक्सपीअर टहलते रहे होंगे। अब इस बगीचे में ऐसे सभी पेड़, फूल और घास लगा दिये गये हैं जिनका उल्लेख शेक्सपीअर ने अपनी पुस्तकों में जगह-जगह पर किया है। हर फूल के पेड़ से एक-एक पुर्जा बँधा है जिस पर उस फूल के सम्बन्ध में शेक्सपीअर की पंक्तियाँ उद्धृत हैं।

इस घर की बगल में एक दूसरा घर है जहाँ शेक्सपीअर-सम्बन्धी साहित्य और चित्र बिका करते हैं। चित्रों के अतिरिक्त मैंने शेक्सपीअर की एक मूर्त्ति और आक्सफोर्ड द्वारा प्रकाशित उनकी ग्रन्थावली खरीदी।

फिर मैं उस घर में गया, जो न्यू हाउस के नाम से मशहूर है और जिसमें लगी वाटिका की चर्चा मैंने कल की डायरी में की है। शेक्सपीअर जब लंदन से यश और धन अर्जित करके लौटे, तो अपने लिए यह नया मकान खरीदा था। जिस घर में वह रहते थे, वह घर अब नहीं है, हाँ उसकी नींव अवश्य है। उसके बीच के कमरे में बैठ कर शेक्सपीअर ने "टेम्पेस्ट" लिखा था। घरों की नींव के आगे एक पुराना इनार है। अवश्य ही इसी कूएँ का पानी शेक्सपीअर पीते रहे होंगे। निकट जाकर उसे झाँक कर देखा। उसमें अब भी पानी भरा है।

यह न्यू हाउस शेक्सपीअर के मरने के बाद उनकी लड़की के कब्जे में आया और फिर उस लड़की की लड़की के कब्जे में, जिसका नाम नैश था। नैश का तैलचित्र वहाँ टँगा है। उस घर में एक मेज़ रखी हुई है, जो शेक्सपीअर की लगाई मल-बेरी की लकड़ी से बनाई गई थी। उसमें ५२ लकड़ियाँ लगी हुई हैं; शेक्सपीअर ५२ वर्ष जीवित रहे।

इस घर के सुप्रसिद्ध अभिनेता गैरिक ने खरीदा और उसे शेक्सपीअर की स्मृति में उत्सर्ग किया। इस घर में शेक्सपीअर की स्मृतियों के अतिरिक्त गैरिक-सम्बन्धी भी बहुत-सी चीज़ें सुरक्षित हैं। शेक्सपीअर ने जिन फूलों

की चर्चा अपनी पुस्तकों में की है, उन सभी फूलों के चित्र बना कर सुरक्षित रखे गये हैं। शेक्सपीअर ने पीने के जिन पात्रों का उल्लेख किया है, उनके नमूने भी रख दिये गये हैं। जो सिक्के उसके समय में इंगलैंड में प्रचलित थे और जिन देशी-विदेशी सिक्कों का उल्लेख उन्होंने किया, वे सभी सिक्के भी रखे गये हैं!

भिन्न-भिन्न समय में भिन्न-भिन्न चित्रकारों द्वारा बनाये गये शेक्सपीअर के चित्र और मूर्त्तियाँ भी इन दोनों घरों में देखने ही योग्य हैं!

मैं इन्हें देख रहा था और मुग्ध हो रहा था! किन्तु अभी तो बहुत कुछ देखना रह गया है!

स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन

१८-५-५१

आज स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन में रह कर भी स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन में नहीं रहा! आज हमें स्टैन्डर्ड मोटर कम्पनी का कारखाना और एक फार्म को देखना था। भर दिन हम उसीमें लगे रहे!

कावेन्टरी में स्टैन्डर्ड मोटर कम्पनी के कारखाने का हमने वह भाग देखा, जहाँ फरगुशन ट्रैक्टर बनते हैं। विज्ञान जहाँ आखिरी छोर पर पहुँचता है, कला बन जाता है। जब-जब ऐसे कारखानों को देखा है, तब-तब मुझे ऐसा ही लगा है।

कम्पनी का यह कारखाना एक खुले देहात-सा स्थान में है। चारों ओर का दृश्य बड़ा ही सुहावना है। भवन के चारों ओर फूल लगे हैं। भवन की दीवारें बड़ी साफ-सुथरी; उसकी बनावट भी बड़ी ही भव्य। बाहर फूल-फूल, भीतर लोहा-लोहा,—अँगरेज जाति की एक विशेषता यह भी है।

यों तो यह कम्पनी १९०३ में ही बनी। किन्तु १९३९ से कम्पनी की उन्नति चरम सीमा की ओर बढ़ने लगी। उसी साल उसने ५०,००० मोटर-कारें तैयार कीं।

१९४६ में उसने फरगुशन कम्पनी के लिए ट्रैक्टर बनाना शुरू किया है। १९५० के सितम्बर तक उसने डेढ़ लाख ट्रैक्टर तैयार किये थे। ये ट्रैक्टर संसार के कोने-कोने के ७५ देशों में भेजे जाते हैं। १९५० में ६१ हजार कार और ५१ हजार ट्रैक्टर इस कम्पनी में तैयार हुए। महीने में ४० लाख पाउण्ड का माल यहाँ से बाहर निकलता है। कम्पनी इस वर्ष १ लाख कार और १ लाख ट्रैक्टर तैयार करने की योजना पर चल रही है।

पुर्जे की ढलाई बाहर होती है—उस समय वे लोहे के ढाँचे मात्र होते हैं। इस कारखाने में आकर उन्हें यथार्थतः पुर्जे का रूप मिलता है। लम्बी-

लम्बी कतारों में मशीनें बैठाई गई हैं—इन मशीनों की तायदाद २५०० है, जिनमें २००० मशीनें आप से आप काम करनेवाली हैं। मशीनों के अन्दर पुर्जे के ढाँचे रख दिये जाते हैं—मशीनें उन्हें घुमाने और शकल देने लगती हैं। लकड़ी के बुरादे की तरह ऊपर के हिस्से छिलने लगते हैं। फिर उनमें छेद किये जाते हैं, या दाँत बनाये जाते हैं। इस क्रिया में तेल का प्रयोग होता है—घिरनी नाचती रहती है, उस पर तेल चूता रहता है। यों ही एक सिरे से शुरू होकर दूसरे सिरे तक भिन्न-भिन्न रूप ग्रहण करते हुए भिन्न-भिन्न प्रकार के पुर्जे तैयार होते जाते हैं। फिर उन पुर्जों को कारखाने के दूसरे हिस्से में ले जाते हैं। वहाँ उन्हें फिट करके ट्रैक्टर तैयार कर देते हैं। यहाँ हर मिनट एक ट्रैक्टर तैयार होकर निकलता जाता है! कहाँ वे भद्दी शकल के लोहे; कहाँ ये ट्रैक्टर!

उफ, देख कर आश्चर्य होता था! इस कारखाने में ग्यारह हजार आदमी काम करते हैं! कुछ स्त्रियाँ भी काम करती हैं। मजदूरों के सुख-सुविधा के लिए तरह-तरह के प्रबन्ध हैं। एक हॉल है, जहाँ २५०० आदमी एक साथ बैठ कर भोजन करते हैं। कम्पनी की ओर से सस्ते भोजन का प्रबंध है। इसी हाल में एक ओर मंच है, जहाँ नाटक होते हैं, सिनेमा होता है। खेलकूद के और भी सामान मुहैया किये गये हैं। वर्क्स-कौंसिल यहाँ भी है, जिसमें मजदूर और प्रबन्धक दोनों के प्रतिनिधि बैठकर सभी समस्याओं पर विचार करते हैं। मजदूरों को सन्तुष्ट रखने की सारी चेष्टायें की जाती हैं!

हमारे सामने ही खाने की घंटी बजी। कुछ लोग खाना लाकर कारखाने में ही खाने लगे; कुछ लोग भोजनागार में गये। हमारे सामने ही सप्ताह के वेतन का लिफाफा बँट रहा था। मशीनों के पास ही वेतन मिल गया। न कोई धक्कमधुक्की; न कोई हिसाब-किताब का झगड़ा!

लेकिन जब मैं इसे देख रहा था, बार-बार एक प्रश्न मन में उठ रहा था। ये बड़ी-बड़ी मशीनें—जिनके बीच-बीच में मानव खड़ा है। इन

मशीनों के सामने वह कितना तुच्छ लग रहा है। किन्तु ये मशीनें आई कहाँ से हैं? उसी के मस्तिष्क से ही तो। मानव मस्तिष्क ने जिनका जन्म दिया, उन्होंने ही आज मानव को इतना तुच्छ बना दिया है! क्या यह मानव के कल्याण के लिए अच्छा हुआ है? मानव भूखा है, नंगा है। उसे अन्न चाहिये, वस्त्र चाहिये। वे सभी साधन वंदनीय हैं, जो मानव को इन अभावों से मुक्त करें। किन्तु यदि ये साधन उसका बंधन बन जायँ, तो! इन दोनों में सामंजस्य पैदा करना होगा।

उसके बाद हम स्ट्रैटफोर्ड के निकट के ही एक फार्म को देखने गये जहाँ बड़े पैमाने पर खेती होती है। दो हजार एकड़ में खेती होती है— गेहूँ, यव, आलू, चुकन्दर आदि की खेतियाँ बड़े-बड़े चकलों में यहाँ की जाती हैं। इसके साथ ही गोशाला है और मुर्गी खाना भी।

गायें यहाँ दिन रात चरागाह में ही रखी जाती हैं—चाहे आँधी हो या पानी या बर्फ गिरे! कहते थे, प्रयोग से सिद्ध हुआ है, गायों को सदा बाहर रखने से उनमें बीमारी नहीं होती, वे अधिक दूध देती हैं और तुरत गर्भवती भी हो जाती हैं। गायों के लिए चरागाहें हैं, जिन्हें अलग-अलग टुकड़ों में बाँट कर चराते हैं। इन टुकड़ों के बीच में तार लगे रहते हैं जिनसे बिजली दौड़ती रहती है। अतः गायें एक ही टुकड़े में तबतक चरती रहती हैं जब तक घास खत्म न हो जाय। हम जब पहुँचे, गायें दुही जा रही थीं। बछवे का पता नहीं था। मशीन से दुही जा रही थीं। चारों चूँचियों को चार पतली मशीनों में घुसा दिया। वे हवा के जोर से धीरे-धीरे दबाती हैं। दूध उनसे निकल कर दूर के बड़े हंडे में आपसे आप गिरता जाता है।

प्रति गाय प्रतिदिन ४ गैलन की औसत से दूध देती है। साल में ३१० दिन तक दूध देती है। बछवे को अलग से दूध दिया जाता है—सिर्फ चार दिन तक माँ के थन से दूध पीने दिया जाता है। बछवों को घर में रखते हैं। हमने उन्हें जाकर देखा। बड़े हृष्ट-पुष्ट। हर बच्चे की अलग-

अलग जन्मपत्री, अलग-अलग नाम। दूध को पास्चर-प्रणाली से किस तरह तैयार कर बाहर भेजते हैं, यह भी दिखलाया। बहुत गरम करके, फिर उसे किस तरह ठंडा कर दिया जाता है, इसकी प्रणाली अचम्भा में डालने वाली थी।

एक खेत में आलू बोया जा रहा था। खेत में बड़े-बड़े ढेले थे, पत्थर के रोड़े भी कम नहीं। अपने यहाँ ऐसे खेत में आलू का सपना भी नहीं देखा जा सकता। किन्तु वैज्ञानिक खाद देकर और ट्रैक्टर से गहरी जुताई करके पत्थर पर भी खेती कर लेते हैं। कल के ही द्वारा आलू के बीज डाले जा रहे थे। बड़े-बड़े आलू वैसे ही डाल दिये जाते थे।

खेत-मजदूरों का वेतन प्रति मास २० से २५ पौंड तक है और सस्ता अन्न, दूध और तरकारियाँ अलग।

मुर्गी खाना भी देखा। एक जगह सैकड़ों मुर्गियाँ अलग-अलग खानों में अंडे दे रहीं। हर मुर्गी के सामने की तख्ती में उसके दिये अंडों का माहवारी हिसाब टँगा। फिर इन अंडों को मशीन में रख कर बच्चा तैयार किया जाता है—इस मशीन में २१ दिन में अंडे आपसे आप फूट जाते हैं और बच्चे निकल आते हैं। एक जगह छोटे-छोटे मुर्गी के बच्चे चेंचें कर रहे! मुर्गियाँ बड़ी-बड़ी, उनके अंडे अपने यहाँ के बत्तख के अंडों के बराबर!

फार्म देख कर लौटे, तब तक शेक्सपीअर के सारे स्मारक-स्थान बंद हो चुके थे। वे प्रायः दस बजे खुलते और छः बजे बंद हो जाते हैं। तो भी टहलते-टहलते एवन के किनारे के उस चर्च को देख आये, जिसमें शेक्सपीअर को दफनाया गया था! चर्च बंद था, बाहर से ही सर झुका कर चल पड़े!

फिर शेक्सपीअर की बेटी सुसाना का घर देखने चले। उसे भी बाहर से नमस्कार किया! मेमोरियल थियेटर के सामने जाकर शेक्सपीअर लाइब्रेरी और गैलरी के तख्तों को ही पढ़ कर सन्तोष किया! कैसा अजीब कार्यक्रम है हमारा। शेक्सपीअर के गाँव में रह कर उसके स्मारक देखने की भी फुर्सत नहीं!

स्ट्रेटफोर्ड ऑन एवन
१६।५।५१

शेक्सपीअर की भूमि में यह तीसरा दिन है किन्तु आज भी सारा दिन बाहर ही रहना पड़ा। संयोग से ही रात में शेक्सपीअर का एक और नाटक देख सके।

इंगलैंड की इस हृदयस्थली की हरीतिमा का आनन्द लेते हम आक्सफोर्ड पहुँचे। आक्सफोर्ड जाते ही नालंदा की याद आगई। नालंदा की प्रारम्भिक रूपरेखा ही आक्सफोर्ड की भी रही है। वहाँ के बौद्ध बिहार ही ज्ञान के केन्द्र बन गये। यहाँ भी ईसाई-पहाड़ियों ने ही इस ज्ञानपीठ का श्री गणेश किया। अतः धर्म और ज्ञान का दोनों में ही एक-सा सम्मिश्रण हुआ था। नालंदा में हर जगह बुद्ध की मूर्त्ति—यहाँ हर जगह चर्च और ईसा।

यहाँ कुल मिलाकर २२ कालेज हैं, जिनमें लगभग आठ हजार विद्यार्थी शिक्षा लेते हैं। इनमें स्त्रियों की संख्या एक हजार से कुछ ऊपर ही है। इन कालेजों में १००० विद्यार्थी विदेशों के पढ़ते हैं। भारतीय विद्यार्थियों की संख्या लगभग चालीस है।

विश्वविद्यालय नाम की कोई बड़ी चीज नहीं है। बस एक बड़ा मकान जहाँ चांसलर, रजिस्ट्रार आदि के आफ़िस हैं। आक्सफोर्ड मुख्यतः कालेजों की पुरी है। जिधर देखिये, कालेज ही कालेज और विद्यार्थी ही विद्यार्थी। 'टाउन' और 'गाउन' आक्सफोर्ड के दो भाग रहे हैं और दोनों में प्रायः संघर्ष भी हुए हैं।

हम जब शहर में पहुँचे, तो सब से पहले रास्ते में यहाँ की दो प्रसिद्ध सड़कें पड़ीं—हाई और ब्रौड—हिन्दी में इन्हें लंबी और चौड़ी कह लीजिये। रबर की सड़क भी यहीं पहले-पहल देखी!

हमारे मार्ग दर्शक एक भारतीय विद्यार्थी थे—श्री राघवन अय्यर। प्रतिभाशाली विद्यार्थी हैं, ५०० पौंड वार्षिक की रोड्स स्कालरशिप पा रहे हैं। भारतीय विद्यार्थियों की आक्सफोर्ड-मजलिस के सभापति हैं। बड़े प्रेम और उत्साह से इन्होंने सारी चीज़ें दिखलाईं—जहाँ तक पाँच छः घंटे में दिखला सकते थे।

हमें एक्सिटर कालेज सबसे पहले दिखलाया गया—यही कालेज है जो भारतीय विद्यार्थियों की शरणस्थली है। यह कालेज सबसे पुराने कालेजों में है—१३१४ में इसकी स्थापना हुई थी। ट्रिनिटी कालेज भी देखा, जो इंगलैंड के अभिजात्यवर्ग के लड़कों का अखाड़ा है। इसमें सिर्फ पारसाल एशिया के एक विद्यार्थी को स्थान मिला था।

फिर बोडलियान लाइब्रेरी देखी, जो संसार की सबसे बड़ी लाइब्रेरियों में गिनी जाती है। ब्रिटिश साम्राज्य के अन्दर जितनी पुस्तकें छपती रहीं, सबकी एक प्रति इस पुस्तकालय में सरकार की ओर से भेजी जाती रही हैं। हस्तलिखित ग्रन्थों का भी बहुत बड़ा संग्रह है। नौवीं शताब्दि की पुस्तकें इसमें देखीं। सर टामस बोडले द्वारा १६०० ई० में इस संस्था की स्थापना हुई थी।

क्राइस्ट चर्च की शानदार इमारत देखी, जिसे बनाकर रेन साहब ने सर की खिताब पाई थी। एक यहाँ ऐसा भी कालेज है, आल सोल्स कालेज, जिसमें विद्यार्थी एक भी नहीं हैं, सिर्फ रिसर्च स्कालर ही हैं।

यहाँ कालेजों में लेक्चर नहीं हुआ करते। विद्यार्थी होस्टलों में अध्यापकों के साथ रहते हैं और उनसे मदद लेकर आप-आप पढ़ते हैं। अय्यर कह रहे थे, यहाँ के प्रोफेसर चिन्तन पर अधिक ध्यान देते हैं, किताब की रटन पर नहीं। उनके सामने प्रश्न रखिये और संलाप द्वारा ही वे आपको उस विषय को स्पष्ट कर देंगे। जिन्हें लेक्चर की जरूरत मालूम हो, उनके लिए एक्जामिनेशन स्कूल में लेक्चरों का प्रबंध है। इसी स्कूल में

परीक्षायें भी होती हैं। इस स्कूल में साल भर लेक्चर और परीक्षा का क्रम चलता ही रहता है।

इन्डियन इन्स्टिच्यूट के नाम से यहाँ एक संस्था है, जिसकी स्थापना १८८४ में हुई थी। इसके प्रवेश द्वार पर एक श्लोक है जिसकी पहली पंक्ति है—

शालयं प्राच्य शास्त्राणां ज्ञानोद्योजन तत्परैः

माग्डेलन कालेज आक्सफोर्ड के सबसे अच्छे कालेजों में गिना जाता है। इसी में रावचन पढ़ते हैं, अतः उन्होंने इसे अच्छी तरह दिखलाया, जिसमें हम यहाँ के कालेजों के बारे में सही अन्दाजा लगा सकें। इस कालेज की इमारतें १२ एकड़ जमीन में हैं और इसका मैदान १०० एकड़ में। कालेज की बगल में एक छोटा-सा नाला है और उसके बाद हरी-भरी कुंजें। कहा जाता है, एडिशन यहीं घूमा करते थे। कुंजों से चिड़ियों की आवाज़ आ रही थी। इस नाले पर आने जाने का एक पुल है। कहा जाता है, शेली यहीं एक बच्चे को गोद में लेकर उससे दूसरे जन्म का हाल पूछ बैठे थे और जब वह नहीं बोला, तो भरे गले से चिल्लाते हुए चले गये—हे भगवान, ये लोग अपना हाल भी नहीं बतलाते। कालेज के मैदान में हरिनें चर रही थीं। कहा जाता है, यहाँ जितने स्कालर होते हैं, उतनी ही हरिनें रखी जाती हैं!

इस कालेज के होस्टल में भी जाकर देखा। हर कमरे के फाटक पर एक किवाड़ भिड़काया रहता है, वह ओक होता है और इसी नाम से पुकारा जाता है। ओक बहुत पवित्र माना जाता है, उसके अन्दर विद्यार्थी सर्वतंत्र स्वतंत्र हैं।

यूनिवर्सिटी के सामने सेंट मेरी का गिरजाघर है—बहुत ही शानदार। ऑक्सफोर्ड के पहले कालेज की यहीं १२४९ में स्थापना हुई थी। सेंटमेरी का चर्च ओक्सफोर्ड का सबसे ऊँचा चर्च है। यूनिवर्सिटी कालेज में ही शेली का स्मारक है। जब हम उसे देखने गये, आँखें तर हो

आई। शेली के शव की संगमरमर की मूर्त्ति है। मालूम होता है, अभी-अभी समुद्र से निकाल कर शव को रखा गया है। बालों से पानी चू रहा—नंगधड़ंग, किन्तु मृत्यु के बाद भी कितना सुन्दर! इस मूर्त्ति के नीचे कविता की देवी की मूर्त्ति है, जो रो रही है!

यहाँ कालेज, वहाँ कालेज—यह कालेज, वह कालेज। कहाँ तक स्मरण रखा जाय। नाव खेने की प्रतियोगिता आक्सफोर्ड की खास बात है। आज भी प्रतियोगिता थी। टेम्स नदी के किनारे—जो यहाँ आइसिस कहलाती है—युवक-युवतियों का मेला-सा लगा था। हमारा ध्यान नाव पर उतना नहीं था, जितना इन लोगों पर। इंगलैंड के स्वस्थ, सबल यौवन के ये प्रतीक थे—जिस दल की नाव आगे बढ़ती थी, उसके लोग चिल्लाते हुए, हवा में पिस्तौल छोड़ते हुए, नाव के साथ दौड़ते थे। युवक ही नहीं युवतियाँ भी दौड़ रही थीं। सारे वातावरण में जैसे जवानी छितराई फिरती थी!

हमने आक्सफोर्ड की यूनिवर्सिटी यूनियन भी देखी, जो विद्यार्थियों की अपने ढंग की अनोखी संस्था है। इस संस्था के सारे पदाधिकारी विद्यार्थी ही होते हैं। भारतीय विद्यार्थियों में से बम्बई के कराका इसके सभापति रह चुके हैं।

ऐशमोलियन म्यूजियम संसार का सबसे पुराना म्यूजियम माना जाता है; किन्तु हम जब तक वहाँ पहुँचे, तब तक वह बन्द होने जा रहा था। दरवाजे में घुस कर हम सामने की मूर्त्तियाँ देख सके—कत्तार की कत्तार! कुछ तस्वीरें खरीद कर ही हमने अपने मन को सन्तोष दिया।

संध्या को वहाँ से रवाना हुए। जब तक हम स्ट्रैटफोर्ड पहुँचे, सात बज रहे थे। एक दिन और थियेटर देखने की बड़ी इच्छा थी। सीटें तो यों जाने पर मिलती ही नहीं। हाँ प्रतिदिन दो-चार व्यक्ति अपनी टिकटें वापस कर जाते हैं। भाग्य की बात। सो भाग्य आजमाने की इच्छा हुई। ७॥ से थियेटर शुरू होता है, ७ बजे से ही आकर मि० सिम्सन के साथ

धरना देकर बैठे। मालूम हुआ, हमारे पहले से दो आदमी और बैठे हुए हैं। दो टिकटें वापस हुईं और वे दोनों गदगद हो कर भीतर गये। हम राह देख रहे थे—सिर्फ पाँच मिनट रह गया। सैम्पुल्स ने कहा, हम लोगों का भाग्य ठीक नहीं। मैंने कहा—मुझे तो अपने भाग्य पर भरोसा है। कि इतने ही में दो टिकटें मिल गईं और हम भीतर जा कर बैठ गये।

आज हेनरी फोर्थ का दूसरा भाग खेला जा रहा था। स्टेज वही। टेकनिक भी वही। पात्रों में उस दिन जिसने रिचार्ड के प्रतिद्वंदी का काम किया था, वही हेनरी फोर्थ का काम कर रहा था। आज बिल्कुल ही बदला हुआ! मालूम होता था, वही आदमी एक रात में बूढ़ा हो गया है! लेकिन सबसे सुन्दर पार्ट तो था फालस्टाफ का, जिसे इस साल के डाइरेक्टर एन्थोनी क्वेल ने स्वयं किया था! शेक्सपीअर के नाटकों में फालस्टाफ एक विचित्र जीव है। इसका अभिनय बड़ा ही कठिन है। कितने ही प्रसिद्ध अभिनेता इसका पार्ट करने में असफल हो चुके हैं—जो सफल हुए वे अमर हुए। निस्सन्देह आज का अभिनय पूर्ण सफल था। लोग बार-बार तालियाँ पीट कर अपनी सहमति और प्रशंसा प्रगट कर रहे थे।

इस प्रकार अचानक नाटक देखने का एक मौका पाकर अपने को धन्य ही समझा! इतना आनन्द विभोर था कि होटल में आकर डायरी तक पूरा नहीं लिख सका!

स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन
२०–५–५१

शेक्सपीअर की जन्मभूमि—तुम्हें प्रणाम कर आज तुमसे बिदा हो रहा हूँ। यों तो यहाँ बहुत कुछ देखने आया था; जिन्होंने बुलाया, उन्हें भी बहुत कुछ दिखाना था, किन्तु यदि तुम्हारे दर्शनों के बिना ही लौट गया होता, तो क्या हमारी यात्रा असफल नहीं समझी जाती!

न जाने किस पुण्य पुरुष ने किस पुण्य घड़ी में पहले पहल तुम पर अपनी झोपड़ी खड़ी की! काश, वह व्यक्ति जान पाया होता कि जहाँ वह आज यों बसेरा ले रहा है, उस स्थान पर दो-चार दिनों का बसेरा लेने के लिए एक दिन संसार तरसेगा?

इस होटल में ही देखता हूँ—देखिये, भोजन के समय टेबुलों के इर्द-गिर्द के चेहरे। क्या भूगोल का एक भी महादेश ऐसा है, जिसका प्रतिनिधित्व यहाँ नहीं हो रहा हो?

अमेरिका वालों का क्या कहना? होटल की वेटरेस कहती हैं, उनके झमेलों से तो जान आफत में रहती है! उस टेबुल पर देखिये—उनकी नाक, उनका रंग, उनका रूप—निस्सन्देह ही वे मंगोल जाति से आये हैं—बहुत सम्भव है, वे जापानी हों!

एक पूरा टेबुल अलग उन भारतीयों ने घेर रखा है—साड़ियाँ देखिये, रंग देखिये! निस्सन्देह वह महिला बंगाली होगी और वह युवती तो पारसी होगी ही।

हब्सियों को भी शेक्सपीअर की नाट्य-कला यहाँ खींच लाई है। और, उस भले मानस ने अभी बताया है, वे लोग आस्ट्रेलिया से आये हैं। और ओझा का कहना है—उस टेबुल की किन्नरियाँ ज़रूर फ्रेंच होंगी!

एक सपूत को जन्म देकर एक छोटी-सी बस्ती संसार के आकर्षण का कैसा केन्द्र बन जा सकती है, इसका नमूना है, यह स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन !

एवन, आज भोर में जब मोटर-बोट से तुम्हारी धारा में घूम रहा था, तुम्हारे भाग्य पर कम ईर्षा नहीं हो रही थी !

उफ़, ये नावें । उफ़, इन नावों के खेवैये ! मोटर-बोट तो हमारे ऐसे अपाहिज ही करते हैं । ज्यादा लोग तो सादी नावें लेकर स्वयं खे रहे हैं । मर्द ही नहीं खे रहे हैं, औरतें भी । देखिये, वह युवती किस तरह डाँड को तेजी से चलाती, लाल फ्राक को अपने गालों की लाली से मात देती, नाव को उड़ाती, स्वयं उड़ती-सी भागी जा रही है ! और बच्चे ही क्यों बाज़ आयें ? उनकी छोटी किश्तियाँ तो और भी कमाल कर रही हैं ।

फिर ये राजहंस—जब वे बड़े-बड़े पंखों को फड़फड़ाते हुए लहरों पर पैर रखते उड़ते-से चलते हैं, तब क्या कहना ?

किनारे-किनारे भी तो लोगों की भीड़ है ! और किनारे-किनारे जो नेत्ररंजक फुलवाड़ियाँ हैं, झाड़ियाँ हैं ! 'लवली', 'लवली' सबके मुँह से एक बारगी ही निकल आते हैं !

एवन ने ही तो इस गाँव का यह नाम दिया है । यों तो यह आज स्ट्रैटफोर्ड ऑन एवन—अर्थात् "एवन पर बसा स्ट्रैटफोर्ड" कहलाता ही है, किन्तु इतिहास कहता है, यह स्ट्रैटफोर्ड नाम भी इस नदी के चलते ही रोमनों ने रखा । रोमन भाषा में स्ट्रैट कहते हैं सड़क को और फोर्ड का अर्थ नाला तो प्रख्यात ही है । चूँकि नाले से होकर एक सड़क इस गाँव से गुज़रती थी, इसलिए इसका यह नाम पड़ा ।

यह कस्बा बहुत पुराना है । वारविक शायर का यह सबसे पुराना और सबसे सुन्दर गाँव रहा है । रोमनों और सैक्सन विजेताओं ने भी इसके महत्व का अनुभव किया था और जब यहाँ शेक्सपीयर पैदा हुआ, सारा संसार इसके महत्व का लोहा मान चुका है ।

शेक्सपीअर की इस जन्मभूमि को महत्व देने में गैरिक का बहुत बड़ा हाथ रहा है। गैरिक प्रसिद्ध अभिनेता था और शेक्सपीअर के नाटकों को नई शैली में अभिनय कर उसने लोगों को चकित कर दिया था। उसी ने पहले पहल १७६९ में शेक्सपीअर-महोत्सव का प्रारम्भ किया। जलूस, दीपावली, शहर की सजावट, खेल-कूद, अभिनय आदि का एक ऐसा जमावड़ा हुआ कि लोग देख कर दंग रह गये। गैरिक ने अपनी बनाई हुई "शेक्सपीअर के प्रति" कविता जब आर्ने के संगीत के साथ सुनाई, तो श्रोता भाव-विभोर बन गये!

तब से प्रसिद्ध कलाकार स्ट्रैटफोर्ड में आने लगे। प्रसिद्ध अमेरिकन उपन्यास-लेखिका मेरी कारेली तो यहीं आकर बस गई थी।

शेक्सपीअर स्मारक ट्रस्ट की स्थापना १८४७ में हुई, जब उनका घर नीलाम पर चढ़ चुका था। देश के नाम पर एक अपील निकाली गई जिससे आई रकम से उस घर को नहीं, उनकी पत्नी के नैहर वाले घर को भी खरीद लिया गया। धीरे-धीरे ट्रस्ट का विस्तार बढ़ता गया और आज यह ट्रस्ट शेक्सपीअर के सभी स्मृति-चिन्हों को सजीव बनाने में संलग्न है।

बहुत दिनों से कुछ उत्साही अभिनेता स्ट्रैटफोर्ड में आकर अपना अभिनय कौशल दिखला जाते हैं। इस सिलसिले को स्थायी बनाने के लिए १८७९ में शेक्सपीअर मेमोरियल थियेटर की स्थापना हुई। इसका श्रेय शेक्सपीअर के गाँव के ही निवासी श्री चार्ल्स फ्लावर को है, जिन्होंने अपनी सन्तान की तरह इस संस्था का लालन-पालन और वृद्धि-विकास किया!

किन्तु यह भी स्पष्ट है कि इस थियेटर को ऐसी प्रसिद्धी नहीं प्राप्त हुई रहती, यदि फ्रैंक बेनसन ऐसे कलाकार ने अपनी पूरी शक्ति इसके विकास में नहीं लगा दिया होता। बेनसन का अभिनय यूरप भर में प्रसिद्ध था। जब उसने स्ट्रैटफोर्ड में जाकर, शेक्सपीअर की स्मृति में, हर वर्ष अभिनय

करना शुरू किया, तो लोगों को झख मार कर स्ट्रैटफोर्ड जाने को लाचार होना ही पड़ा। यहाँ एक बात याद रखने की है। लंदन के अखबार स्ट्रैटफोर्ड के इस थियेटर का विरोध बहुत दिनों तक करते रहे। उनका कहना था कि मेमोरियल थियेटर लंदन में बनना चाहिये, जो शेक्सपीअर की कर्मभूमि रही है, न कि स्ट्रैटफोर्ड ऐसे मामूली गाँव में जहाँ धन और जन दोनों का अभाव है!

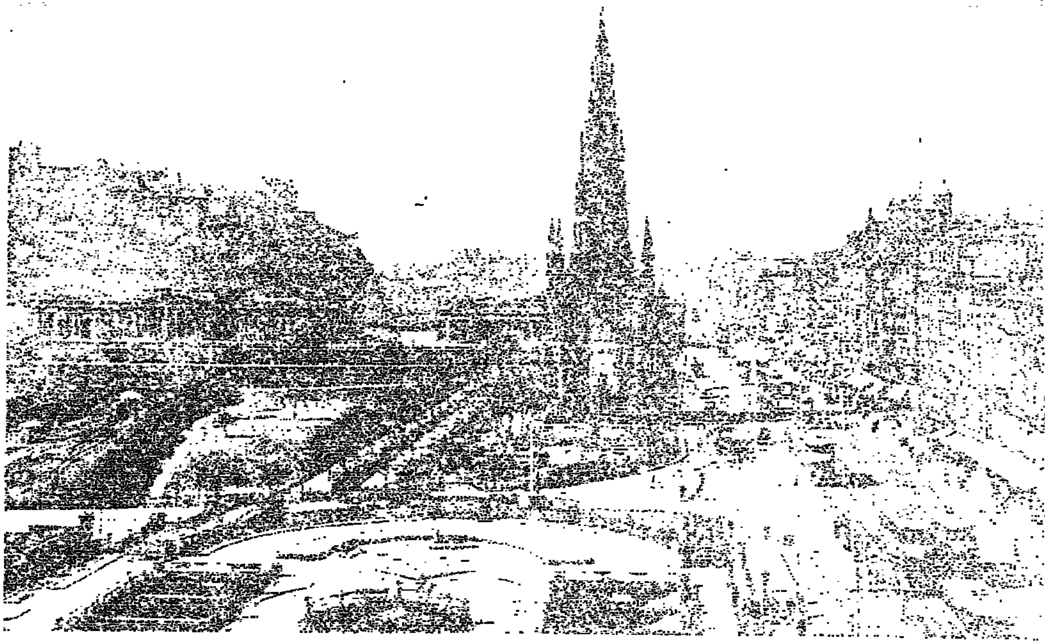
किन्तु स्ट्रैटफोर्ड के भाग्य को लंदन छीन न सका, इसका बहुत कुछ श्रेय बेनसन को है। बेनसन ने अभिनेताओं के दो दलों को अफ्रीका और अमेरिका भी भेजा। अमेरिका के दल में वह स्वयं था। तभी से अमेरिका और कनाडा का ध्यान शेक्सपीअर की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुआ।

थियेटर का दुर्भाग्य कहिये या भाग्य कि १९२६ में उसमें आग लगी और पुराना भवन नष्ट हो गया। यह दुर्भाग्य भी भाग्य में परिणत हो गया जब इसके लिए दो लाख पौंड का चंदा देश-विदेश से आया और उसी रकम से यह नवीन नाट्य-मन्दिर तैयार हुआ है! दो लाख पौंड में सवा लाख पौंड तो अमेरिका से ही आया था!

शेक्सपीअर की जन्मभूमि और न्यू प्लेस को तो हमने पहले ही देख लिया था। आज यहाँ से बिदा होने के पहले हमने उनसे सम्बद्ध शेष स्थानों को भी देखने का तय किया।

किन्तु आज तो रविवार है। कुछ स्थान सिर्फ २–४ बजे तक खुले रहते हैं, उन्हें भीतर जाकर देखा—शेष को बाहर से ही प्रणाम किया।

स्ट्रैटफोर्ड से डेढ़ मील की दूरी पर अन्ने हैथवे की झोपड़ी है। इसी झोपड़ी में अन्ने का जन्म हुआ था और यहीं शेक्सपीअर से उसका प्रेम हुआ था। अब भी वह फूस की झोपड़ी ही है, हाँ, उसके चारों ओर फूलों की वाटिका है, जो उसकी शोभा को सौ गुना बढ़ा देती है।



प्रिंसेस स्ट्रीट—एडिनबर्ग

घ : स्काटलैंड की झलक !

१२।५।५१

एडिनबरा : राजमहल और झोंपड़ी

हाँ, पैरों में पँख बाँध कर ! नहीं तो, स्काटलैंड की राजधानी को एक दिन में भला क्या देखा जा सकता है? जिसका इतना पुराना इतिहास हो, जिसमें इतनी अधिक संस्थायें हों, जिसपर सारे स्काटलैंड को नाज़ हो, उसके लिए सिर्फ कुछ घंटे क्या हैं?

ओफिसियल प्रोग्राम में एडिनबरा के लिए कुछ ख़ास निर्देश भी नहीं था—सिर्फ 'साइट सीयिंग' के लिए कुछ समय रख दिया गया था !

मिस शा आईं और हमें यहाँ के दो प्राचीनतम ऐतिहासिक स्थान देखाने ले गईं। पहला स्थान है "एडिनबरा का किला !" एडिनबरा का यह सबसे पुराना और प्रसिद्ध स्थान है। यह किला एक पहाड़ी पर बसा है। इसकी सबसे पुरानी इमारत ११ वीं शताब्दि की है। महारानी मारगरेट एक बड़ी श्रद्धालु और ईश्वर-भक्त रानी थीं। उनकी यादगार में 'सेंट मारगरेट चैपल' के नाम से यह स्थान पवित्र है ! इस किले के चप्पे-चप्पे पर इतिहास की मुहर है। क़िले के हेडवार्डर ने हमें एक-एक कर दिखलाया। वह पुराना कुँआ जो समुद्र की सतह से बहुत ऊँचा है, तो भी जिसमें हमेशा ३० फीट पानी भरा रहता है। किले पर जब घेरे डाले जाते थे, इसी का पानी सब का आधार होता था। वह घर जिसमें स्काटलैंड के अन्तिम राजा का राजमुकुट और परिधान रखा हुआ है। वह लम्बा हौल जिसमें स्काटलैंड की पार्लियामेंट १६३२ में पहली बार और १६३७ में आखिरी बार बैठी थी। इसी हौल में स्काटलैंड

के पुराने वीरों के अस्त्र-शस्त्र रखे हुए हैं। एक तलवार ५--६; फीट से कम की नहीं होगी। एक ढाल है जिसके भीतर से गोली भी चलाई जा सकती है।

किन्तु मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया शहीदों का स्मारक किले के एक भाग में यह स्मारक बनाया गया है। भवन के द्वार पर ही लिखा है—Lest we forgt 'कहीं हम उन्हें भूल न जायँ, भीतर बहुत बड़ा हाल है---दीवारों पर खुदाई की तस्वीरें हैं। जहाँ-जहाँ लड़ाइयाँ हुईं और उनमें जो-जो वीर मारे गये, सबके नाम एक बड़ी पुस्तक में लिखकर रख दिये गये हैं। वह पुस्तक निकाली नहीं जाती। हाँ, भिन्न-भिन्न लड़ाइयों के शहीदों की पुस्तकें अलग-अलग रख दी गई हैं; जिन्हें कोई भी देख सकता है। दीवारों पर प्रसिद्ध युद्धों और वीरों के चित्र बनाये गये हैं। उनके द्वारा प्रयोग किये गये हथियारों का भी संग्रह है। यही नहीं, जिन जानवरों का प्रयोग उन्होंने सवारियों के लिए किया है, उनके सिर के चित्र भी बड़े मनोरम बनाये गये हैं।

जब मैं उन्हें देख रहा था, बार-बार यह बात याद आती थी कि क्या हम लोग अपने शहीदों के लिए कुछ ऐसा नहीं कर सकेंगे! १८५७ से लेकर १९४७ तक जितने शहीद हुए, कमसे कम उनके नाम और पते की भी तो हम एक सूची बना लेते! यह सूची दिल्ली के राजकीय भवन में रख दी जाती। सोचा, श्रद्धेय राजेन्द्र बाबू को एक पत्र लिखूँ। जब वह १९३४ में राष्ट्रपति थे और कांग्रेस की स्वर्ण-जयन्ती मनाने की तैयारी हो रही थी, मैंने शहीदों की स्मृति में कुछ किये जाने का निवेदन किया था। उन्होंने तुरत ही जयन्ती के कार्यक्रम में शहीदों की स्मृति में श्रद्धांजलि अर्पित करने की बात भी जोड़ दी। क्या इस बार की मेरी प्रार्थना कुछ फल लायेगी?

"एडिनबरा का क़िला" देख कर हम दूसरे प्रसिद्ध स्मारक होलीरूडहाउस के मठ और प्रासाद को देखने गये। मठ का भग्नावशेष-मात्र रह

गया है, हाँ, प्रासाद अब भी सुरक्षित है और इंगलैंड के राजा जब आते हैं तो इसी में ठहरते हैं। हमने उस लम्बे हॉल को देखा, जिसमें स्काटलैंड के एक सौ ग्यारह राजाओं के चित्र हैं। कहा जाता है कि राजा चार्ल्स दूसरे ने एक चित्रकार को कहा कि तुम जितने राजाओं के चित्र बनाओगे, हर चित्र पर तुम्हें पुरस्कार मिलेगा। उसने ईसा से ३३० वर्ष पीछे से लेकर चार्ल्स के समय तक के ये चित्र बना दिये। इनमें बहुत-से चित्र तो काल्पनिक हैं; जो चित्र ऐतिहासिक हैं, वे बहुत ही सजीव हैं और उस कलाकार की कूची के गौरव की सूचना आज भी देते हैं!

उसके बाद हमलोग स्काटलैंड की प्रसिद्ध रानी मेरी का भवन देखने गये। मार्गदर्शक ने बड़े अच्छे ढंग से सारी चीजें दिखाईं। भवन की सजावट पुरानी ही रखी गई है। राजा-रानी की शयन-शय्या भी उसी तरह सजा कर रखी गई है। जिस कमरे से घसीट कर षड्यंत्रकारियों ने उसके मंत्री को मार डाला, हमें वह कमरा दिखाया गया, जिस रास्ते से षड्यंत्रकारी आये, वह सुरंग दिखलाया गया और जहाँ उसकी हत्या की गई, वह स्थान दिखाया गया।

पुरानी चीजों की किस तरह रक्षा की जाती है, यह तो यहाँ आने पर ही ज्ञात हुआ! छोटी-से-छोटी ऐतिहासिक वस्तु भी किस तरह संयोग कर रखते हैं ये!

इंगलैंड के राजा आने वाले हैं, अतः प्रासाद के उस भाग को हम नहीं देख सके!

यह हमारे लिए सौभाग्य की बात थी आज ही स्काटलैंड के "पाइप बैण्ड" [illegible] पाइप बैण्ड स्काटलैंड का राष्ट्रीय बाजा है। [illegible] बजाने वाले इस प्रतियोगिता में भाग लेने को आये थे। बाजे की हर पार्टी में कम से कम १२ आदमी और अधिक से अधिक २४ आदमी होते हैं। इनकी पोशाकें देखते लायक थीं। [illegible] की [illegible]—लहराते हुए दुपट्टे—पाइप की सुरीली काकली; बैंड की

मधुर धमक। फिर ताल पर पैरों का उठना, मोड़ लेना, नाचते हुए से बाजे का करतब दिखाना! दर्शकों की भीड़ लगी थी। तालियों की गड़-गड़ाहट! सबसे अधिक आकर्षक थी लड़कियों की एक पार्टी! १२ वर्ष से १८ वर्ष तक की लड़कियाँ। अंगों से अभी जवानी झाँक ही रही थी। कड़ाके का जाड़ा। तो भी अधबहियाँ ही पहने हुईं। किन्तु, जब उनका मार्च शुरू हुआ, कान ही तृप्त नहीं हुए, आँखें भी तृप्त हुईं। उनमें से आधे दर्जन लड़कियाँ बाजे के बीच में हो जूते निकाल कर नाचने भी लगीं। चारों ओर से तालियों की गड़गड़ाहट!

ओवरसीज लीग की ओर से हमें शाम का निमन्त्रण था। रसेल साहब यहाँ भी थे। बिहार के बारे में फिर भी बातें होती रहीं!

एक बात सारे ब्रिटेन में विचित्र देख रहा हूँ। जहाँ कहीं भारत सम्बन्धी बातें होंगी, कश्मीर का प्रश्न ज़रूर आ जायगा और प्रायः सभी लोग पाकिस्तान के पक्ष का समर्थन करते हैं। अपनी ओर से हमने इस सम्बन्ध में अच्छा प्रचार नहीं किया है, यह स्पष्ट है। इसके लिए भी हम इण्डिया आफिस को दोष दे सकते हैं।

अब हमें थोड़ी देर फुर्सत थी। सोचा, हम स्वयं घूम-फिर कर कुछ देखें!

हमारे होटल के सामने ही यह प्रिंसेस स्ट्रीट है, जो यूरोप की सबसे अच्छी स्ट्रीट समझी जाती है! इसकी एक ओर शानदार इमारतें हैं, दूसरी ओर पार्क! पार्क के किनारे जो बड़ी ऊँची शानदार [illegible] उसके भीतर वह किसकी मूर्त्ति है! सुप्रसिद्ध लेखक स्काट [illegible] व्यक्तियों की ऐसी क़द्र करना कब सीखेंगे? एडिनबरा में भी मूर्त्तियों की कमी नहीं—बड़ी खूबसूरत और शानदार मूर्त्तियाँ। नेल्सन, विलिंग्टन आदि वीरों के ही नहीं, पर्यटक, आविष्कारक, समाजसेवी, कलाकार सब की मूर्त्तियाँ जगह-जगह दिखाई पड़ती हैं!

हाँ, तो प्रिंसेस स्ट्रीट और उसकी बगल का यह पार्क! पहले यहाँ झील थी; झील को पाट कर पार्क बना दिया गया है। पार्क के उस तरफ

झोपड़ी के भीतर वह बेंच रखी हुई है जिसपर अन्ने और विलियम दोनों बैठते और प्रेमालाप किया करते थे। यह बेंच अँगीठी की बगल में रखी हुई है। कहा जाता है, अन्ने और विलियम दोनों एक साथ एक तरफ बैठते दूसरी तरफ अन्ने की माँ और पिता बैठते। इसी अँगीठी के सामने विवाह का अन्तिम निर्णय हुआ था। यह तो सबको मालूम ही है कि अन्ने विलियम से पाँच बरस बड़ी थी। किन्तु प्रेम में उम्र क्या, दूरी क्या?

इस झोपड़ी की भी एक-एक चीज़ को सुरक्षित रखा गया है। हम उन्हें देखते और मन ही मन अँगरेज जाति की गुण-ग्राहकता को दाद देते लौटे। आज उस कुटिया में दर्शनार्थियों की ऐसी भीड़ लगी थी कि क्यू पर क्यू लगाने पड़ते थे!

शेक्सपीअर ने जिस ग्रामर स्कूल में पढ़ा था, वह बन्द था अतः उसे बाहर से ही प्रणाम कर लिया! हाँ, उस डेस्क की तस्वीर खरीद ली, जिस पर मास्टर विलियम लिखा करते थे!

उस भवन को भीतर जाकर देखा, जिसमें उनकी बेटी सुसान अपने डाक्टर पति के साथ रहा करती थी। शेक्सपीअर अपनी इस एकमात्र जीवित पुत्री को बहुत प्यार करते और अपने विद्वान और जनप्रिय दामाद पर भी उन्हें कम गर्व नहीं था। इस घर में वह प्रायः आया-जाया करते थे। यहाँ वे दोनों पलंग रखे हुए हैं जिनपर शेक्सस्पीअर की बेटी और दामाद सोया करते थे।

शेक्सपीअर लाइब्रेरी और गैलरी भी भीतर से नहीं देख सका। न उनकी माँ की नैहर वाला घर देख सका। किन्तु, उसके लिए उतना अफसोस नहीं हुआ, जितना शेक्सपीअर की समाधि नहीं देख पाने का। उस चर्च के निकट तो इस यात्रा में कई बार गया, किन्तु हमेशा बन्द रहने ही के समय। एवन नदी के किनारे चर्च बड़ा ही सुन्दर और शानदार है। भीतर ही वह रजिस्टर रखा है जिसमें शेक्सपीअर के बपतिस्मे और मृत्यु का उल्लेख है। शेक्सपीअर की समाधि पर ये पंक्तियाँ अंकित हैं...

Good' frend for Jesus sake forbeare
To dig the dust enceosed heare
Blese be ye man yt spares thes stones
And curst be he yt moves my bones.

इसमें शब्दों का रूप पुरानी अँगरेजी का है।

बचपन में मेरे बाबा ने कहा था, जब तीरथ जाना चाहिये, तो कोई एक चीज़ अनदेखे ही छोड़ देना चाहिये। तब वह चीज़ यात्री को दुबारा बुलाती है। क्या मैं आशा नहीं करूँ कि संसार के महानतम कलाकार की स्थियाँ जहाँ संचित हैं, वह विशाल भव्य गिरिजाघर फिर एक बार मुझे अवश्य बुलायेगा ?

जब मैं स्ट्रैटफोर्ड छोड़ रहा था, अजीब भावनामय बन गया था। मित्रों ने कहा कि क्या बात है कि आप इस प्रकार चंचल हैं ! उन्हें क्या बताऊँ ? कैसे बताऊँ ? क्या भावनाओं का शब्दरूप दिया भी जा सकता है ?

च : विदा, इंगलैंड !

२१।५।५१
लंदन : हिन्दीकेन्द्र

इस बार की विलायत-यात्रा की चरम सार्थकता रही, यहाँ लंदन में हिन्दी केन्द्र की स्थापना।

मेरी इस यात्रा के लिए जो शुभकामनायें आई थीं, उन सब में मुझ से यह आशा की गई थी कि मैं यहाँ पर कुछ ऐसा कर जाऊँगा कि हिन्दी का हित स्थायी रूप से हो। कुछ मित्रों ने मिलकर भी कहा था कि कुछ वहाँ ऐसा कर आइये कि लंदन में हिन्दी के लिए कुछ स्थायी काम होता रहे।

यहाँ जब आया, तो यहाँ के हिन्दी-प्रेमियों से चर्चा की। पहले तो लोगों ने निराशा दिखलाई। यहाँ जो आते हैं, थोड़े दिनों में चले जाते हैं। यहाँ कोई स्थायी काम कैसे हो सकेगा? फिर रुपये-पैसे कहाँ से आयेंगे? और पार्टीबंदी तो हम भारतीयों का पुराना रोग है—उससे कैसे बचा जायगा?

इन बातों का समाधान करता रहा और लोगों से मिलता रहा। डा० कमलकुलश्रेष्ठ से मिला, जिसकी चर्चा हो चुकी है। अन्ततः यह तय हुआ कि इसकी स्थापना की जाय और इसका उद्‌घाटन मेरे द्वारा ही कराया जाय।

भारत में लोगों को शुभकामना के लिए लिखा गया। यहाँ के हिन्दी-प्रेमियों को आमंत्रित किया गया। मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई कि भारत से भी उत्साहजनक पत्र आये और कल लगभग पचास व्यक्तियों को लंदन में एकत्र देखकर तो सचमुच तबीयत बाग बाग हो गई!

डा० कमल ने संक्षेप में इस संस्था की चर्चा की और मेरी प्रेरणा को प्रमुखता दी। तब बिहार के श्री माहेश्वरी सिंह महेश ने आगत सन्देशों को

पढ़ सुनाया। संदेशों में बिहार और उत्तर प्रदेश के शिक्षामंत्रियों का, सागर विश्वविद्यालय के कुलपति का, कलकत्ता विश्वविद्यालय के हिन्दी-विभाग के अध्यक्ष का तथा भारत-सरकार के संसद-मंत्री श्रीसत्यनारायण सिंह का सन्देश प्रमुख थे। फिर मैंने उद्घाटन किया। ५–६ मिनट का भाषण! इस केन्द्रके उद्घाटन करने के सौभाग्य को मैंने अपनी हिन्दी-सेवा में एक उल्लेख योग्य प्रमुख कार्य बतलाया और लोगों को उत्साहित किया कि भारत से आप लोगों को सम्यक सहायता मिलती रहेगी। फिर मैंने अपना सपना बतलाया कि मैं वह दिन देखना चाहता हूँ कि इस केन्द्र का लंदन में अपनी जगह होगी, अपना भवन होगा, एक सुन्दर पुस्तकालय इसके साथ संलग्न होगा जहाँ हिन्दी का पूरा साहित्य संग्रहीत होगा, यहाँ हिन्दी के विद्वान आकर बसेरा लेंगे और हिन्दी का सन्देश यूरप के अन्य भाषा भाषियों में प्रसारित करेंगे।

मंत्री की हैसियत से ओमप्रकाश जी ने इस हिन्दी केन्द्र की रूपरेखा रखी, जिसे हमलोगों ने पहले से ही तय कर रखा था।

उसकी रूपरेखा यों है—

नाम—

(१) इस संस्था का नाम हिन्दी केन्द्र है और इसका प्रधान कार्यालय लंदन में है।

उद्देश्य—

(२) हिन्दी भाषा और साहित्य का प्रचार और प्रसार करना तथा इसके विकास में योग देना।

कार्य रेखा—

(३) इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए यह केन्द्र निम्नलिखित कार्य करेगा—

(क) पुस्तकालय और वाचनालय स्थापित करना।

(ख) हिन्दी भाषा और साहित्य के पठनपाठन का प्रबन्ध करना।

(ग) उत्तमोत्तम हिन्दी ग्रन्थों को यूरोपीय भाषाओं में अनूदित कराकर तथा हिन्दी साहित्य के सम्बन्ध में यूरोपीय भाषाओं में पुस्तकें तैयार कराकर उनके प्रकाशन का प्रबंध करना ।

(घ) विदेशों में आये हिन्दी प्रेमियों की सृजनात्मक और समालोचनात्मक प्रतिभा के विकास के लिए और पारस्परिक विचार-विनियम के लिए साहित्य-गोष्ठियों का आयोजन करना ।

(ङ) हिन्दी के लेखकों को विदेशों में बुलाने का और विदेशी लेखकों को भारत भेजने का प्रबंध करना ।

(च) लंदन में एक हिन्दी प्रेस खोलने का प्रबन्ध करना ।

इस संस्था की सदस्यता के लिए वार्षिक ढाई शिलिंग शुल्क रखा गया है और ९ व्यक्तियों की कार्य-समिति होगी । कार्य-समिति के सदस्य पीछे चुन लिये जायँगे ।

निस्सन्देह इस केन्द्र की स्थापना के लिए प्रेरणा देकर मैंने अपने ऊपर एक बड़ी जिम्मेवारी ली है । बेचारी हिंन्दी की बड़ी बुरी हालत है । सम्मेलन अखाड़े बाजों का अड्डा हो गया है । टंडन जी को सम्मेलन का मोह अवश्य है, किन्तु राजनीति उन्हें फुर्सत कहाँ देती है । हिन्दी के अन्य उन्नायकों की भी दशा ऐसी ही है । एक ओर यह दशा, दूसरी ओर देखता हूँ, हिन्दी के लिए इस समय सबसे अधिक करना है । देश में भी नहीं, विदेश में भी । कुलश्रेष्ठ जी ने उस दिन बताया था कि किस तरह संसार के भिन्न-भिन्न भागों में लोग हिन्दी की परीक्षाओं में सम्मिलित होते हैं । क्या उन्हें संघबद्ध करना एक अति आवश्यक कार्य नहीं है ? फिर हिन्दी के साहित्य को विदेशी भाषाओं में ले जाना तो इस समय परम आवश्यक हो गया है । जब मौलाना आज़ाद ने कहा कि हिन्दी को अन्तराष्ट्रीय क्षेत्र में स्थान नहीं है, तो लोग बहुत बिगड़े थे । किन्तु उसके लिए प्रयत्न कितना किया जा रहा है ?

भारत लौटने पर इसके लिए अवश्य प्रयत्न करूँगा—देखूँ, कहाँ तक क्या कर पाता हूँ।

केन्द्र के उद्घाटन के बाद ही मैं चेकौव का "थ्री सिस्टरस" नामक नाटक देखने चला गया। चेकौव को नाटककार के रूप में हिन्दी वाले नहीं जानते! कहानी-लेखक की ही तरह नाटक लिखने में भी उसे कमाल हासिल था। रंगमंच की टेकनिक को वह पूरा समझता था, अतः उसके नाटक उसके समय में भी खेले गये और प्रसिद्धि पा सके थे।

लंदन में इस वर्ष जो फेस्टिवल चल रहा है, उसी के सिलसिले में इसे तैयार किया गया है। बड़ा ही सुन्दर नाटक है। एक मध्यवित्त परिवार की तीन बहनें—भाई कलाकार, भौजाई घर में। तीनों बहनों का अजीब विकास!—उनमें एक मास्को का सपना देखती है, दो जानतीं नहीं कि वह चाहती क्या हैं? अन्ततः फौज का पड़ाव वहाँ आ जाता है और उस घर में कुछ अफसर आने-जाने लगते हैं। तीनों बहनें तीन पर आशिक होती हैं, किन्तु एक दिन पड़ाव उठता है, अफसर विदा होते हैं और तीनों बहनें फिर जहाँ की तहाँ! नाटक का अन्त बड़ा सुन्दर हुआ है—मास्को का सपना देखने वाली सबसे छोटी और खूबसूरत बहन धैर्य दिलाती है—अब रोने-धोने से क्या होने वाला, हम चलें, अपना काम किये चलें। बस!

रंगमंच भड़कीला था। पहले अंक में दो दृश्य—पहले सेट अप में थोड़ा परिवर्तन। किन्तु दो बाद के अंकों का दृश्य अलग-अलग। इन दृश्यों को भी काफी यथार्थ वादी बनाया गया था। दूसरे दृश्य में एक खिड़की से दूर पर लगी आग की लपटें बड़ी खूबी से दिखाई गई थीं।

जब नाटक से लौट रहा था, देखा, एक जगह भीड़ जमा हो रही है। इस नाटक घर में बैले हो रहा है जिसमें मारकोवा काम करती है। मारकोवा नाम से मालूम होता है, कोई रूसी लड़की है। नहीं, है तो वह अँगरेज लड़की ही। किन्तु बैले के साथ रूस का ऐसा गठबंधन हो गया

है कि अँगरेज अभिनेत्रियाँ और अभिनेता भी जब वैले में आते हैं, अपना नाम बदल कर रूसी नाम रख लेते हैं। यह भीड़ नाटक-घर के पिछवाड़े में इकट्ठी हो रही थी। पिछवाड़े में ? किस लिए ? इसलिए कि मारकोवा इसी रास्ते से निकलेगी तो उसके दर्शन हो जायँगे और यदि उसने कृपा की तो बैल के प्रोग्राम पर उसका दस्तख़त भी ले लेंगे ! भीड़ में ज्यादा लड़कियाँ थीं। अँगरेज लड़कियाँ विचित्र होती हैं !

आज शाम को कामेश्वर के यहाँ जलपान किया। नाटक के टिकट का प्रबंध उन्होंने ही किया था। जब लंदन छोड़ने लगा, उनसे कह दिया था। नहीं तो यहाँ नाटकों के टिकट जब चाहिये, तब कहाँ मिलने वाले !

२२-५-५१
लंदन

आज आफिसियल यात्रा का यह अन्तिम दिन था। लंदन ने फिर अपना पुराना रूप धारण किया। भोर से ही बूँदा-बूँदी हो रही थी। लेकिन यहाँ बूँदा-बूँदी में कोई काम तो रुकता नहीं। कितने दिनों तक रुके? जब कि मौसम का कोई ठिकाना नहीं!

जब किसी अँगरेज से भेंट होगी तो वह सबसे पहले मौसम की चर्चा से बातें शुरू करेगा। इसका क्या मानी? इसका मानी यही है—मौसम की अनिश्चितता। और जिस दिन आकाश साफ रहा, सूर्य की किरणें दिखाई पड़ीं; तो कह उठेगा—कैसा अच्छा मौसम; सुन्दर, दिलचस्प! क्या-क्या नहीं कहेगा? होटल की दाई और खानसामा भी आपसे ऐसी ही बातें करेगा—और, कोई बड़ा आदमी भी।

आज सबसे पहले लियन्स कम्पनी का वह कारखाना देखने गया जहाँ चाय तैयार कर देश-विदेश भेजी जाती है। इंगलैंड में चाय नहीं होती। सैकड़े ६० चाय भारत से जाती है, ३० सिलोन से और १० में सारा संसार!

विदेशों से बक्सों में बन्द करके चाय आती है। मशीन द्वारा ही इन बक्सों को ऊपर ले जाते हैं। वहाँ चाय को साफ किया जाता है। कहीं उसमें से तिनके निकाले जाते हैं, कहीं कंकड़, लोहे के टुकड़े भी चाय से निकलते हैं। बक्सों को बन्द करते समय कांटी के टुकड़े चाय में गिर पड़ते हैं, काँटी की जंग भी गिर जाती है। एक मशीन में चुम्बक लगा रहता है, वहाँ लोहे के सारे टुकड़े इकट्ठे हो जाते हैं। अन्त में धूल झाड़ी जाती है।

यों जब चाय तैयार हो जाती है, तो उसके नमूनों की रसायनिक जाँच होती है। पानी में खौलाकर एक तरफ उसकी सीठी रखते हैं, दूसरी ओर ग्लास में चाय। जाँच करने वाला आता है, पहले रंग देखता है, फिर ज़रा-सी जीभ पर रखकर स्वाद की परख करता है। और रंग और स्वाद के आधार पर उनकी श्रेणी निर्धारित कर देता है। फिर उसी श्रेणी के अनुसार लेबुल लगाकर चाय बाज़ारों में भेज दी जाती है।

लेबुल लगाने की क्रिया भी बड़ी दिलचस्प—यों कहिये कि सबसे दिलचस्प यही। कत्तार में मशीनें लगी हैं। ऊपर से एक छोटे से छेद से चाय झड़ती जाती है। नीचे एक ओर से कागज लगता है, वह धीरे-धीरे मुड़ता, सिमटता हुआ खोल-सा बन जाता है, तब उसमें चाय झड़ती है, दूसरे पुर्ज़े चाय को दबाते जाते हैं, फिर उसका मुँह बन्द होता जाता है और अन्त में उसपर लेबल सट जाता है। ये सारे काम मशीनें कर देती हैं, तब लड़कियाँ पैकेटों को इकट्ठा करती और हटाती जाती हैं। फिर उन्हें बक्सों में बन्द कर बाहर ले जाते हैं। चाय को देश विदेश भेजने के लिए अपनी रेल लाइन है, अपनी बसें हैं और अपनी मोटर-बोटें हैं।

कम्पनी ने ही हमें भोजन कराया। भोजन भारतीय ढंग का था। मांस बिल्कुल नहीं था। चावल भी बनाया गया था और अन्त का पापड़ तो सबसे अधिक मज़ेदार था। हममें से एक आदमी ने हँसते हुए कहा—Lyns यदि चाय के साथ पापड़ भी बनाया करे तो उसकी माँग संसार से होने लगे! फिर हम डेअरी देखने चले।

समूचे इंगलैंड के ९० सैकड़े लोगों को सिर्फ तीन कम्पनियाँ दूध पहुँचाती हैं—यूनाइटेड डेअरी, एक्सप्रेस डेयरी और कोआपरेटिव डेअरी। देश के कोने-कोने से इनके पास दूध पहुँचता है और वे इसे वैज्ञानिक ढंग से तैयार कर, बोतलों में बंदकर फिर शहर-शहर, घर-घर पहुँचा देती हैं। यूनाइटेड डेअरी में ही प्रतिघंटा सत्तर हजार बोतलें दूध की तैयार होती हैं!

रेलों में इनके पीपे वाले खास डब्बे होते हैं। स्टेशन-स्टेशन से दूध

उनमें रखा जाता है। रेल के ये डब्बे कारखाने तक सीधे पहुँचाये जाते हैं। वहाँ से पीपे के दूध को नल द्वारा भीतर ले जाते हैं। वहाँ उसे पास्चराइज्ड करते हैं—बहुत गरम करके एक खास तरीके से उसे ठंडा किया जाता है। ऐसा करके दूध को कीटाणुओं से रहित कर दिया जाता है, किन्तु उसका स्वाद नहीं बिगड़ता।

दूध कई तरह के बनाये जाते हैं। बच्चों के लिए एक किस्म का, बीमारों के लिए दूसरे किस्म का, साधारण लोगों के लिए तीसरे किस्म का। कुछ दूध खास कर टी० बी० वाले रोगियों के लिए बनाते हैं। अलग-अलग किस्म के दूध अलग-अलग बोतलों में रखे जाते हैं और उन बोतलों पर अलग-अलग ढंग के लेबुल लगाते हैं। ये सारे काम मशीनों से ही होते हैं। बोतलों को कैसे साफ करते हैं, उसे देखकर भी आश्चर्य होता है। व्यवहार की गई बोतलें बीस क्रियाओं के बाद शुद्ध होती हैं—जब मशीन से वे निकलती हैं, चमाचम दिखाई पड़ती हैं।

वहाँ से संध्या की चाय लेकर हम फिर होटल में पहुँचे। पहले से ही तय था, कि आज 'श्री' के साथ मारकोवा का 'बैले' (Ballet) देखने जायँगे। श्री ने कह रखा था कि ५॥ बजे आवेंगे, ६॥ बजे से बैले है। साढ़े छः बजे तक प्रतीक्षा करता रहा, वह नहीं आया। बड़ी चिन्ता हुई। क्या उसकी तबीयत खराब हो गई, या कोई घटना हुई। इसी प्रकार चिन्ता में था, कि वह आ गया। उसे किसी ने कह दिया था कि बैले ६॥ बजे से है, किन्तु वैसी बात नहीं थी। बैले साढ़े सात बजे से था।

मारकोवा का बैले—फेस्टिवल बैले। बैले की जन्मभूमि रूस है। रूसी नर्तकी पैव लौवना ने बैले में जान डाल दी। अब तो कला का यह रूप सारे संसार में प्रख्यात और जनप्रिय हो चला है। नृत्य में इंगलैंड पिछड़ा रहा है। किन्तु वह भी बड़ी तेजी से अपने पड़ोसियों से प्रतिस्पर्धा कर रहा है।

बैले—वाद्य और नृत्य का यह संगम। कहीं एक शब्द नहीं सुनाई पड़ेगा। मंच के नीचे वादकों का एक बड़ा गिरोह; ऊपर नर्त्तक और

नर्त्तकियों का एक बड़ा गिरोह। नीचे से सिर्फ वाद्य द्वारा जो संगीत प्रस्तुत किया जा रहा है, उसी आधार पर स्टेज पर नृत्य हो रहा है !

पूरे फेस्टिवल के लिए लगभग एक दर्जन टुकड़े तैयार किये गये हैं। हर टुकड़ा किसी-न-किसी प्रसिद्ध कहानी या कविता से सम्बन्ध है। प्रति-दिन प्रायः तीन टुकड़े प्रदर्शित किये जाते हैं। प्रायः ऐसा क्रम रखा जाता है कि तीनों तीन किस्म के हों। एक पूरा भावात्मक; एक करुण कथात्मक और एक व्यंग्यात्मक।

आज भी तीनों ही किस्म की चीज़ें थीं। उफ़, देखकर मुग्ध हो गया। नीचे एक संगीत-निर्देशक और ३८ वाद्यक थे। निर्देशक के हाथ के इशारे पर सभी वाद्यक अपने-अपने बाजों को बजाते थे। क्या कहीं भी सुर-भंग या बेसुरापन था ? स्वर के ऊँचे से ऊँचे उठान तक और नीचे से नीचे उतार तक ले जाते थे। ऐसे उठान तक जहाँ कि स्वर एक महान हिल्लोल-मात्र बन जाता था और ऐसे उतार तक जब स्वर मौन के स्तर तक उतर आता था। उठान के समय निर्देशक की भंगिमा देखने ही लायक होती थी। बाल इधर-उधर लहरा रहे, हाथ अजीब ढंग से आस्फालन कर रहे, समूचा शरीर इस प्रकार आन्दोलित हो रहा मानो वह भी कोई वाद्य-यंत्र हो ! और ऊपर देखिये, इस स्वर के चढ़ाव और उतार के ही ताल पर नर्तक-नर्तकियों के हाथ, पैर और अंगों की भंगिमा हो रही। उनकी संख्या भी कोई छोटी नहीं—एक नृत्य में तो उनकी संख्या २५ थी। किन्तु पचीसों की भंगिमा ऐसी होती कि तन्मयता से देखनेवालों को वे सब मिलकर एक ही कड़ी दिखाई पड़ते।

तीनों नृत्य के पर्दे भी अलग और नर्तक और नर्तकियों की पोशाक में भी भिन्नता और विविधता। नर्तकियों के सुडौल शरीर तो साँचे में ढले से मालूम होते ! स्थूलता तो उनमें से किसी में नहीं। पतला, छरहरा बदन। सुडौल अंग, पतली कमर, फूल-सी छातियाँ ! जब वे नृत्यशील होतीं, सचमुच किसी स्वप्न लोक की परियों-सी मालूम पड़तीं !

दर्शकों के बैठने की दृष्टि से यह रंगमंच अन्य मंचों से विशाल और पृथक था। सामने की सीटों के पाँच महल बनाये गये थे और बगल में चार। रंगमंच पर तरह-तरह के प्रकाशों का विक्षेप भी बड़ा मनोरम था!

हाँ, इनके वाद्य का निर्देशक कोई एक व्यक्ति नहीं था। तीनों टुकड़ों के तीन भिन्न-भिन्न निर्देशक थे। तीनों में जैसे होड़ हो कि किसका संगीत सबसे सुन्दर होता है!

आह, अपने देश में इन चीज़ों का निर्माण हम कब कर सकेंगे?

बैले के बाद श्री के साथ ही रामनवमी बाबू से मिलने गये। रामनवमी बाबू हमारे जिले के प्रमुख वकील हैं। गाँधीजी के साथ चम्पारण में काम किया था। जयप्रकाशजी के अभिभावक भी रह चुके हैं। बड़े सज्जन व्यक्ति हैं। क्या मन में आया कि अकेले यूरप देखने को चल पड़े हैं। परसों भारत लौटने वाले हैं। बड़े प्रेम से मिले और कहने लगे, यूरोपीय सभ्यता के बारे में हमारी धारणा बहुत ही भ्रान्त है। दोष कहाँ नहीं हैं, किन्तु इनकी कितनी ही चीज़ें हैं, जिन्हें हम जीवन में उतारें तो हमारा देश कहीं आगे बढ़ जाय! उनके मुँह से ऐसी प्रशंसा सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ। मेरा विचार उनसे बहुत कुछ मिलता जुलता है।

लंदन, २३–५–५१

कीट्स-स्मारक; मोम की मूर्तियाँ

तय हो गया है कि हम २५/५ को संध्या को इस देश से प्रस्थान कर रहे हैं। कुल तीन दिन रह गये हैं और इतना देखना रह गया है।

दो इच्छायें तो थीं ही—एक तो लेक डिस्ट्रिक्ट देखने की, जहाँ के प्राकृतिक सौन्दर्यों को वर्ड्सवर्थ ने अमरता दे दी है और दूसरी, अपने आराध्य शॉ की कुटिया देख आने की।

किन्तु अभी तो लंदन में ही इतना देखना रह गया है कि बाहर जाने का सोचा भी नहीं जा सकता!

आज सबसे पहले कीट्स के स्मारक भवन को देखने चले! दिन अच्छा था। साथी भी अच्छे मिले। महेश जी थे, तूफान साहब थे और थे रमाशंकर जी!

रमाशंकर जी—यह सारन के एक युवक हैं। १९४१ में इनसे छपरा जेल में भेंट हुई थी। १९४२ में काम किया, फिरार हुए! जब राष्ट्रीय मजदूर संघ बना, उसकी ओर से सिंदरी में काम करने गये और तब से अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर-संघों में ही प्रतिनिधित्व करने से फुर्सत नहीं पा रहे। अब अपनी पत्नी को भी यहाँ बुला रहे हैं और इच्छा करते हैं कि लंदन स्कूल आफ एकोनौमिक्स से बी० एस-सी० भी कर ही लें!

लंदन में कौन, क्या काम से आया और क्या कर रहा है, इसकी जाँच-पड़ताल भी कम मनोरंजक नहीं होगा। मुझे प्रसन्नता इसी बात की हो रही है कि बिहार के युवक बड़े ही घर-घुस्सन समझे जाते थे, किन्तु यहाँ जब से आया हूँ, बिहार के युवक कहीं न कहीं जरूर मिल जाते हैं!

लंदन में चार साहित्यकों के जन्म और कर्मस्थान सुरक्षित रखे गये हैं—जौन्सन के, डिकेन्स के, कार्लाइल के और कीट्स के। मैंने एक ही पर सन्तोष कर लेने का निश्चय किया।

कीट्स जिस भवन में रहते थे, उनकी स्मृति की सारी चीजें वहीं सुरक्षित करके और उसमें एक नया शानदार हिस्सा जोड़ कर, उसे ही उनका स्मारक भवन बना दिया गया है। यह भवन कोई उतना बड़ा तो नहीं, किन्तु वातावरण को कुछ ऐसा सुन्दर और सजीव बना कर रखा गया है कि मालूम होता है, अचानक कहीं से निकल कर अभी-अभी कीट्स आपसे बातें करने लगेंगे। बहुत लोगों का कहना है कि विशालता की दृष्टि से नहीं, तो सजीवता की दृष्टि से, यह स्मारक इंगलैंड के सारे स्मारकों में श्रेष्ठतम है!

मौसम अच्छा था, सुनहली धूप ने सारे स्मारक को रंगीन बना रखा था। ज्यों ही फाटक से भीतर घुसिये कि बाईं ओर वह मलबेरी का पेड़ दिखाई पड़ता है, जिसकी डाल पर वह बुलबुल बोली थी जिसकी आवाज़ ने कवि को 'ओड टू नाइटेंगिल' लिखने को विवश किया था बुलबुल चीखती जाती थी, कवि लिखता जाता था। उधर बुलबुल की बोली रुकी, इधर कविता रुकी। इस स्मारक भवन में कीट्स के हाथ की लिखी वह कविता सुरक्षित है और घर में घुसने पर लोगों ने बतलाया कि इसी स्थान पर बैठ कर कीट्स ने वह कविता लिखी—उस स्थान से उस मलबरी के पेड़ की फुनगी दिखाई देती है।

मलबरी का पेड़ पुराना पड़ गया है, वह झुकते-झुकते नीचे पृथ्वी का आलिंगन करने पर तुला है। किन्तु, बड़े लाड़-प्यार से उसे ज़िन्दा रखा जा रहा है और उसे सड़ने-बर्बाद होने से बचाया जा रहा है।

कीट्स के भवन में घुसिये, तो दाहिनी ओर का वह कमरा मिलेगा जिसमें कीट्स की प्रेमिका और पत्नी फेनी ब्राउने रहती थी। कीट्स के कई चित्र टँगे हैं, कुछ पुस्तकें रखी हैं! उसकी बगल में ही कीट्स के प्यारे मित्र ले हंट का वह टेबल अब भी रखा हुआ है जिसे अपने अगल-बगल कीट्स, शेली, लैम्ब, हैजलिट, डिकेन्स और थैकरे ऐसे अँगरेजी के महान साहित्यकार को बैठाने का सौभाग्य प्राप्त हो चुका है।

इस भवन के दुमंज़िले पर वह कमरा है जिसमें बैठ कर कीट्स लिखा-पढ़ा करता था। वह एक कुर्सी पर बैठता था, एक कुर्सी पर हाथ रखता था। दो कुर्सियां पर जिस तरह वह बैठता था, वे उसी तरह खिड़की के निकट रखी हुई हैं। कीट्स ने अपने एक मित्र को लिखा है कि जब मैं उन कुर्सियों पर बैठ कर पढ़ता होता हूँ, तो ऐसा ध्यानमग्न हो जाता हूँ कि मालूम होता है, मैं एक तस्वीर ही हूँ। उसके एक मित्र चित्रकार ने एक चित्र बनाया था जो कीट्स के उपर्युक्त भावों का सजीव चित्रण था। उसी चित्र के अधार पर ये दो कुर्सियाँ बनाईं और रखी गई हैं, जो कीट्स के एक भारतीय प्रेमी मि० वकील की भेंट है। इसी घर में कीट्स का वह तैल रखा गया है जो उसके जीवन-काल में ही, १८२० में, बनाया गया था।

इस भवन में ही कीट्स का शैया-कक्ष है और ब्राउन का भी शय्याकक्ष है। कीट्स के शय्याकक्ष को देखकर अब भी हृदय द्रवीभूत हो जाता है। इसी घर में कीट्स ने अपने बलगम में खून का धब्बा देखा था, जिसे उसने अपनी मौत का वारंट बतलाया था। यहीं वह क्षयरोग से पीड़ित शोफे पर पड़ा रहता था। यहीं से शोफे पर पड़े पड़े वह बगीचे को देखा करता था जहाँ फेनी टहलती रहती थी। इसी कमरे से उसने बुलबुल की वह आवाज़ सुनी थी और वह अमर कविता लिखी थी।

कीट्स के समय का एक प्लम का वृक्ष भी था। वह तो नहीं रह गया। हाँ, उसी की एक कलम उतार कर उसे फिर से रोप दिया गया है।

कीट्स के भवन से सटा हुआ उसी हाते में एक बड़ा ही सुन्दर भवन बनाया गया है जिसमें एक बड़ी लाइब्रेरी और म्यूज़ियम है। म्यूज़ियम में कीट्स-सम्बन्धी वस्तुओं का अपूर्व संग्रह हुआ है और अभी होता ही जा रहा है। कीट्स के बहुत से पत्र, कीट्स की लिखी पुस्तकों और कविताओं की हस्तलिपियाँ, कीट्स द्वारा पढ़ी गईं पुस्तकें, जिनके मार्जिन पर उसने कुछ लिख रखा था, मेडिकल स्कूल का वह रजिस्टर,

जिसमें कीट्स का नाम लिखा हुआ है—क्या-क्या न संग्रह कर दिये गये हैं। कीट्स की वह अँगूठी है जिसे उसने अपनी पत्नी को विवाह के अवसर पर दिया था। पत्नी के व्यवहार में आने वाली क्लिप हैं, कैंची है, चाकू है, ब्लाउज है, रूमाल है। कीट्स जिस दावात और कलम से लिखता था, वह भी है और हैं उसके बालों के दो गुच्छे भी, जो उसकी मृत्यु के बाद पुण्यस्मृति के रूप में काट कर रख लिये गये थे। वे सुनहले बाल—अब भी उस चेहरे की याद दिला रहे थे जो मासूमियत का अवतार था और जो चढ़ती जवानी में ही मुरझा कर सूख गया था।

उसके बहुत से पत्रों में से एक पत्र को मैं पढ़ रहा था जिसे उसने अपने एक मित्र को अपने लिए एक मकान ढूँढ़ देने के लिए लिखा था। मकान के बारे में उसने लिखा था—उसको शान्त वातावरण और सस्ते भाड़े पर विशेष ध्यान रखना—Quietness and cheapness is assential. हाय रे सरस्वती के सपूतों का भाग्य!

म्यूजियम में कीट्स की एक सुफेद संगमरमर की बड़ी ही भव्य मूर्त्ति है, जिसे उसके किसी अज्ञात अमेरिकन प्रेमी ने इस संग्रहालय को अर्पित किया है! जैसी भावुक आत्मा; वैसी ही भावनामयी प्रतिमा और उसी प्रकार का भावुक दाता!

लाइब्रेरी भी काफी बड़ी है। साधारण साहित्य के अतिरिक्त कीट्स के सहवर्ती साहित्यकारों के साहित्य का बड़ा ही प्रामाणिक संग्रह है यहाँ!

यह स्मारक-भवन लंदन के एक कोने में है। पहले यह स्थान लंदन से बाहर था, अब तो लंदन इससे भी आगे फैल गया है। शहर से बाहर रहने के कारण ही यहाँ के शान्त वातावरण ने कीट्स को यहाँ रहने के लिए अनुप्राणित किया था।

यहीं काफी समय लग गया। रास्ते में ही एक रेस्तराँ में भोजन किया फिर घूमते-फिरते मदाम तूसाद की मोम की मूर्त्तियों की प्रदर्शनी देखने गया। यह प्रदर्शनी संसार में अनोखी है। मोम से, इस

प्रकार जीवित दिखाई पड़नेवाली मूर्त्तियाँ, इतनी बड़ी संख्या में, शायद ही कहीं बनाई गई हों।

२५ गिरोह में ३४२ मूर्त्तियाँ भवन के भिन्न-भिन्न हिस्सों में सजा कर रखी गई हैं और इसके अतिरिक्त चैम्बर आफ हौरर—विभीषिका-कक्ष में ६० मूर्त्तियाँ हैं। ज्यों ही आप फाटक पर पहुँचेंगे इधर-उधर द्वारपालों की जो मूर्त्तियाँ हैं, आप उन्हीं से रास्ता पूछने की ग़लती कर सकते हैं।

मूर्त्तियों के गिरोह भी बहुत सोच-समझ कर बनाये गये हैं। उदाहरण-स्वरूप—साहित्यकारों का एक गिरोह है जिसमें चौसर, शेक्सपीअर, बर्नार्ड शा आदि १५ साहित्यकार इस प्रकार सजाये गये हैं कि मालूम होता है, अभी-अभी इनकी कोई मजलिस बैठी है। शेक्सपीअर उधर नाटकीय ढंग से खड़े हैं, बर्नार्ड शा अपनी लहराती दाढ़ी को लिये हुए कुर्सी पर बैठे हैं, स्काट अपने बड़े कुत्ते के साथ कहीं जाने की तैयारी में हों जैसे ! कामन-वेल्थ का जो गिरोह है उनमें जवाहरलाल कुर्सी पर बैठे हैं, जिन्ना साहब खड़े हैं, सेना नायक, मलान आदि भी अपनी विचित्र वेषभूषा में हैं। इंगलैंड के वर्तमान मजदूर-मंत्रिमंडल के गिरोह में बीच में एटली और चारों ओर अन्य मंत्री हैं। बेवान के इस्तीफे के कारण एक कुर्सी खाली है। वर्तमान राज्य-परिवार की मूर्त्ति भी बड़ी मनोरम है। "भूत की विभूतियाँ" में गाँधी जी की भी मूर्ति है। रानी मेरी के कत्ल का दृश्य तो बड़ा करुण है और फ्रांस की वह अनिन्द्य सुन्दरी मालूम होती है, अभी सोई है, जिसके सौन्दर्य की धूम थी किन्तु जिसे फ्रांस की क्रान्ति का बलिदान हो जाना पड़ा। ऐसा कौशल किया गया है कि वह सांस भी लेती है !

नाट्यकार, संसार के भिन्न-भिन्न राज्यपरिवार; अमेरिका के प्रसिद्ध राष्ट्रपति, अभिनेता, खेलाड़ी, राजनीतिज्ञ और योद्धा सबकी मूर्त्तियाँ अलग-अलग गिरोहों में है। विक्टोरिया क्रौस पाने वाले सैनिकों में तीन सैनिक भारत के भी हैं !

भवन के निचले भाग में विभीषिका-कक्ष है। उसमें जाते ही भय

लगता है। संसार की प्रसिद्ध हत्याओं और हत्याकारियों के अतिरिक्त हत्या के साधनों को भी एकत्र किया गया है। गिलोटिन है, खौलते कड़ाह में जलाये जाने के दृश्य हैं, फाँसी के भिन्न-भिन्न तरीके दिखलाये गये हैं! जेल के वे कक्ष बनाये गये हैं जहाँ संसार के प्रसिद्ध व्यक्तियों को तड़प-तड़प कर मरना पड़ा! और अन्त में आनन्द-कक्ष है, जहाँ तरह-तरह के शीशे हैं जो आपके चेहरे को विचित्र बना देते हैं और तरह-तरह के खेल हैं जिनसे आपका भरपूर मनोरंजन होता है।

इन्हीं दो भवनों के देखने में ही संध्या हो चली। फिर रामभरत जी के घर खाने को गये, वहीं उनके साथी श्री राय भी मिले। दोनों विद्यार्थी बड़े सौम्य स्वभाव के हैं। रामभरत देवेन्द्र के साथी रहे हैं। बच्चों के बारे में भी पूछते रहे। वह लंदन से सात-आठ मील की दूरी पर रहते हैं, फिनलैंड के एक रिफ्यूजी के घर में। यह बेचारे जमींदार थे, किन्तु क्रान्ति ने सारी सम्पत्ति जब्त कर ली। तब उनकी लड़की लंदन आई, यहाँ काम करना शुरू किया, पैसे इकट्ठे किये, इस घर को खरीदा और मा-बाप को बुला लाई। अब एक ऊँचे खानदान के युवक से विवाह कर कालेज में पढ़ रही है! उद्योगियों के लिए हर जगह अवसर है!

लंदन, २४–५–५१
नैशनल गैलरी : फेस्टिवल आफ ब्रिटेन

आज अँगरेजी सरकार की मेहमानदारी का आखिरी दिन है। आज ही हमें इस सेन्ट एरविन्स होटल को छोड़ देना है। कल शाम को लंदन से चल देना है, इसलिए सोचता था, दो दिन इसी होटल में रह जाऊँ। मिस्टर सैम्पुल्स से मैंने इस बारे में चर्चा भी की, किन्तु उन्होंने दरियाफ्त करके बताया, होटल के कमरे पहले से ही 'बुक' हो चुके हैं। इसलिए, आज सबेरे उठ कर अपने सामानों के सहेजने में लग गया !

आज भोर में 'इण्डिया लीग' के श्री सोरेन्सेन की ओर से जलपान के लिए हमें निमंत्रण था। सामान को सहेज कर मैं इण्डिया लीग के आफिस की तरफ चला। किन्तु, वहाँ जाकर देखा, वहाँ कोई नहीं है। बड़ी परेशानी हुई। पीछे पता चला, यह निमंत्रण इण्डिया क्लब के लिए था। जल्दी के कारण मुझसे यह गलती हो गई।

मैं सोच ही रहा था कि अब क्या करूँ कि साथी एक़बाल गाया आ पहुँचे। मैंने उनसे अपनी परेशानी कही ! उन्होंने बताया कि तिपहरिया तक की उनकी छुट्टी है, अतः उन्हें साथ करके सबसे पहले मैं 'नैशनल गैलरी' देखने चला।

यह नैशनल गैलरी, ट्रैफलगर स्क्वायर में है। अँगरेज जाति के कला-प्रेम का यह एक ज्वलन्त प्रतीक है। तेरहवीं शताब्दि से लेकर उन्नीसवीं शताब्दि तक के यूरोपीय चित्रों का यह एक अद्भुत संग्रह है। ऐसा कोई भी प्राचीन चित्रकार नहीं है जिसकी कृति इस गैलरी में नहीं हो। कहा जाता है, संसार की सभी आर्ट गैलरियों में सिर्फ लुव्र (फ्रान्स) की आर्ट गैलरी इसका मुकाबला कर सकती है।

इस गैलरी की स्थापना १८२४ ई० में हुई थी, जबकि एक सज्जन द्वारा संग्रहीत ३८ चित्रों को खरीदने और सुरक्षित रखने के लिए पार्लिया-मेण्ट ने ६०००० पाउण्ड की माँग मंजूर की थी। धीरे-धीरे चित्रों का संग्रह बढ़ता गया और १८६४ में ट्रैफलगर स्क्वायर में उनके लिए एक अलग भवन तैयार किया गया। इसके प्रबन्ध के लिए एक कमीटी बनाई गई, जिसे तस्वीरों के खरीदने और सुरक्षित रखने का पूरा अधिकार है। पीछे पार्लियामेण्ट के एक कानून के अनुसार सरकार एक डाइरेक्टर नियुक्त कर देती है, जिसे इतना अधिकार दे दिया गया है कि अगर वह कोई कुप्रबंध देखता हो तो बोर्ड के निर्णयों को भी बदल दे सकता है।

अब इस गैलरी में दो हजार तस्वीरें हैं, जो इसके विशाल भवन के तीस कमरों में सजा कर रखी गई हैं। पियोम्बो, क्लौडे, पोगार्थ, टिशियन, रैमब्रैण्ड्स, रूबेन आदि की सबसे सुन्दर चित्र, १९ वीं सदी के अंत तक ही, इसमें संग्रहीत हो चुके थे। फिर कई सुप्रसिद्ध संग्रहों के चित्र धीरे-धीरे इस गैलरी में आते गये। बर्नन के १४७ चित्र, टर्नर के चित्र, लोम्बार्डी के २२ इटालियन चित्र आदि क्रमशः संग्रहीत होते गये हैं। सर चार्ल्स ईस्टलेक ने अपनी डाइरेक्टरी के समय १३९ सुप्रसिद्ध चित्र खरीदे। लियोनार्डो विन्सी के कई अलभ्य चित्र ऊँचे से ऊँचे दाम देकर खरीदे गये हैं। चित्रों का दाम कितना ऊँचा हो सकता है, इसी से कल्पना कीजिए कि होल्बिन के एक चित्र के लिए ४०,००० पाउण्ड खर्च किये गये थे। वेलास्क्वेज, टीशियन, आइक्स, जियोवैनी, बैरोनिस, पेरुज़िनों आदि पुराने उस्तादों की कृतियों की प्राप्ति से यह गैलरी अपूर्व गौरव लाभ कर चुकी है।

भवन के भीतर ज्यों ही पहुँचिये, रंगों की चकमक से आँखें चकाचौंध में पड़ जाती हैं। कमरे काफी बड़े हैं, उनकी दीवारों पर चित्र लगा दिये गये हैं। चित्रों के सजाने में उनका काल और उनकी विशेषता पर खास ध्यान दिया गया है। इस तरह चित्रों के एक तरफ से दूसरी तरफ देख जाने पर यूरोपीय चित्र-कला का इतिहास भी अनायास ही हृदयंगम हो

जाता है। कमरों के बीच में बैठने के लिए शोफे रख दिये गये हैं। मैं तो जल्दी में था; किन्तु बहुत से लोग शोफों पर बैठे हुए एक-एक चित्र को ग़ौर से देख रहे थे या बग़ल के साथियों को उनकी खूबियाँ बता रहे थे, किन्तु, इतने धीरे से कि दूसरों का ध्यान ज़रा भी नहीं बँट पाये। कुछ नये चित्रकार, पुराने उस्तादों की कृतियों की नकल भी कर रहे थे। किस तन्मयता से उनकी आँखें उस्तादों की कृतियों पर गड़ी हुई थीं और उनके हाथ सामने के कागज पर चल रहे थे।

वहाँ से एकबाल के साथ मैं 'फेस्टीवल ऑफ ब्रिटेन' की विज्ञान-प्रदर्शनी को देखने चला। न जाने क्या बात है कि जिस तरह कला से मुझे प्रेम है, उसी तरह विज्ञान के प्रति असीम उत्सुकता। समय कम था, कई ऐसे म्युज़ियम थे जिन्हें देख लेना चाहता था, किन्तु समय का अभाव होने पर भी विज्ञान के करामातों का अवलोकन करने से मैं अपने को किसी भी हालत में वंचित करने को तैयार नहीं था।

यह विज्ञान-प्रदर्शनी साइन्स म्यूजियम से संलग्न है। नैशनल गैलरी से निकल कर झटपट एक बस पकड़ी और इस प्रदर्शनी के दरवाज़े पर हाज़िर। सभी प्रदर्शनियों को देखने के लिए सी० ओ० आई० आफिस से पास मिल चुका था, अतः झटपट प्रदर्शनी का सूचीपत्र खरीद कर मैं उसमें घुसा। दरवाजे पर एक बहुत बड़ी पेंसिल टँगी थी और इस मामूली चीज़ से ही विज्ञान की इस मायापुरी की झलक देखने को मिलती है। प्रारम्भ में पाँच कमरे हैं; पाँचों ही अंधकार पूर्ण। ज्यों ही आप पहले कमरे में घुसेंगे, आपको मालूम होगा कि आप सिकुड़ कर पेन्सिल के आकार के हो गये हैं और उसके बाद कागज की मोटाई के आकार के। आप यहाँ देखेंगे कि पेन्सिल की 'लीड' धीरे-धीरे कागज पर खिसकती और एक निशान बनाती जा रही है। दूसरे कमरे में जाकर आप अपने को हज़ार गुना छोटा पायेंगे और आप उन तत्वों को देखेंगे जिनसे यह पेन्सिल की लीड बनी है। आखिरी कमरे में पहुँचते-पहुँचते आप सिकुड़

कर करोड़गुना छोटा हो जायेंगे और वहाँ वह चमकती हुई चीज़ देखेंगे जिसे 'ऐटोम' कहते हैं। हर ऐटोम के मध्य में एक छोटा-सा सूर्य चमक रहा है और उसके चारों ओर बादल की तरह 'एलेक्ट्रोन' चक्कर दे रहे हैं। इन पाँच कमरों ने आपको बता दिया कि संसार की छोटी से छोटी चीजों में कौन से तत्व भरे हैं। अब आप प्रकाश में देखेंगे कि इन तत्वों से सारे संसार की सृष्टि किस प्रकार हुई है। यह कहानी तीन हिस्सों में बँटती है। सबसे पहले तत्वों की भौतिक और रसायनिक प्रवृति दिखलाई गई है। तत्व 'ऐटोम' से बने हैं और 'ऐटोम' ६० से अधिक प्रकार के हैं, क्योंकि तत्वों की संख्या ६० से अधिक हैं। इन तत्वो के संयोग से किस प्रकार पृथ्वी की ऊपरी सतह बनती है और ऐटोम की भीतरी बनावट कैसी है, इन्हें आँखों देख कर आपको आश्चर्य होगा। ऐटोम की बनावट पर ही भौतिक तत्वों के व्यवहार निर्भर करते हैं, यह आप कार्बन के कम्पा-उण्ड्स को देख कर जान सकेंगे। सभी जीवित पदार्थों में कार्बन के अंश हैं, और यहीं से जीवित पदार्थों की बनावट की जानकारी हासिल करना प्रारंभ कर देते हैं, जो इस प्रदर्शनी का दूसरा हिस्सा है। सभी जीवित पदार्थ 'सेल्स' से बनते हैं और ये सेल्स जिन्दा रहते हैं, अपनी संख्या बढ़ाते हैं और फिर मर जाते हैं। इन सेल्स के भीतर वंशानुक्रम के बीज होते हैं और जब स्त्री और पुरुष के 'सेक्स-सेल' परस्पर मिलते हैं तो संतान की परम्परा शुरू होती है।

कहानी के तीसरे हिस्से का नाम है 'स्टौप-प्रेस'। इसमें विज्ञान के आधुनिकतम अनुसंधानों पर प्रकाश डाला गया है। ये आधुनिकतम अनुसंधान भेदने वाली किरणों, स्थान और तारों तथा विद्युत-मस्तिष्क से सम्बन्ध रखते हैं। मुझे सबसे भाई इसकी अंतिम कड़ी, जिसमें बताया गया है कि सृष्टि का अंत कभी नहीं होगा। चीज़ें टूटेंगी, फूटेंगी, उनके तत्व बिखरेंगे, बर्बाद होंगे, किन्तु फिर समन्वय स्थापित होगा, नई सृष्टि शुरू होगी और यह क्रम शाश्वत तक चलता रहेगा।

मुझे भूख लग रही थी। कला बहुत मनोहारी है और विज्ञान बहुत आकर्षक; लेकिन, पेट की कुलबुलाहट भी एक शाश्वत सत्य है, अतः यह देखना सुनना छोड़कर प्रदर्शनी में ही लगे एक स्टॉल पर जाकर खाना खाया, कॉफी पी और इस यात्रा में अनन्तरूप से जलने वाली सिगरेट के धुँए की फूँक उड़ाते साइन्स-म्यूज़ियम की ओर चला। साइन्स-म्यूज़ियम में उस हिस्से को देखकर बड़ा कुतूहल हुआ जहाँ रेल, जहाज, मोटर, साइकिल आदि के प्रारम्भ से लेकर आज तक के नमूने रखे हुए हैं। पहली रेल, पहला जहाज़, पहली मोटर, पहली साइकिल —फिर उनका क्रमशः विकाश। रेल की इंजिनें इस तरह रखी गई हैं कि उन्हें चलाकर भी दिखा दिया जा सकता है। बच्चों की भीड़ लगी थी। जो बच्चे अपनी आँखों से आज ही से यह सब देख रहे हैं, यदि वयस्क होने पर उनमें वैज्ञानिक अनुसंधानों के लिए स्वाभाविक अनुराग पैदा हो और वे अपने कर्तित्वों से इस विकास-क्रम में नई-नई कड़ियाँ जोड़ें, तो, इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?

साइन्स म्यूज़ियम के बाद हम पुस्तक-प्रदर्शनी देखने गये। यह पुस्तक-प्रदर्शनी विक्टोरिया ऐण्ड अलबर्ट म्यूज़ियम में हो रही थी। विक्टोरिया ऐण्ड अलबर्ट म्यूज़ियम भी इंग्लैंड के प्रसिद्ध म्यूज़ियमों में से है। ब्रिटिश म्यूज़ियम और नेशनल गैलरी के बाद इसी का स्थान आता है। महारानी विक्टोरिया के शासन काल में ही इसका प्रारम्भ हुआ और अपने नाम के साथ अपने पति का नाम जोड़कर इस म्यूज़ियम के द्वारा उसने अपने पति को भी अमरता दे दी है। यह म्यूज़ियम एक बड़े भवन में है जिसकी सूरत-शकल बिल्कुल शाही है। चित्रकला, मूर्तिकला, पुस्तकालय, वस्त्र-कला, काष्ठकला आदि इसके प्रमुख विभाग हैं।

इस पुस्तक-प्रदर्शनी में चौसर से लेकर आजतक की ८०० प्रसिद्ध पुस्तकों के प्रथम संस्करण रखे हुए हैं। इनके अतिरिक्त छपाई बँधाई और चित्रकारी के भी नमूने रखे हुए हैं। बच्चों की पुस्तकों का १७ वीं शताब्दि

से लेकर आजतक का संग्रह है। जादू की पुस्तकें नाम से कुछ सचित्र पुस्तकें रखी हुई हैं जिनके पन्ने आप से आप उलट जाते हैं। ऐसी प्रदर्शनियाँ लंदन में ही १२ जगहों पर हैं। फिर इंग्लैंड के हर बड़े शहर में स्काँटलैंड में, उत्तरी आयर लैण्डमें, और वेल्स में भी ऐसी प्रदर्शनियाँ संगठित की गई हैं। पुस्तकों की चलती-फिरती प्रदर्शनियाँ भी सारे देश में घूम रही हैं।

लगभग दो बज रहे थे। हमें होटल से अपना सामान हटा लेना था अतः जल्दी-जल्दी होटल में हाज़िर हुआ। थोड़ी ही देर में तूफ़ान साहब भी आ गये और मैं अपने सामानों के साथ उनके आवास-स्थान पर पहुँचा। निश्चय कर लिया था कि आज ही साउथ बैंक में जाकर फेस्टिवल आँफ ब्रिटेन के सर्वप्रमुख अंश को भी देख लेंगे। अतः वहाँ अधिक देर नहीं ठहर कर साउथ बैंक जा पहुँचा। हम ट्यूब से चले थे, इसलिए यह भी नहीं पता चला कि हमने टेम्स कब पार कर लिया। जब हम टेम्स को पार कर रहे होंगे तो वह ऊपर लहरा रहा होगा—कैसी जादूगरी! ऊपर नदी बह रही है, उसके नीचे से रेल जा रही है।

टेम्स के दक्षिणी किनारे वाटरलू और वेस्टमिंस्टर पुलों के बीच यह प्रदर्शनी लगाई गई है। बीच में हंगरफ़ोर्ड का रेलवे बाँध है। इस बाँध से फायदा उठाकर समूची प्रदर्शनी को दो हिस्सों में बाँट दिया गया है। एक हिस्से में 'ब्रिटेन की भूमि' और दूसरे हिस्से में 'ब्रिटेन के निवासी' पर प्रकाश डाला गया है। प्रदर्शनी में ज्यों ही हम पहुँचे, सबसे पहले हमारा ध्यान 'डोम आफ डिसकवरी' की ओर गया, जिसका घेरा ३६५ फीट और ऊँचाई ९७ फीट है। यह अल्मूनियम से बनाया गया है। संसार का सबसे बड़ा डोम है, ऐसा प्रदर्शनी के आयोजकों का दावा है।

हम पहले ब्रिटेन की भूमि से ही शुरू करें। इस विभाग में यह बताया गया है कि ब्रिटिश द्वीप किस तरह बना, उसके प्राकृतिक धन का मूल स्रोत क्या है और नाना प्रकार की दृश्यावली उसे किस प्रकार सुन्दर

बनाये हुई है। देहात के विभाग में ग्रामीण जीवन, खेती, बाग़वानी और पशुधन के विकास की ओर इस जाति ने जो प्रयत्न किये हैं, वे सब आँखों के सामने झलमल कर उठते हैं। प्राकृतिक साधनों वाले विभाग में बताया गया है कि अँगरेज कच्चे माल अपने देश से किस तरह पैदा करते हैं। इसमें बताया गया है कि हवा का उपयोग भी कच्चे माल के रूप में किस तरह किया जाता है। शक्ति और उत्पादन वाले विभाग में कच्चे मालों से किस तरह तरह-तरह के सामान बनाये जाते हैं, यह स्पष्ट हो जाता है। इस विभाग में अँगरेजों के सारे उद्योग-धन्धे आँखों के सामने मूर्तिमान हो उठते हैं। समुद्र और जहाज़ के विभाग में जहाजों के तरह-तरह के नमूने रख दिये गये हैं और यह बताया गया है कि क्यों संसार के समुद्र पर अँगरेजों की प्रभुता रही है। यातायात विभाग में हवा, सड़क, रेल और समुद्र द्वारा अँगरेज जाति किस प्रकार संसार भर से यातायात का सम्बन्ध रखे हुई है, यह आप समझेंगे। प्रारम्भिक इंजिनों से लेकर नई से नई डिज़ाइनों की इंजिनों के नमूने वहाँ रखे गये हैं। जहाज़ के डॉकों और हवाई जहाज़ के एयर पोर्टों के नमूने बनाये गये हैं। ब्राडकास्टिंग, टेलिविजन, समुद्रीतार के चमत्कार भी वहाँ देखने को मिलते हैं।

'डोम ऑफ डिसकवरी' या 'आविष्कारों का गुम्बद' इस सारी प्रदर्शनी का मानों केन्द्र-बिन्दु है। न सिर्फ जमीन और समुद्र पर, बल्कि सारे संसार पर ब्रिटिश आविष्कारों की कितनी गहरी छाप लगी हुई है, इस गुम्बद में घुसते ही दृष्टिगोचर होने लगता है—एक ओर कुक और सेविंग्-स्टन की साहसिक यात्राओं का चित्रण देखेंगे; दूसरी ओर न्यूटन, डार्विन, फौरेडे, टॉमसन और रदर फोर्ड के वैज्ञानिक चमत्कारों का दिग्दर्शन पायेंगे। भौतिक विज्ञान के नवीनतम आविष्कारों में भी ब्रिटेन का क्या हिस्सा है, इसे देखकर आप चकित हो जायेंगे। संध्या हो गई थी, सारा गुम्बद रोशनियों से जगमग कर रहा था। हम नीचे से प्रारम्भ करके ऊपर की ओर बढ़ रहे थे। जब ऊपरी हिस्से में पहुँचे और नीचे की ओर ध्यान

दिया तो लगता था कि एक-एक आस्मान को पार करते अब हम सातवें आस्मान पर चले आये हैं। हमारी आँखों के सामने एक छोटे रूप में सारा संसार सिमट आया है और हम उसी में खो गये हैं।

डोम से निकल कर हम गुब्बारे की शकल के उस ज्योतिपुंज के सामने पहुंच गये जो यहाँ 'स्काईलौन' कहलाता है। रात में यह ज्योतिपुंज जगमग जगमग कर रहा था। अपनी ऊँचाई से, अपनी चमक से, अपनी अजीब बनावट से यह रात भर दर्शकों को अपनी ओर खींचता रहता है। इस ज्योतिपुंज की बगल में ही एक झरना ऐसा बनाया गया है जिसमें बिजली बत्तियाँ इस तरह लगी हुई हैं कि झरने से गिरता हुआ पानी बहुरंगी बन जाता है। कुछ बत्तियाँ तो पानी के अंदर झलमल कर रही थीं। आग और पानी का यह खेल क्या कम मनोरंजक था?

हंगरफोर्ड रेलवे बाँध के उस पार 'ब्रिटेन के निवासी' वाला भाग है। इसमें अँगरेज जाति के स्वाभाविक गुणों का बड़ा ही सुन्दर चित्रण किया गया है। प्रकृति पर उन्होंने किस तरह विजय की, किस तरह भिन्न-भिन्न जातियाँ आईं, लड़ी और फिर मिल गईं, धर्म ने उन्हें किस तरह प्रोत्साहित किया और पागल बनाया, नागरिक अधिकार की भावना उनमें कैसे जगी, पार्लियामेण्ट का उदय और विकास कैसे हुआ, घरेलू जीवन के प्रति उनमें कितना मोह है, प्रकृति के वे कैसे प्रेमी हैं और अपने पेशे के प्रति उनमें कितना गौरव है—घर और बगीचे, नये स्कूल, खेल-कूद, सिनेमा-थियेटर आदि जीवन के सभी भागों के चलते फिरते चित्र देखकर मन का मुग्ध होना स्वाभाविक है। इस भाग के बीच में रॉयल फेस्टिवल हॉल है, जहाँ नृत्य-गीत का प्रबंध किया गया है। हम लोग जब वहाँ से निकल रहे थे, संगीत की ध्वनि कानों में पड़ रही थी।

बड़ी प्रबल इच्छा थी कि एक दिन जहाज में बैठकर टेम्स की लहरों का मजा लूँ। वहीं पता चला, यहाँ से एक छोटा-सा जहाज हर आध घंटे पर बैटर-सी पार्क में जाता है, जहाँ फेस्टिवल का 'आनन्द बाग'

लगाया गया है। ऐसे मौके को हम क्यों चूकते? झट टिकट कटा कर जहाज पर जा चढ़े। कुछ लोग पहले से वहाँ जमे थे, कुछ लोग पीछे से वहाँ आये। छोटा-सा जहाज रवाना हुआ। हमारे सामने सैनिक नौजवानों का एक गिरोह था। पाँच-सात लड़कियाँ भी उनसे आ मिली थीं। जहाज बढ़ा जा रहा था, इधर प्रेम-व्यापार भी चल रहा था। बात-बात पर चुम्बन—आलिंगन। उन्हें इसकी ज़रा भी चिन्ता नहीं कि उनके अगल-बगल कौन बैठा है।

यह आनन्द बाग़ सैंतीस एकड़ ज़मीन में बसाया गया है। खेल-कूद, ऐशमौज के सभी सामान यहाँ एकत्र कर दिये गये हैं। इसमें थियेटर घर हैं, संगीत घर हैं, बैण्ड पार्टियाँ हैं, झूले हैं, तरह-तरह के जुए भी हैं। हम कुछ देर से पहुँचे थे। भर दिन की दौड़धूप के कारण थक भी गये थे, अतः इधर-उधर की थोड़ी झाँकी भर ले ली। यथार्थ में मेला तो यही है—बच्चे-बूढ़े, औरत मर्द, सभी मेले वाले जोश-खरोश में—किलकारियाँ, ठहाके, लपक-झपक—कहीं पिया जा रहा है, कहीं पिलाया जा रहा है। तरह-तरह की चर्खियाँ, जिनकी गति देखकर रोंगटे खड़े हो जायँ। किन्तु, उनपर भी वही हँसी और ठहाके।

कुछ भूख लग रही थी। एक जगह देखा, मकई के भूँजे के किस्म की कोई चीज़ बिक रही है। तूफान साहब से पूछा—"यह क्या है?" तूफान साहब ने कहा—"बहुत मज़ेदार। ज़रा चाशनी लगी होती है, इसलिए मीठा भी होता है।" लेकर खाया और उसी की मिठास में वहाँ से रवाना हुआ।

लंदन, २५ मई १९५१

लेबर पार्टी का गढ़ : कोहेनूर का दर्शन

आज लंदन छोड़ना है। उस लंदन को जो आज भी संसार का सबसे बड़ा शहर होने का दावा करता है, और कल तक जिसके साथ भारत का भाग्य सूत्र बँधा हुआ था।

जहाँ दो-चार दिन का आवास होता है, मेरे ऐसे भावुक आदमी को, उसका विछोह भी खटकता है। जहाँ एक महीने से ऊपर रहा, जहाँ इतना देखना-सुनना रह गया है, उससे विछोह की कल्पना ही चंचल बना देती है।

यह लंदन शहर, जो लगभग साढ़े चार लाख एकड़ में बसा हुआ है, और जिसकी जनसंख्या लगभग साढ़े पचासी लाख है, अपनी विशालता में ही नहीं, अपनी प्राचीनता में भी इंगलैंड के जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव रखता है। लंदन के आस पास की जो बस्तियाँ हैं, यदि उनकी जनसंख्या को भी लंदन की जनसंख्या में जोड़ दी जाय, तो सारे इंगलैंड की जनसंख्या की एक चौथाई इस शहर में बसती है। पेरिस फ्रांस है और फ्रांस पेरिस, ऐसा दावा इंगलैंड के लंदनवासी नहीं करते। किन्तु किसी जादूगरी से यदि लंदन को लुप्त कर दिया जाय तो सारे इँगलैंड का जीवन तखड़ पखड़ हो जायगा, इसमें संदेह नहीं।

'लंदन' शब्द केल्ट भाषा के Llyndin लाइन्डीन शब्द से बना है, जिसका अर्थ है 'लेक फोर्ट' यानी झील का किला। रोमनों के समय में लाइन्डीन एक प्रसिद्ध फौजी अड्डा और व्यापारी केन्द्र था। यह चारों ओर से एक चौड़ी और ऊँची दीवाल से घिरा हुआ था, जिसका चिन्ह लंदन-टावर में देखने को मिलता है। वेस्टमिन्स्टर, ह्वाइट हॉल, डाउनिंग स्ट्रीट, ट्रैफ़्लगार स्क्वायर, बकिंघम पैलेस, गिल्ड हॉल, इन्स ऑफ कोर्ट, काउण्टी हाल,

ब्रिटिश म्यूज़ियम, लंदन यूनिवर्सिटी आदि इमारतें और संस्थायें, इसकी प्राचीनता और महत्ता का डंका सदियों से संसार में पीटती रही हैं।

लंदन को अपने पार्कों पर भी बहुत गर्व है। लंदन निवासी अपने शहर को 'सीटी ऑफ पार्क्स'–उद्यानों का नगर–कहने में भी गौरवान्वित अनुभव करते हैं। इसके पाँच पार्क जो राजकीय-उद्यानों के नाम से मशहूर हैं, शहर के भिन्न-भिन्न भागों को हरा-भरा, रंगीन, जीवनमय और यौवन-मय बनाये रखते हैं। इनमें हाइड पार्क (३६० एकड़) सबसे अधिक प्रसिद्ध है। किंतु, रकबे के हिसाब से रिजेण्ट पार्क (५३५ एकड़) सबसे बड़ा है। इन दोनों के बाद केन्सिंग्टन गार्डेन (२७५ एकड़) का नम्बर आता है, चौथा नम्बर है सेन्ट जेम्स पार्क (९३ एकड़) का और आखिरी नम्बर है ग्रीन पार्क (५३ एकड़) का। किउ गार्डेन यद्यपि वनस्पति शास्त्र की प्रदर्शनी के रूप में प्रख्यात है और वहाँ ४५००० किस्म के पेड़ पौदे हैं, तो भी वह लंदन के बड़े पार्कों में ही गिना जा सकता है। लंदन की काउन्टी कौन्सिल एक हजार पार्कों और खेलों के मैदानों का संरक्षण करती है और इस महान राजधानी में घनी आबादियों में बसनेवाले नागरिक और नागरिकाओं को जीवन के लिए अत्यावश्यक 'फेफड़े' प्रदान करती है।

इस बड़े शहर में यातायात के साधनों का प्रबन्ध करना भी कोई आसान बात नहीं है। लेकिन, विशाल संगठनों के सफल संचालन के लिए प्रसिद्ध अँगरेज जाति 'लंदन ट्रान्सपोर्ट' नाम की एक ही संस्था द्वारा ऐसा प्रबंध करती है कि देखकर आश्चर्य होता है। इसके यातायात की प्रणाली २००० वर्गमील के क्षेत्र को छेंकती है, और प्रतिदिन १००,००,००० आदमी इसकी रेल, ट्यूब, बस और ट्राम पर आते-जाते हैं। शाम को सिर्फ एक घंटे में, ५ से ६ बजे तक, ५,००,००० आदमी इसके यातायात के साधनों का उपयोग करते हैं। इसमें भी ५ बजकर ३० मिनट से ५ बजकर ४५ मिनट, यानी १५ मिनट में ही १,३१,००० आदमी इसके यातायात के साधनों का प्रयोग करते हैं—हर मिनट में आठ से नौ

हज़ार आदमी तक। यातायात के साधन इतने सुलभ हो गये है कि लंदन की आबादी को उसके अगल-बगल के क्षेत्रों में हटाया जा रहा है। पिछले पच्चीस वर्षों में दो लाख आदमी लंदन से हटकर ऐसे क्षेत्रों में जा बसे हैं। अब लंदन का यह भी दावा है कि संसार के किसी भी बड़े शहर के मजदूरों को उसके मजदूरों से अच्छे मकान नसीब नहीं हैं।

रात में ही तय कर लिया था कि आज दो ही स्थान देखूँगा—लेबर पार्टी के सदर मुकाम 'ट्रान्सपोर्ट हाउस' को, और लंदन के प्राचीन भग्नावशेष 'लंदन टावर' को। बी० बी० सी० वाले कई दिनों से कह रहे थे कि मैं कुछ चीज़ें ब्रॉडकास्ट करूँ, अपनी कोई चीज़ उन्हें दूँ। समयाभाव के कारण उन्हें टालता रहा। किन्तु, कल वादा कर लिया था कि एक 'टॉक' जरूर ही रेकार्ड करा दूँगा। आज सबेरे उठकर सबसे पहला काम किया कि 'विदा इंगलैंड' नाम से पाँच मिनट की एक वार्ता लिख ली। और, उसे बी० बी० सी० के आफिस में भेजकर 'ट्रान्सपोर्ट हाउस' चला।

ट्रान्सपोर्ट हाउस टेम्स के किनारे एक तिमंजिला विशाल इमारत है। इसके निर्माण में स्वर्गीय श्री बेविन का बहुत बड़ा हाथ है जो एक मजदूर परिवार में जन्म लेकर बचपन से ही मजदूरी करके जीवन बिताते हुए अंत में इंगलैंड की सबसे बड़ी मजदूर यूनियन—यातायात के सभी साधनों के मजदूरों की राष्ट्रीय संस्था—के संस्थापक बने और इंगलैंड के वैदेशिक मंत्री के रूप में उन्होंने इहलीला समाप्त की।

इस इमारत के सामने पहुँचते ही मैंने मान लिया, जहाँ के मजदूरों में अपनी एकता के बल पर इतनी शानदार इमारत बनाने की योग्यता हो, उसके हाथ में एक न एक दिन देश का शासन-सूत्र आने वाला ही था। समय कम था, अधिक देख नहीं सकता था। किन्तु, तूफ़ान साहब की कृपा से थोड़ी ही देर में जो अधिक से अधिक देख सकता था, देख लिया। संयोग से भीतर जाते समय ही 'दी कर्टेन फॉल्स' के सुप्रसिद्ध लेखक श्री डेनिस पिले से भेंट हो गई। आप लेबर पार्टी के इन्टरनेशनल डिपार्टमेंट

के सेक्रेटरी हैं। जब मेरा परिचय तूफान साहब ने दिया तो आग्रह करने लगे, मैं दो-चार दिन और ठहरूँ और लेबर पार्टी के संगठन को अच्छी तरह देख लूँ। भारतीय सोशलिस्ट पार्टी के लिए उनके दिल में बड़ी श्रद्धा थी और चाहते थे कि लेबर पार्टी और शोशलिस्ट पार्टी में गहरा से गहरा सम्बन्ध हो। "मेरे कोई साथी शीघ्र आवेंगे और इस काम को मुझसे भी अधिक योग्यता से करेंगे"—यह कहकर उनसे क्षमा माँग ली। हाँ, उन्होंने एक लड़की को साथ में कर दिया जिसने इस दल संगठन की एक झलक दिखलाई।

लेबर पार्टी की स्थापना सन् १९०० ई० में हुई। पहले यह पार्टी लेबर रिप्रेजेण्टेशन सोसाइटी नाम से प्रसिद्ध थी। किन्तु, १६०६ में इसने पार्लियामेण्ट में २६ मेम्बर भेजे, और तब से ही इसका वर्तमान नाम पड़ा। यह पार्टी दिन-दिन तरक्की करती गई है। बीच में दो बार १९२४ में और फिर १९२९ से १६३० तक इसके हाथ में देश का शासन-सूत्र भी आया। किन्तु, इन दोनों बार उसका ऐसा बहुमत नहीं था कि अपनी नीति को काम में लाती। उसकी सबसे बड़ी विजय १९४५ के चुनाव में हुई और तब से उसका राज्य इंगलैंड पर है।

लेबर पार्टी को वर्तमान रूप देने का बहुत कुछ श्रेय है श्री केअर हार्डी को, जिन्होंने मजदूर संघों और सहयोग समितियों को अपने सदस्य पार्लियामेण्ट और स्थानीय कौन्सिलों में भेजने का प्रोत्साहन दिया। केअर हार्डी के बाद फिलिप्स स्नोडन, रैमज़े मैकडोनाल्ड, फ्रेड जौवेट, ब्रूस ग्लैज़ियर आदि इसके नेता पार्लियामेन्ट में खूब चमके। बीच में जब दो बार सरकार बनी, रैमजे मैक्डोनाल्ड उसके प्रधान मंत्री थे।

१९१८ से १९२९ तक लेबर पार्टी की चौगुनी वृद्धि हुई। ५० से होते-होते पार्लियामेन्ट में उसके सदस्यों की संख्या लगभग ३०० तक जा पहुँची, उसे लगभग ८०,०००,०० वोट मिले थे और पार्टी की सदस्य संख्या २०,०००,०० तक पहुँची थी। किन्तु, १९३१ में ही उसका पतन

हुआ—जब सिर्फ ५० सदस्य उसके चुने जा सके। लेकिन, धीरे-धीरे फिर उन्नति होती गई और १९४५ के आम चुनाव में यह देखकर लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा,जब इस पार्टी का साफ़ बहुमत पार्लियामेण्ट में हुआ। इसके ३९३ सदस्य पार्लियामेण्ट में आये। १,२०,०००,०० वोट इसे प्राप्त हुए और पार्टी की सदस्य संख्या भी २५,०००,०० से ऊपर चली गई। इन ३९३ पार्लियामेण्ट के मेम्बरों में ११९ को मजदूर यूनियनों ने खड़ा किया था, २३ सहयोग समितियों से आये थे और ६८ सेना से। शेष सदस्य भी किसी न किसी रोज़गार से ही आये और जिन्हें उनकी कन्स्टी-चुयेन्सी पार्टी ने खड़ा किया था।

यद्यपि १९५० के चुनाव में लेबर पार्टी को कुछ सीटें हार जाना पड़ा किन्तु आज भी ब्रिटेन पर उसका शासन है। यह दावे के साथ कहा जा सकता है कि यदि इस नाजुक हालत में लेबर पार्टी ऐसी जनता की पार्टी की सरकार नहीं होती, तो न जाने ब्रिटेन की हालत क्या हुई रहती। समूचे यूरोप के ध्वस्त हो जाने के बाद यह लेबर पार्टी का नेतृत्व है कि इंगलैंड अपने समाज का नवनिर्माण इतनी तेज़ी से करता जा रहा है। लेबर पार्टी में और उसके कामों में त्रुटियों की कमी नहीं, किन्तु उसने जो कुछ कर लिया है और जिसकी झलक मैंने इन पाँच हफ्तों में देखी है, उसपर ध्यान देते हुए इस 'ट्रान्सपोर्ट हाउस को एक प्रेरणा केन्द्र के रूप में नमस्कार करने से मैं अपने को रोक नहीं सका।

ट्रान्सपोर्ट हाउस की बगल में ही टेट गैलरी है, जहाँ आधुनिक कला की बहुत-सी कृतियाँ संग्रहीत हैं। किन्तु, फ़ुर्सत नहीं थी कि उसके दरवाज़ों से भी झाँक आऊँ। दौड़ा-दौड़ा चला 'टावर ऑफ लन्दन' की ओर। वहाँ के ऐतिहासिक उपादानों से मेरी उतनी दिलचस्पी नहीं थी जितनी कि अपने देश के उस अमूल्य रत्न को देख लेने की लालसा लगी थी, जो यहाँ लगभग एक शताब्दि से रखा पड़ा है। वह अमूल्य रत्न है—कोहेनूर। एक ट्यूब पकड़ कर हम टेम्स के नीचे-नीचे उस पार चले गये

और वहाँ अपने सामने एक पुराने किले को देखा जो १८ एकड़ ज़मीन को घेरे हुआ है। इस क़िले को विजेता विलियम ने बनवाया था, और यह कभी किला, कभी राज महल, कभी बंदीगृह, कभी टकसाल, कभी बेध-शाला और कभी सरकारी मुहाफिज खाना रह चुका है। यहाँ कितनी ही ऐसी जगहें हैं जहाँ खून की धारायें बही हैं; कई ऐसी कोठरियाँ हैं जहाँ मानवता ने चिल्ला-चिल्ला कर दम तोड़ा है। सर टॉमस मूर, ड्यूक ऑफ बकिंघम, क्वीन एनी, क्रामवेल, आर्ल आफ एसेक्स, क्वीन कैथेराइन, लेडी ग्रे, जेम्स आदि कितने ही लोगों को इस क़िले के अंदर या तो तह-खानों में सड़ना पड़ा, या फाँसी पर चढ़ना पड़ा।

यहाँ पुराने अस्त्र-शस्त्रों का भी बहुत बड़ा संग्रह है। किन्तु मुझे अस्त्र शस्त्रों से कोई खास दिलचस्पी नहीं रही है, और वह भी इस समय जब बहुत थका-माँदा था; इसमें कौन अधिक समय लगाये ? मैं तो सीधे उस घर में चला गया जहाँ अँगरेज राजघरानों के ताज संग्रहीत करके रखे गये हैं। कहा जाता है, बहुत से राजमुकुटों को तो ओलिवर क्राम-वेल ने गला डाला था नीलाम कर डाला। इसमें सबसे पुराना ताज है वह 'किंग एडवर्ड दी कन्फेसर' का है और सबसे जो पुरानी किरीट है वह मेरी मेडेना की है जो किंग जेम्स (द्वितीय) की पत्नी थी। सबसे शान-दार ताज जो 'किंग्स इम्पीरियल स्टेट क्राउन' कहलाता है, वह १८३८ में क्वीन विक्टोरिया के राज्याभिषेक के समय तैयार कराया गया था। इसमें ३००० रत्न लगे हुए हैं और यह चौकोना है। पंचम जॉर्ज ने दिल्ली दरबार में जो ताज पहना था, उसी में 'कोहेनूर' लगाया गया था और उसके चारो ओर ६००० हीरे जगमग कर रहे थे। मैं खड़ा था, एक टक अपने कोहेनूर को देख रहा था। यह कोहेनूर—कितना बड़ा इतिहास इसके साथ गुँथा हुआ है। जो कभी हिन्दुस्तान की शान था, अब उसकी शर्म बन गया है ! हाँ, मैं उसकी चमक में हिन्दुस्तान की शर्म पढ़ रहा था, और मुझे लग रहा था सचमुच जैसे वह मुझे देखकर शर्मा

रहा हो ! कहा जाता है, अब वह अपने मूलरूप में नहीं है, उसकी कितनी काट-छाँट हुई है। किन्तु, सारी काट-छाँट के बावजूद कोहेनूर आखिर 'कोहेनूर' है, संसार का सर्वोत्तम रत्न है और कवि के कथनानुसार 'उपजहिं अनत अनत छवि लहहीं' अपने देश से दूर, अपनी मातृभूमि से दूर, यहाँ भी हज़ारों रत्नों में शोभा पा रहा है !

लन्दन टावर से सीधे बी० बी० सी० आफिस आया। बी०बी०सी० के सभी हिन्दुस्तानी साथी वहाँ थे। सबसे राम-सलाम हुई। 'विदा इँगलैंड' शीर्षक से पाँच मिनट की एक वार्ता रेकार्ड कराई, पाँच गिन्नी लिये, झट एक दूकान पर जाकर इन पाँचों को फूँक दिया—यानी पाइप ली, 'लाइटर' लिया, सिगरेट ली और चल पड़े हूजा के घर। जिस दिन पहुँचा था, उस दिन संध्या को उनके घर भोजन हुआ था। चलते दिन भी उन्हीं के घर भोजन हुआ। कई हिन्दुस्तानी मित्र वहाँ जुटे थे। कुछ फोटोग्राफी हुई, कुछ चुहलें हुईं और फिर वहाँ से तूफान साहब के घर आकर अपना सामान लिया और झटपट जा पहुँचे हवाई अड्डे पर।

बिदा इंगलैंड ! बिदा !

छः स्वीट्ज़र लैंड में

२६-५-५१

ज़ुरिख़ से बर्न

आज जब ज़ुरिख़ की एक झांकी लेकर होटल में लौटा, तो लगा किसी प्रौढ़ा के प्रबल बाहु-पाश से मुक्त होकर किसी मुग्धा के रूबरू खड़ा हूँ।

हाँ, इँगलैंड और स्वीट्ज़रलैंड में यही फर्क है। इँगलैंड का सौन्दर्य किसी ऐसी नारी का सौन्दर्य है जो अपने आगत वृद्धत्व को शृंगार के प्रसाधनों से आवृत्त करना चाहती है। स्वीट्ज़रलैंड में मुझे एक सद्यःस्नाता, अनलंकृता कुमारी के दर्शन हुए जिसके अंग-अंग का निखार स्वयं एक शृंगार है!

इस ज़ुरिख़ शहर को ही देखिये। लंदन की प्रायः सभी इमारतों के ऊपर एक अजीब कालिमा-सी दीखती थी। फिर वे कितनी भारी रकम मालूम देती थीं। ज़ुरिख़ के मकान कैसे चमचम कर रहे थे और वे कितने हल्के-फुल्के मालूम देते थे।

और हर प्रमुख सड़कों के दोनों ओर जो पेड़ों की दुहरी पाँतें थीं। उनके पत्ते-पत्ते धुले-पुँछे लगते थे। और हरी-हरी पत्तियों के बीच-बीच जो लाल, पीले, उजले फूलों के गुच्छे! कितनी फबन थी उनमें, कितना आकर्षण था उनमें!

लंदन के बीचोबीच टेम्स है—दोनों किनारे नगर! टेम्स का पानी गँदला-सा लगता है और उसमें आप उन मकानों की छाया ढूँढ़ भी नहीं पा सकते थे। ज़ुरिख़ के बीचोबीच नदी है और उसके छोर पर एक बड़ी झील। किन्तु उनका पानी कितना साफ! किनारे के हर पेड़ जैसे उनमें झाँक रहे हों!

दोनों ओर पहाड़ियाँ, बीच में झील; झील के दोनों किनारे बसा यह सुन्दर नगर ! यह ऐसा ताज़ा और नया मालूम देता था कि जब मार्ग-दर्शक किसी इमारत के बारे में सदियाँ गिनाने लगता, तो चिढ़ होती थी !

नदी और झील के इस किनारे को दिखा कर मार्ग-दर्शक उस किनारे ले गया। शहर को चीरती हुई हमारी गाड़ी एक जंगल से गुज़रती हुई मालूम पड़ी।। दोनों ओर चीड़ के लम्बे-लम्बे पेड़—धुले-धुलाये पत्तियों से भरे-पूरे। बीच में हमारा रास्ता। हमारी गाड़ी जहाँ रुकी, वहाँ एक क्रीड़ागार है। सामने एक बड़ा-सा तालाब; तालाब की तलहटी नीले शीशे की। इसलिए सारा पानी नीला-नीला सा चमक रहा। और वह देखिये, उसमें दो श्वेत मछलियाँ तैर रहीं !

क्या वे मछलियाँ हैं ? नहीं, दो मनुष्य—एक युवक एक युवती ! कटि और वक्ष पर ज़रा-सा पर्दा—समूचा खुला बदन ! जब दोनों एक साथ बाहर आ कर खड़े हुए, कितने भले लगते थे वे ! वह देखिये, हमारे दल के एक सज्जन उनका फोटो खींच रहे हैं !

चारो ओर हरियाली ही। उन हरियालियों से पंछियों का मधुर कल-रव सुनाई पड़ रहा है।

कितनी ही पेंच खाती हमारी गाड़ी आकर झील के किनारे रुकी। सघन पेड़ों की छाया में कुर्सियाँ और टेबुल सजा रखे गये हैं। बगल में ही एक होटल है ! होटल से कुछ हलकी-फुलकी पेय वस्तु लाइये और यहाँ होठों से लगाते हुए इस सुहावने दृश्य की रंगीनियाँ देखिये।

झील में कितनी ही नावें पाल लगाये खड़ी हैं—मानों उड़ने के पहले पखेरुओं ने पंख फैला दिये हों !

ज़ुरिख़ स्वीट्ज़रलैंड का सबसे बड़ा शहर है और बहुत पुराना है यह ! रोमन साम्राज्य की छाप भी इस नगर पर पड़ी थी। एक ऐसी इमारत

दिखाई गई जो ग्यारहवीं सदी की थी। यह शहर स्वीट्ज़रलैंड के उद्योग-धंधों और वाणिज्य-व्यवसायों का केन्द्र है। ऊँची-ऊँची सजी-सजाई दुकानों की बहार भी कम मोहक नहीं थी!

ज़ुरिख़ में तो हमारा अचानक रैन-बसेरा हो गया था। हमें जाना तो था बर्न—जहाँ भाई सत्यनारायण हमारी प्रतीक्षा में थे। दोपहर में फोन पर उनसे बातें हुई और हम ट्रेन से चल पड़े बर्न की ओर!

स्वीट्ज़रलैंड में आते ही अँगरेजी की महिमा समाप्त हो जाती है। ज़ुरिख़ तक तो किसी तरह उससे काम चल भी जाता है, ज्यों ज्यों भीतर घुसिये, आपकी वाणी मूक हुई!

जब रेल बर्न की ओर जा रही थी, स्वीट्ज़रलैंड की सौन्दर्यराशि और भी निखरती-सी मालूम पड़ी। पहाड़ बिल्कुल पेड़ों से ढँके; उनके पत्ते बड़े ही सघन, बड़े ही लुभावने। तलेटियाँ फूलों से भरी! किन्तु बगल के एक सज्जन, जो संयोग से टूटी फूटी अँगरेजी जानते हैं, कहते हैं कि फूलों की बहार तो आप अप्रील में देखते। हमारा बसंत तो मार्च-अप्रील में होता है। उस समय के वे तुरत-तुरत खिले हुए फूल—अब तो बहुत-से झड़ गये, जो हैं, उनमें वह रंग कहाँ?

ज्यों-ज्यों देश के भीतर घुसते गये, देहात हावी होती गई। अब तो खेत ही खेत। इंगलैंड के खेत बड़े-बड़े। यहाँ के खेत हमारे खेतों की ही तरह छोटे-छोटे और उनमें अनेक प्रकार की फसलें! खेतों में स्त्रियाँ और बच्चे भी काम करते दिखाई पड़ते हैं।

देखिये, उस खेत में, कमर तक बढ़ आई फसल में धँसी वह कौन-सी कुमारी अपने घाँघरे को हिला रही है? क्या मटर की फलियाँ तोड़ रही है? निस्सन्देह वे फलियाँ बहुत मीठी होंगी!

बीच-बीच में नदियाँ—पहाड़ी नाले-सी वे बड़े जोरों से बह रहीं। किन्तु पानी दर्पणोपम, स्वच्छ!

और इन नदी-नालों, खेतों-गाँवों को पीछे छोड़ती हमारी ट्रेन लगातार बढ़ती ही जा रही है। यह मुश्किल से खुलती है और सौ मील की सफर तय करके बर्न में ही ठहरती!

बर्न—स्वीट्ज़रलैंड की राजधानी! छोटा देश, छोटी राजधानी। कुल एक लाख अस्सी हज़ार की जनसंख्या!

स्टेशन से बर्न के इण्डियन लिगेशन के आफिस में। बड़ी प्रसन्नता हुई यह देख कर कि उसके सामने ऊपर देवनागरी में लिखा हुआ है—"भारत की लिगेशन"! काश, लंदन के 'इन्डिया-हाउस' के कितने ही मकानों में से एक भी मकान के आगे भारत की राष्ट्रलिपि में एक अक्षर भी कुछ लिखा हुआ दिखाई पड़ता!

वहाँ से प्यारे सत्यनारायण की कुटीर में! शहर से दूर—पहाड़ी के नीचे यह खूबसूरत कुटीर! भीतर गये—उसकी सजावट और उस सजावट में भारतीयता देख कर हम तृप्त हो गये!

चाय, जलपान। सत्यनारायण ने बताया कि बर्न आजकल किस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय दाँव-पेंचों का अखाड़ा बन गया है। यह भी बताया कि किस प्रकार हमारी ग़लती से हमारे करोड़ों रुपये व्यर्थ में बर्बाद हो रहे हैं।

संध्या को हम मटर-गश्ती में निकले। सत्यनारायण ने अपनी मोटर ले रखी है, स्वयं हाँकता है। बड़ा मज़ा रहा!

पहले पहाड़ी की ओर गया जहाँ से स्वीट्ज़रलैंड की सबसे ऊँची चोटी देखी। बर्फ चमक रही थी; बादल छा रहे थे! मीलों तक इन बर्फीली चोटियों को देखते हुए हम अघाते नहीं थे।

बर्न के हवाई अड्डे पर गये। आरे नदी के कछार पर जाकर घूमे। लौटते समय एक गाँव में गये। यहाँ तो अस्तबल में भी बिजली जलती है। ज़रा बटन दबाया और तीन घोड़े दिखाई पड़े। इतने पुष्ट और सबल घोड़े तो मैंने, फौज के अतिरिक्त, कभी अन्यत्र नहीं देखा था। गोश्त से उनके

पुट्ठे धँसे से लगते थे। खेतों में काम करने के कारण उनके पैर बहुत मोटे हो चले थे। और कितने सूधे लगते थे वे! हमें यों देखने लगे, मानो अब बोलेंगे—अतिथि, तुम्हारा स्वागत!

फिर हम बर्न नगर में आये! सत्यनारायण की मोटर नदी के किनारे-किनारे चल रही थी। नदी के किनारे लगभग तीन मील तक इसी तरह की पक्की सड़क बना दी गई है। शाम को उसपर टहलते हैं या मटरगश्ती करते हैं। सड़क के किनारे जगह-जगह पेड़ों की कुंजों में कुर्सी-टेबुल लगे हैं और नागरिक नागरिकायें मौज मना रहे हैं। जगह-जगह स्नानागार बना दिये गये हैं। नदी से अलग लम्बे-लम्बे तालाब-से खोद दिये गये हैं। उन तालाबों में नदी का पानी छन कर आता है, जिसमें नदी का कूड़ा-करकट या गंदा पानी नहीं पहुँच सके। इन तालाबों में सुन्दर घाट बँधे हैं, तैरने के सामान रख दिये गये हैं, किनारे पर कपड़े बदलने के लिए घर बनवा दिये गये हैं!

आज बार-बार अपनी गंगा की याद आती रही।। हम गंगा को माता कहते हैं न? किन्तु क्या दुर्दशा कर रखी है उनकी और उनमें गोता लगाने वाले भगतों और भगतिनों की? कितनी गंदगी; कैसी बेपर्दगी!

एक जगह नदी में बाँध देकर झरने का मज़ा पैदा कर दिया गया है। बाँध के ऊपर से गिरती हुई फेनिल धारा पर बिजली की रोशनी ऐसी डाली गई है कि वहाँ अद्‌भुत सतरंगी सौन्दर्य की सृष्टि होती है!

आरे के इस पार से पार्लियामेण्ट-भवन और कैथिड्रल के ऊँचे गुम्बद कितने अच्छे लगते थे। इन दोनों भव्य-दिव्य इमारतों पर रोशनी का ऐसा प्रबंध था कि इन्हें देखते ही रहने की इच्छा होती थी। एक ओर जन-मन्दिर, दूसरी ओर देव-मन्दिर! जब इनके निकट गया, देखा दोनों के उपासक, दोनों के आँगनों में भीड़ लगाये हुए हैं!

यूरप दो महायुद्धों से गुजरा है। इन दोनों महायुद्धों ने इसके किस देश को तबाह नहीं किया? अगर कोई देश बचा रहा, तो यह छोटा-सा

देश, जहाँ तीन भाषायें बोली जाती हैं, जहाँ कई नस्ल के लोग हैं, जिसके झंडे पर एम्बुलेंस का चित्र है !

अतः यह देश आज भी भरा-पूरा है, सुख में है, आनन्द में है। सत्यनारायण कहते हैं, जिसके पास पैसे हों, वह इस देश में अवश्य आवे। वह पूरा आनन्द पा सकेगा और थोड़े ही दिनों में वापस भी जा सकेगा, क्योंकि यहाँ शीघ्र पैसे चुक जाने के अनेक साधन सुलभ हैं !

सत्यनारायण जी चाहते थे कि मैं उनके साथ यूरप के उत्तरी देशों में चलूँ और कमसे कम "आधी रात के सूर्य का देश" तो देख ही आऊँ। कमसे कम बर्लिन देख आने का आग्रह तो उनका था ही। किन्तु मुझे तो शीघ्र भारत लौटने की पड़ी है। अतः आज एक अन्तिम कार्यक्रम बना लिया गया जिसके अनुसार स्वीट्ज़रलैंड, फ्रांस और इटली पर ही सन्तोष करके ४ जून की भोर में दिल्ली पहुँच जाना है।

२७—५—५१

वह मनोहारी झील !

आज भोर से ही वर्षा होती रही। सत्यनारायण का यह बँगला शहर से कुछ दूर पर है। यहाँ से देहात की हरियाली और पहाड़ों की सुषमा स्पष्ट दिखाई पड़ती है। बँगले के दुमंज़िले कमरे में लेटे-लेटे ही बाहर का भी-सौन्दर्य रहे।

यह बर्न नगर, इसी नाम के एक प्रदेश का मुख्य नगर है। यह समुद्र तल से १७६७ फीट ऊँचे पर बसा है और इसकी जनसंख्या है १,३०,३३०। यह १८४८ से ही स्वीट्ज़रलैंड का संघीय राजधानी है। यहाँ से स्वीट्ज़रलैंड के सर्व सुन्दर पहाड़ों की चोटियाँ दिखाई पड़ती हैं, जिनमें जुंगफ्राउ सबसे सुन्दर समझी जाती है। जुंग-फ्राउ का अर्थ है, नई दुलहन। कल तय हुआ था कि हमलोग आज सत्यानारायण के साथ चलकर इस नई दुलहन का घूँघट हटायेंगे, किन्तु घटाओं का यह घूँघट तिपहरिया तक घर में ही घेरे रहा।

बर्न का अपना विश्वविद्यालय है, जिसमें २२०० विद्यार्थी पढ़ते हैं। बर्न कोई औद्योगिक केन्द्र नहीं है बल्कि एक कृषिजीवी देश की समृद्ध राजधानी है। बर्न बहुत ही पुराना शहर है और इसकी प्राचीनता की सूचना देने वाले बहुत से स्मृतिचिन्ह इधर-उधर बिखरे पड़े हैं। कहा जाता है, बर्न की स्थापना १२ वीं सदी में ही हुई थी और इसने कितनी ही बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ और उलटफेर देखे हैं। एक समृद्ध देश की राजधानी के अनुरूप कला का संग्रहालय, नाट्यगृह, नृत्य गृह, ऐतिहासिक संग्रहालय, राष्ट्रीय पुस्तकालय, सुन्दर बगीचे; जिनमें गुलाब का बगीचा बहुत नामी है, स्केटिंग के अखाड़े, स्नानगृह आदि सभी सुखोपभोग के साधन प्रस्तुत हैं।

दो बजे के बाद हम लोग बाहर निकले। सोचा गया, वर्षा हो रही है तो क्या, इस रिमझिम में थोड़ी दूर से तो हम घूम ही आवें। सत्यनारायण की गाड़ी पर हम लोग 'टून' की ओर रवाना हुए। टून, बर्न से १८ मील पर है। गाड़ी से उतर कर ज्योंही हम कुछ कदम आगे बढ़े कि टून की झील दिखाई पड़ी और इस झील को देखते ही जैसे रोम-रोम पुलकित हो उठे और मानो वे चिल्ला-चिल्ला कर रहे हों—अद्‌भुत, परम अद्‌भुत ! हम एक बगीचे में खड़े थे, हमारे चारो ओर फूल-फूल ही थे। जब पैर के नीचे ध्यान गया तो पाया, वहाँ भी छोटे-छोटे और रंग-बिरंगे फूल घास की जगह पर बिछे हुए हैं। हमारी बाईं ओर से नदी आ कर इसी झील में गिर रही है और झील नीले पानी का एक ऐसा विस्तृत अंचल, जिसका कहीं ओर-छोर न हो। हवा जोरों से बह रही थी, हमारे ओवरकोट को जैसे हमारी देह से उतार कर फेंक देना चाहती हो। इस तेज हवा के चलते झील में बड़ी-बड़ी तरंगें उठ रही हैं और टूट रही हैं। ऐसा लगता है कि नीली सरजमीन पर अनेकानेक हंस-कुमार बन रहे और बिगड़ रहे हों। जब हम किनारे पर खड़े थे, हवा के झोंके के साथ कुछ बूँदें आकर शरीर पर गिरतीं। ऐसा भावावेश था कि इच्छा होती कि झील में अब भी कूद पड़ा जाय। झील के चारो ओर पहाड़ों की ऊँची-ऊँची, उजली-उजली चोटियाँ, जिनपर बादलों के दल तरह-तरह के खिलवाड़ कर रहे। यों चारो ओर से पर्वतों से घिरी यह झील स्वप्नपुरी-सी लगती थी।

पता चला, यह झील १४ मीलों तक चली गई है। इसकी चौड़ाई दो मील है और गहराई ७१५ फीट। इसकी बाईं ओर पाँच प्रसिद्ध चोटियाँ हैं, जिनमें एक जुंग-फ्राउ है। दाहिनी ओर इसी तरह की चार प्रसिद्ध चोटियाँ हैं, इन नौ चोटियों से यह झील और भी खूबसूरत बनी हुई है। यह झील इन्टरलोकेन तक चली गई है, जहाँ तक स्टीमर-सर्विस भी जाती है। हमारे सामने ही एक छोटा-सी अग्नि-बोट उस ओर जा रही थी।

टून भी एक खूबसूरत शहर है। औद्योगिक बाज़ार होने के साथ ही यहाँ अस्त्र-शस्त्रों के कारखाने भी हैं। हमलोग एक सैनिक-संग्रहालय को देखने गये। युद्ध-सम्बन्धी सारी सामग्रियाँ वहाँ बड़े सलीके से सजा कर रखी गई हैं। तरह-तरह की तोपें, तरह-तरह की बन्दूकें, तरह-तरह की तलवारें, तरह-तरह के ज़िरह-बख्तर। स्वीट्ज़रलैंड के कुछ बड़े सेनापतियों के अस्त्र-शस्त्र और ज़िरह-बख्तर भी रखे हुए हैं। पहाड़ी युद्ध में अम्बुलेंस के दस्ते किस तरह काम करते हैं, नमूनों के सहित दिखाये गये। स्वीट्ज़रलैंड ऐसे पहाड़ों से घिरे देश को दुश्मनों से बचाने के लिए सबसे सरल और कारगर तरीका क्या हो सकता है, यह भी दिखलाया गया है। निस्सन्देह, ऐसे सैनिक संग्रहालय युवकों के मन में सैनिक-भावना उत्पन्न करने में बड़े ही उपयोगी सिद्ध होंगे। मैं बार-बार सोचता, ऐसे संग्रहालयों की अपने देश में कितनी आवश्यकता है।

मौसम खराब होने कारण हम टून से आगे नहीं जा सके, वहीं से लौट चले। बहुत ही रूमानी वातावरण था। सत्यनारायण से प्रवास-सम्बन्धी तरह-तरह की बात करते, शाम को हम फिर बर्न आ पहुँचे। बर्न में सत्यनारायण के आग्रह पर यहाँ के दूतावास के प्रधान से मिले। वृद्ध सज्जन, जवानी में ही देशभक्ति की भावना से देश छोड़ कर यूरोप आ गये और कुछ न कुछ देश के लिए करते रहे। पिछली लड़ाई के समय जब नेताजी यूरोप आये तो आपको उन्होंने अपना प्राइवेट सेक्रेटरी बनाया, और जब यूरोप छोड़ कर वह सिंगापुर चले गये तो इन्हें ही अपना यूरोप का राजदूत बनाया। जब जर्मनी का पराजय हुआ, आप युद्धबंदी बनाये गये और बड़ी-बड़ी मुश्किलों से, पंडित नेहरू के हस्तक्षेप से, आपकी रिहाई हुई।

किन्तु, लक्षण ऐसे लग रहे हैं कि शायद आपको दूतावास से हटना पड़ेगा। क्योंकि, श्री भूलाभाई के सुपुत्र धीरूभाई की मृत्यु को लेकर यहाँ तरह-

तरह की बातें चल रही हैं। और, ऐसा लगता है, स्वीट्ज़रलैंड के भारतीय दूतावास के व्यक्तियों में बहुत बड़ा परिवर्तन हो।

रात भर टिप्-टिप् बारिश होती रही। हमलोग बहुत देर तक गप्पें करते रहे। तय हुआ, इस बरसात के मौसिम में स्वीट्ज़रलैंड के मनोहारी दृश्यों को देखना मुमकिन नहीं, अतः कल ही फ्रांस के लिए रवाना हो हो जाया जाय और उधर से लौटती बार जिनेवा, लुज़ान को देखते फिर घर की ओर।

२८-५-५१

वर्न से पेरिस

बादल खुल गया है, सुनहली धूप निकल आई है। इच्छा होती है, एकाध दिन यहाँ और ठहर लिया जाय। किन्तु यह हो नहीं सकता—हवाई जहाज का जो सम्बन्ध हमने तय कर लिया है, उसे बदला नहीं जा सकता। लेकिन, जाने के पहले कुछ चीज़ें तो खरीद लेनी ही हैं। जलपान करने के बाद हमलोग बाज़ार चले। यहाँ का बाज़ार कोई बहुत लम्बा-चौड़ा नहीं; लेकिन साफ़-सुथरा। बड़े-बड़े मकान, शीशे के भीतर चमचमाती चीज़ें। दूकानों में काम करने वाली स्वीट्ज़रलैंड की स्वस्थ सुन्दर युवतियाँ—अँगरेजी भाषा समझने में उन्हें कुछ कठिनाई हो सकती थी, लेकिन सत्यनारायण के रहने से कोई दिक़्क़त नहीं हुई। मुझे जित्तिन के लिए 'एयर रायफल' ख़रीदना था और दुलहिन के लिए एक घड़ी। ओझा को एक कैमरा और एक घड़ी। स्वीट्ज़रलैंड में आर्म्स-ऐक्ट नहीं है। सभी नागरिकों को मन चाहे अस्त्र-शस्त्र खरीदने और उन्हें व्यवहार करने का हक़ है। एयर रायफल के लिए तो अपने देश में भी लाइसेंस की ज़रूरत नहीं, इसीलिए ले लिया। किन्तु, बढ़िया से बढ़िया पिस्तौल-रिवाल्वर, सस्ती से सस्ती क़ीमत पर बिकते देख कर मन बहुत ललचाया। दूकानदार ने कहा—हमारे सारे देश में तो आपको इन हथियारों को रखने में कोई दिक़्क़त नहीं होगी; किन्तु उसके बाद आप जानें, आपकी सरकार जाने।

घड़ियों के लिए तो स्वीट्ज़रलैंड मशहूर है ही। घड़ियाँ अच्छी ही होती हैं और सस्ती भी होती हैं। कैमरे भी तरह-तरह के देखे—सुन्दर, टिकाऊ, सस्ते। ओझा ने एक खरीद लिया। सौदा-सुल्फ़ा करके हम 'टॉमस-कुक' के दफ्तर में आये और अपनी पेरिस-यात्रा के सम्बन्ध में

सारी बातें तय कीं। यह टॉमस-कुक कंपनी भी एक अजीब-सी चीज़ है। इसके सूत्र को आप पकड़ लीजिये फिर संसार भर की यात्रा आप मज़े में कर आयेंगे। हमने उन्हें कह दिया और उन्होंने लंदन फोन करके ज़ुरिख़ से हमारे लिए हवाई जहाज की सीट रिज़र्व करा दी। यहाँ से पेरिस जाने और जिनेवा हो कर ज़ुरिख़ लौटने तक का टिकट बनवा कर मँगवा दिया। पेरिस में हमारे लिए एक होटल में जगह ठीक कर दी। हम सिर्फ कह कर खाने चले गये थे। जब खा कर लौटे, सारी बातों का प्रबन्ध हो चुका है और तब उन्होंने अपना बिल दे दिया। इन सारी सेवाओं के लिए वे कुछ नहीं लेते। जिस चीज़ में जितना दाम लगता है, उतना ही देना पड़ता है।

शाम का खाना स्टेशन पर ही खा कर हमलोग पेरिस के लिए रवाना हो गये। मैंने सत्यनारायण से आग्रह किया कि कम से कम शाम का खाना मेरी ओर से हो। और, जब भोजन के बाद बिल का भुगतान करना पड़ा तब सत्यनारायण की वह बात याद आई—जिनके पास ज्यादा पैसे हों, वह स्वीट्ज़रलैंड आवें। उनके पैसे तुरत खर्च हो जायेंगे ताकि वे जल्दी अपने घर लौट जायँ।

गाड़ी आने में देर थी। हम स्टेशन पर ही रह गये। सत्यनारायण को अपनी उत्तर-यात्रा की तैयारी करनी थी, अतः हमने उन्हें फ़ुर्सत दे दी। बस, दो आदमी एकाकी उस सुदूर देश में चहलकदमी कर रहे हैं। न हम किसी की भाषा समझ सकते हैं, न हमारा रूपरंग ही उनसे मिलता है। किन्तु, मानों वे ऐसे अपरिचितों को देखने के आदी हो गये हैं। एकबार सर से पैर तक देखते हैं, फिर चल देते हैं। हम कभी बुक-स्टॉलों के नज़दीक जाते हैं, किन्तु, वहाँ भी पुस्तकें और पत्रिकायें अँगरेज़ी की नहीं बिकतीं। अख़बार भी जो मिलते हैं, वे भी स्वीट्ज़रलैंड की भिन्न-भिन्न भाषाओं के ही। यहाँ के अख़बारों की पृष्ठ संख्या देखकर मैं तो हैरत में पड़ गया हूँ—कोई भी ऐसा अख़बार नहीं देखा जो २०-२५ पृष्ठ से कम

का हो ? और, यहाँ का एक बहुत बड़ा अख़बार तो लोगों में मुफ़्त ही बँटता है। स्वीट्ज़रलैंड के सभी ऐसे लोगों के नाम इनके पास हैं, जिनमें चीज़ें खरीदने की ताक़त हो। वहाँ के व्यापारी अपनी चीज़ों का विज्ञापन इस पत्र में देते हैं और एक सुम्पादित दैनिक के रूप में यह अखबार ऐसे सभी घरों में पहुँच जाता है। इन अख़बारों को देख कर अपने देश के अख़बारों की दयनीय और करुण स्थिति की याद बार-बार आती थी।

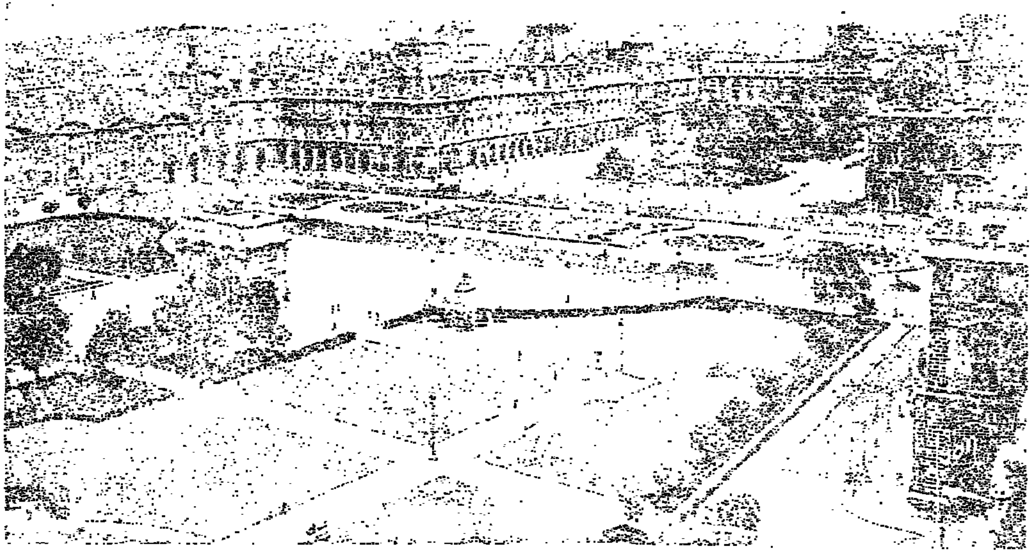
विदेशी भाषायें न जानने से कभी-कभी कितनी परेशानी हो जाती है, यह यहाँ अनुभव किया। इंगलैंड में तो जहाँ 'जेन्टिलमैन' लिखा देखा, समझ गया, वहाँ पेशाबखाना होगा। लेकिन, 'जेन्टिलमैन' का स्वीस रूप क्या है, हमें मालूम नहीं। और, हम जिससे पूछते हैं, वह हमारी भाषा नहीं समझता। स्टेशन के कमरों पर के साइन बोर्ड को पढ़ने और समझने की कोशिश करता। एक-दो में घुसकर देखने की कोशिश भी की, लेकिन, असफलता ही असफलता। एक ऐसे सज्जन दिखे, जिन्हें देखकर हमने मान लिया कि ये अँगरेजी जरूर जानते होंगे, और बात सही भी निकली। उनसे पूछने पर मालूम हुआ, स्टेशन से अलग 'अन्डर ग्राउन्ड' में पेशाब घर है। वहाँ जाकर हम निवृत्त हुए।

गाड़ी स्टेशन पर पहुँचने के थोड़ी देर पहले देखा, सत्यनारायण फिर आ पहुँचे हैं। हम लोगों ने 'स्लीपिंग कार' के लिए टिकट लिये थे। वहाँ के उन सोनेवाले डब्बों के आराम का क्या कहना ? वहाँ बिछावन है, ओढ़ना है, तकिया है, डब्बों को बिजली से गर्म रखा गया है। रौशनी का इन्तज़ाम ऐसा है कि आप सोये ही सोये उन्हें जला सकिये, बुता सकिये ? हमारे सामान रखवा कर इस गुलगुले बिछौने और ओढ़ने के अन्दर सुला कर, सत्यनारायण गार्ड से मिलने गये और फिर उसे बुलाकर हमसे मिला दिया।

बात यह है कि यह गाड़ी रात में ही स्वीट्ज़रलैंड की सरहद पार कर फ्राँस पहुँच जाती है। सरहद पर ही पासपोर्ट की जाँच होती है। उन्होंने

ऐसा प्रबन्ध कर दिया कि हमारे सोने में कोई बाधा न हो और यह काम भी हो जाय। हमने अपने पासपोर्ट गार्ड को दे दिये और सो रहे।

कुछ इधर-उधर की बातें, कुछ इनकी उन्नति पर प्रशंसा, कुछ अपनी देश-दशा पर आह-उसाँस, फिर पेरिस का रंगीन सपना दिमाग़ में लिये सोने जा रहा हूँ।



पेरिस—एक दृष्टि में

ज : पेरिस के दिन, पेरिस की रातें !

२६-५-५२

पेरिस की ओर

जब नींद टूटी; देखता हूँ, मेरी गाड़ी हरे-भरे मैदानों से गुज़र रही है। यह भूमि फ्राँस की है। फ्रांस—यह कल्पना ही सारे शरीर में आनन्द की पुलक लाने को काफी थी !

फ्रांस—यूरोप की सभ्यता-भूमि, कलाभूमि, भावना-भूमि ! फ्रांस ने संसार को फ्रांस की क्रान्ति या नेपोलियन ही नहीं दिये। इतिहास में राजनीति को इतना अधिक स्थान मिल गया है कि उसने मानव के अन्य सारे प्रयत्नों को दबा रखा है ! इतिहास—राजाओं की नामावली पढ़िये, राज्यों की उलट-पुलट का वर्णन पढ़िये या विजेताओं की यशोगाथा पढ़िये,—जिनका सबसे बड़ा कर्तव्य यह कि कितने देशों को गुलाम बनाया, कितने लोगों को तलवार के घाट उतारे !

जब इतिहास सारे मानव प्रयत्नों को स्थान देना शुरू करेगा, फ्रांस यूरोप के सभी देशों में शीर्ष स्थान पायेगा ही, संसार के इतिहास में भी उसका उल्लेख सोने के अक्षरों में होगा !

किन्तु, फ्रांस की भूमि का दर्शन ही मुझे कहाँ भावना में बहाये ले जा रहा है।

तो, सामने यह मैदान। स्वीट्ज़रलैंड ऐसी छोटी-छोटी खेतियाँ नहीं, तो इंगलैंड ऐसे बड़े-बड़े चकले भी नहीं।

खेतों में फसलें लगी हैं, कहीं पशु चर रहे हैं, कहीं सड़कों पर साइकिलें दौड़ रही हैं। देखिये, देहात की इस सड़क पर भी वह कोई युवती है जिसकी साइकिल सरसर आगे बढ़ रही है, किन्तु जिसके सुनहले बाल पीछे लहरा रहे हैं !

फ्रांस की कामिनियाँ—कैसी रंगीन कल्पना है उनके बारे में। किंतु, सामने के पेड़ पर जो दो पंडुक बैठे दीख रहे हैं, यह कहते हैं, कामिनियों को पेरिस में देखना; अभी हमें देखो—इस देहाती वातावरण को देखो!

पर, क्या यह सम्भव है? ज्यों-ज्यों गाड़ी बढ़ती जाती है, शहराती वातावरण सामने आता जाता है? उफ़, यह श्मशान भूमि—कितने लोगों की कब्रें एक साथ दिखाई पड़ीं?

जीवन मधुर है—तो मृत्यु भी तो अटल घटना है।

अब खेतों की जगह बगीचे दिखाई पड़ते हैं, फसलों की जगह तरकारियाँ उपजाई जा रही हैं! सड़कों पर ट्रक—सब्जी, फल, फूल से भरे वे कहाँ जा रहे हैं? पेरिस!

पेरिस हमारे निकट होती जा रही है!

किन्तु यह क्या? ज्यों-ज्यों पेरिस निकट आती जाती है, सौन्दर्य पीछे भागता जा रहा है। इधर-उधर छोटे-बड़े कारखाने, उनकी चिमनियाँ धुआँ उगल रहीं!

धुआँ, धुआँ! मकान काले, हवा में कालिमा! पेरिस! तुम क्या असुन्दर हो? लोगों ने क्या धोखा दिया था? इतना बड़ा धोखा—हाँ, इतना बड़ा धोखा, यह पेरिस के रेलवे स्टेशन ने डंका बजाकर कहा! मकान काले, वातावरण काला; और लोग! मैं तो पेरिस की कामीनियों को देखने आया हूँ, वे कहाँ हैं?

स्टेशन पर सामान रख चला सिटे विश्वविद्यालय की ओर, जहाँ एक परिचित सज्जन हैं।

टैक्सी पर जा रहा हूँ—सड़कों पर घूरघूर कर देख रहा हूँ। क्या देखता हूँ, क्या पाता हूँ?

ढूँढता हूँ परियाँ—पाता हूँ, सड़क पर कूड़ा-कचरा, अधेड़ मोटरें, धक्कमधुक्का। बगल में तरकारियों की दुकान, फलों की दुकान, और हाँ,

यह फूलों की दुकान भी। किन्तु मैं तो दूसरे किस्म के फूल देखना चाहता हूँ—चलते-फिरते, हँसते-मुस्कुराते फूल ! हाँ, देखिये, इन अनेक अध-बूढ़ियों में वह कोई युवती ही तो चली आ रही है। किन्तु, धोखा—आँखों ने धोखा दिया। जब निकट आई, देखता हूँ, मुँह पर मकड़ी का जाला !

अच्छा है, हमारी टैक्सी तेजी से बढ़ती जा रही है। जहाँ-जहाँ चौराहे, वहाँ-वहाँ प्रतिमायें। किन्तु मन भिन्ना उठा है, उन्हें ध्यान से कौन देखे। यह बूढ़ा शेर—किसने इस पर हरा रंग पोत दिया है। टैक्सी, टैक्सी भगो, भगो !

सिटे यूनिवर्सिटी ! टैक्सीवाले ने जो माँगा, वह दिया। यहाँ के हिसाब का क्या कहना ! हर चीज़ हज़ार में ! सैकड़े पर आया, तो भाग्य समझिये। बर्न से ही हम तीस हज़ार ले आये थे—फाँस का फ्रैंक ! शायद सबसे सस्ता सिक्का।

जब यूनिवर्सिटी के हाते में गया, तो जी में जी आया ! कैसी सुन्दर इमारतें, कितने रंगीन फूल, कितना बड़ा मैदान ! और युवक और युवतियाँ ! इधर-उधर की बेंचों पर बैठे, कोई मैदान में खेलते-कूदते। एक काला चेहरा देखा, तो उन्हीं से पूछ बैठा। गोयराला तो मिले नहीं, इस सिलोनी युवक आनन्द ने अपने व्यवहार से मन को आनन्दित कर दिया।

सोचा, चलो, इमबैसी। सत्यनारायण ने ब्रिगेडियर ठक्कर के नाम पत्र दे दिया है, फिर, कोई न कोई भारतीय तो मिल ही जायगा।

अँग्रेजी भाषा का राज्य पूरा खत्म हो चुका है। किससे पूछें, क्या पूछें। जिससे पूछते हैं, वह मुँह देखने लगता है। अन्त में एक सज्जन मिले, जो टूटी-फूटी अँगरेजी जानते थे। उन्होंने टैक्सीवाले को बता दिया, भूलते-भटते हम भारतीय दूतावास में पहुँचे।

ब्रिगेडियर ठक्कर तो मिले, किन्तु वह अभी-अभी पेरिस से बाहर जा रहे हैं! हाँ उन्होंने बतलाया कि सत्यनारायण ने उन्हें फोन किया था और कहा कि प्रेसिडेन्ट के प्राइवेट सेक्रेटरी का केबुल मेरे नाम से आया है कि अवधेश्वर भले चंगे हैं! इस समाचार से थोड़ा आश्वस्त हुआ। किन्तु, सवाल तो रह ही गया कि पेरिस कैसे देखा जाय—ठक्कर साहब ने कहा था कि यहाँ के इन्फोरमेशन इन्चार्ज प्रेमदा से मिलिये। पर भारतीय दूतावास क्या ऐसे है जहाँ भारतीयों को सहायता मिल सके?

बार-बार चेष्टा करके भी जब वहाँ किसी को खोज-खबर लेते नहीं देखा, तो कुक की शरण ली। विदेशों के यात्रियों के लिए टामस कुक से अधिक सहायक कोई दूसरा नहीं। उसीके बताये एक होटल में डेरा डाल फिर सिटे की ओर चले!

अब शाम होने को थी। अरे, अब तो पेरिस की कायापलट हो चुकी है। वही सड़कें, वही मैं। किन्तु अब तो दूसरा ही रंग दिखाई पड़ता है। तुरत एक पुरानी कहानी याद आगई। एक राजकुमार किसी वेश्या से फँसा था। राजा ने कहा—वहाँ जरूर जाओ, किन्तु संध्या को नहीं, भोर को! राजा का कहना ठीक था। मैंने जिसे भोर में देखा, संध्या को वह पेरिस वह पेरिस नहीं रह गई थी!

फिर गोयराला से भेंट नहीं हुई, हाँ, बलबीर जी मिले। वह पेरिस के भारतीय विद्यार्थियों की मजलिस के सभापति हैं, गोयराला उपसभापति। उपसभापति का काम सभापति ने किया। उन्होंने कुछ जरूरी सलाहें दीं—हमने तय कर लिया, अब पेरिस में अपनी नाव आप खेनी है।

जब लौट रहे थे, पेरिस की शोभा अपने ओज पर थी। सजधज कर वह हर अतिथि को सादर आमंत्रित कर रही थी। हमने भी सोचा, चलो, पेरिस की सबसे बड़ी खूबी से ही पेरिस के देखने का श्रीगणेश करें।

कैसिनो दि पेरिस—पेरिस आकर कौन इसे बिना देखे जा सकता है? उसी को देखें। जब उसके दरवाज़े पर पहुँचे, देखा दो और भारतीय

वहाँ खड़े हैं। दो-दो चार। चार भारतीय एक कतार में। हम खुद एक तमाशा बन गये थे।

पेरिस की नाज़नियों का अखाड़ा जुटा—मनचलों का जमघट लगा। नीचे-ऊपर—क्या एक भी जगह खाली?

यह कैसिनो क्या है? क्या नहीं है? यहाँ नृत्य है, संगीत है, रंगों का मेला है, उमंगों की बरसात है। लगभग तीस लड़कियाँ। चढ़ती जवानी; निखरा यौवन! आती हैं, गाती हैं, नाचती हैं! पहले कपड़े पहन कर आती हैं, फिर कपड़े उतार कर आती हैं। देखिये, वह लड़की लेटी है—पैर से सिर तक देखिये, पृष्ठभाग है यह। मांसल जांघ, पृथुलनितम्ब, क्षीण कटि, पीन पृष्ठभूमि। उस लड़की को देखिये, वह जरा तिरछे आपकी तरह घुमी हुई है। नख से शिख तक देखिये। आपकी आँखें कहाँ जाकर अड़ीं, देख रहा हूँ। आपकी ही नहीं सारी आँखें। गोरे कटोरे के ऊपर उस लाल बिन्दु पर। आप शरमा रहे हैं। शरम की क्या बात। यह पेरिस है। पेरिस क्या आपकी शरम दूर करेगी। देखिये, दोनों ने अँगराइयाँ लीं, उठ खड़ी हुईं और लीजिये—यह ताक धिनाधिन। आवरण-भूषण के बन्धनों से मुक्त दो रति-दूतिकायें आपकी भावुकता को आमंत्रण दे रही हैं! तरह-तरह की अंग-भंगिमा, तरह-तरह के हाव-भाव।

नग्न सौन्दर्य! सुना था, यूरोपीय चित्रकारों की कृतियों में देखा भी था। किन्तु यों प्रत्यक्ष देखने का तो यह पहला ही अवसर था। जो दो थीं, अब दस हो गईं। नीचे के रंगीन रंगमंच पर नग्न सौन्दर्य का यह प्रदर्शन, जिसे ऊपर की रंग-बिरंगी रोशनी और भी झलमल-झलमल बना रही है। किन्तु, कभी-कभी प्रशंसा करने को भी जी चाहता है! कैसे सुडौल शरीर हैं! पिंडलियाँ, जाँघें, कटि, वक्षस्थल, गरदन, बाहें, अँगुलियाँ—सबमें एक अजीब तारतम्य! दस चेहरे, दस ढंग की बनावटें, किन्तु दसों मिल कर जैसे नारी प्रतिमाओं की एक माला! एक ताल पर पैर उठ रहे, कटि हिल

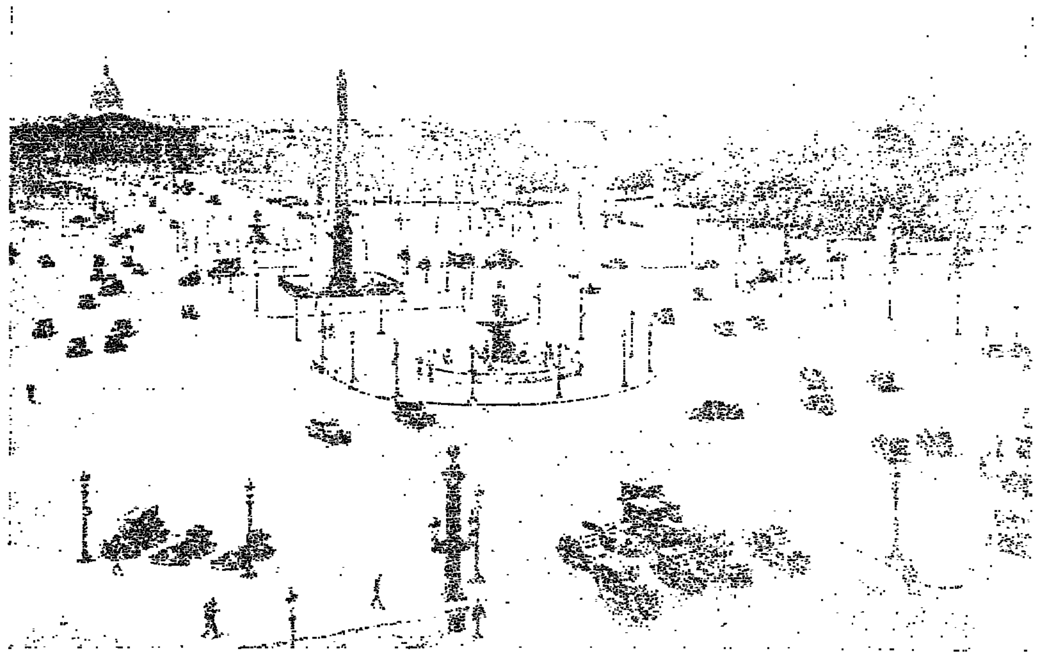
रही, वक्षों में स्फुरण हो रहा, हाथ हिलोरें ले रहे, अँगुलियाँ नाच रहीं। नग्न सौन्दर्य क्या सिर्फ वासना को ही उभारता है?

रंगमंच के कौशल का भी क्या कहना? कभी ये सुन्दरियाँ फूलों के रूपमें खिलती हैं; कभी ऐरोप्लेन के रूप में उड़ती हैं! जादू-सा लगता है, जादू-सा!

और रंगमंच का जादू दर्शक-मंडली पर क्या असर कर रहा है? हर दर्शक की बगल में एक दर्शिका—चाहे वह पत्नी हो, या प्रेयसी हो! हाँ, यहाँ पत्नियाँ भी अपने पति को बगल में बिठला कर ऐसे दृश्य देखने में नहीं झिझकतीं! और प्रेमिकायें न देखें तो दिखायें कैसे? कोई-कोई तो अभी दिखला रही हैं। मेरे सामने जो छोकड़ी बैठी है, वह किस निर्लज्जता से अपने को, बगल में बैठे अपने प्रेमी की गोद में डाल देती है!

तीन घंटे का खेल इन तीन घंटों तक आप तीनोंलोक और तीनों काल न भूले रहें—तो मैं बाजी हारने को तैयार हूँ। बीच में जो पन्द्रह मिनट का इन्टरवल—वह तो रंग को और गाढ़ा कर देता है! देखिये, किस तरह प्यालियाँ उछल रही हैं, खनक रही हैं! और, मेरे एक दोस्त को इस मौके पर भी पानी पीने का सूझ रहा है—तो एक ग्लास पानी दो सौ फ्रांक में पीजिये! इससे सस्ती तो यहाँ है लाल शराब—फ्रांस की प्यारी चीज़, सर्व साधारण की चीज़, नितान्त निरीह समझी जाने वाली चीज़।

जब कैसिनो से लौट रहा था, तब मालूम हुआ, पेरिस क्या है? और, जो पेरिस में रम गया, उसका दिल फिर किसी दूसरी जगह क्यों नहीं रमता!



देखिए ! चौराहा है !! पेरिस का !!!

३०-५-५१

पेरिस

क्या दो दिनों में पेरिस देखी जा सकती है? जो शहर अपने जन्म की दो हजारवीं वर्षगांठ मना रही है, उसे कुछ घंटों में देखना—पागलपन नहीं तो क्या है?

किन्तु, आवश्यकता कभी-कभी बड़े से बड़े पागलपन को करा लेती है। कल का दिन बर्बाद गया, कल की रात में ही पेरिस को छोड़ देना है। फिर हमारे लिए चारा क्या रह गया है? जो कुछ घंटे हैं, उनका उपयोग करो, उपयोग करो,। न बैठो, न सोओ—देखो, देखो!

और, आज भोर में नहा-धो के जो निकला, तो रात के यह दो बजे आकर सोने जा रहा हूँ।

दिन भर पेरिस के कलातीर्थों के दर्शन करता रहा; रात में पेरिस के नैश-विहार की एक झाँकी ली। पेरिस का नैश-विहार विश्वविख्यात है। पेरिस आकर यदि इससे वंचित रह गये, तो जानकार गर्दनें हिलाकर आप पर मुस्कुरायँगी।

कुक की शरण ली। ६०० फ्रैंक में आधुनिक पेरिस, ६०० फ्रैंक में ऐतिहासिक पेरिस, ७५० फ्रैंक में वारसलीज और २५०० फ्रैंक में निशा-विहार। निशा-विहार को मँहगा तो होना ही चाहिये। बात यों है कि वहाँ सिर्फ जाना नहीं होता है, नशा भी करना लाज़िमी है। न पीजिये, किन्तु पिलाइये और छक कर!

भोर में आधुनिक पेरिस देखी। कम से कम बीस चीजें दिखलाईं—एक से एक अद्भुत, विशाल, कलामयी, सौन्दर्यमयी। लेकिन मेरे मन को भाईं सिर्फ़ दो चीज़ें—लुव्र और कलबर्ट। एक में कला के दर्शन हुए,

दूसरी में क्रान्ति के। मेरा जीवन तो यही रहा है, या तो कला-क्षेत्र में विचरण करते रहे या क्रान्ति के मैदान में जूझते रहे !

लुव्र—और, उसका प्रवेश ही कितना आकर्षक है। एक बहुत बड़ा बगीचा—बहुत बड़ा १४०० मीटर का। बड़ी ही कला से इसे सँवारा और सजाया गया है। कलबर्ट ने इसके लिए आज्ञा दी थी और पेरिस की सुप्रसिद्ध बागवान ल।' नोत्रे ने इसकी क्यारियाँ तैयार कीं। फिर हर क्यारी की मोड़ पर फ्रांस के प्रसिद्ध मूर्त्तिकारों की बनाई मूर्त्तियाँ रखी गई हैं। रंगबिरंगी सरज़मीन पर ये जीती-जागती-सी मूर्त्तियाँ। हर मूर्त्ति आपको अपने पास कुछ देर खड़ा होने के लिए निमंत्रण देगी—जिसे ठुकरा नहीं सकते ! मूर्त्तियों की हर अंग-भंगिमा बोलती-सी। ये मूर्त्तियाँ मुख्यतः रोमन देवीदेवताओं की हैं।

इस बगीचे से और इन मूर्त्तियों से किसी तरह छुटकारा माँग कर आप लुव्र में आइये। यह विशाल प्रासाद। इसे फ्रांसिस प्रथम ने प्रारम्भ किया और नेपोलियन तृतीय ने १८५७ में पूरा किया। चौदहवें लुई तक इसमें राजघराना रहा करता था किन्तु जब लुई ने वारसलीज बनवा लिया, तब से यह पूरा का पूरा संग्रहालय के लिए ही रख लिया गया है !

फ्रांसीसियों का कहना है, लुव्र संसार का सर्वोत्तम संग्रहालय है ! यह संसार में अनुपम है, इसे तो आज तक कोई अस्वीकार नहीं कर सका। कला की इतनी चीजें एक जगह कहीं नहीं मिलेंगी। लुव्र को देख कर ही आप कल्पना कर सकते हैं कि क्यों पिछली लड़ाई में फ्रांसीसी सरकार ने इसे "खुला नगर" घोषित कर दिया था। कहीं एक बम भी यहाँ गिरता, तो न-जानें संसार की कितनी अनुपम निधि बर्बाद हो जाती।

हमने मूर्त्तिकक्ष से ही प्रारम्भ किया, और मूर्त्तिकक्ष में प्रथम स्थान रोमन मूर्त्तियों को मिलना ही चाहिये। हमारे मार्गदर्शक ने रोमन मूर्त्ति-कला के प्रारम्भ से लेकर उसके चरम विकास तक की सभी मंजिलों की मूर्त्तियाँ दिखला दिखला कर बताया। ईसा से ६ सौ बरस पहले की 'हीरा'

की मूर्त्ति से लेकर दूसरी सदी की 'वेनस द मिलो' की मूर्त्ति तक। कहाँ पहले सीधी रेखाओं से शुरू किया गया और कहाँ वह भंगिमाओं के चरम विन्दु पर समाप्त हुआ। वेनस की यह मूर्त्ति खंडित है, उसके कुछ खंडित अंग जो प्राप्त हुए हैं, उन्हें भी उसके निकट ही सुरक्षित रख दिया गया है। यह मूर्त्ति मिलो-द्वीप में प्राप्त हुई थी। यहाँ 'विजय' की मूर्त्ति भी बड़ी ही सजीव है। पंखोंवाली वह देवी—मालूम होता है अभी-अभी स्वर्ग से उतरी है और अभी-अभी फिर उड़ने को पर तोल रही है। चेहरे पर मुस्कान—आनन्द की या व्यंग की !!

फिर ग्रीक मूर्तियों का कक्ष। यह मूर्त्ति कला ५ वीं सदी से प्रारम्भ होती है। शौर्य के चित्रण में ग्रीकों ने कमाल किया था—मांस-पेशियाँ ऐसी लगीं कि मालूम होता है, अब भी वे जीवित खड़ी हम जीवित मुर्दों के शरीर पर व्यंग्य कर रही हों।

फिर पूर्वी मूर्त्तियों का कक्ष—२४ कमरों में भरी पड़ी हैं ये मूर्त्तियाँ। चाल्दिया, असीरिया, फारस की मूर्त्तिकला के उत्तमोत्तम उदाहरण। और मिश्री मूर्त्ति कला का कक्ष भी तो आश्चर्य में डालनेवाला है। ईसा के तीन हज़ार वर्ष पहले तक की मूर्त्तियाँ यहाँ संग्रहीत हैं।

ये मूर्त्तियाँ जो पूर्वी प्रतिभा की प्रतीक थीं, आज अपने देश से दूर पड़ी हुई अपनी कारीगरी से संसार को चकित-विस्मित कर रही हैं। क्या ये अपने देशों की शोभा नहीं बढ़ा सकती थीं ? किन्तु, उन कलाप्रेमियों को भी धन्यवाद देने से नहीं चूकिये जिन्होंने उन देशों की गली-गली घूम कर इनका संग्रह किया—कितने पैसे खर्च हुए, कितना परिश्रम लगा, कितनी परीशानी हुई। हो सकता है, यदि ये संग्रह नहीं किये होते, तो ये नष्ट हो गई होतीं—जिस तरह आज भी नालंदा की मूर्त्तियों की दुर्गत हो रही है। कोई उन्हें गला कर लोटे ढलवाता है, कोई उन्हें सिल लोढ़े की तरह इस्तेमाल करता है ! फिर, कला को देश की सीमा में क्यों बांधा जाय !

इसलिये पत्थर और कांसे की दुनिया से---या यों कहिये छेनियों की दुनियाँ से रंगों की दुनिया में या कूचियों की दुनिया में।

उफ़, इस दुनिया में प्रवेश करते ही आँखें चौंधिया जाती हैं। प्रारम्भिक इटालियन चित्रकला से लेकर आधुनिक अमेरिकन चित्रकला तक का यह अपूर्व संग्रह। इटालियन, स्पेनिश, फ्लोमेंश, डच, जर्मन इँगलिश और अमेरिकन---सभी स्कूलों के लिए अलग-अलग कक्ष और एक-एक कक्ष में बड़े-बड़े कई-कई कमरे। संसार का कोई भी महान् चित्रकार ऐसा नहीं जिसके चित्र, उन्हीं के हाथों से अंकित, यहाँ नहीं हों। अपने कुछ प्यारे चित्रकार और कुछ प्यारे चित्रों को मूल रूप में यहाँ देख कर मैंने अपने जीवन को धन्य समझा। लियोनार्डो द विन्सी, टीशियन, राफायल, एल ग्रेको, रेम्ब्रांड्ट, रुबन, हंस होलाबन, गोया, आदि के चित्रों को देख-देख कर मुग्ध होता रहा। इन्हें छपे हुए रूप में, छोटे-छोटे आकार में देख कर ही मुग्ध हुआ था। यहाँ ये अपने मूल विशाल रूप में थे। उनमें से कई चित्र तो इतने बड़े कि एक दीवाल को अकेले घेरे हुए। इतने बड़े चित्र, किस तरह बनाये गये होंगे, कितना परिश्रम लगा होगा,--- एक भी रेखा अस्पष्ट नहीं, एक भी भाव संदिग्ध नहीं। चित्रों को देखकर आप स्वयं पुकार उठेंगे, चित्रकार का भाव यह होगा! हाँ, जहाँ वह भावगोपन करना चाहता है, वहाँ आप उसके रहस्य-जाल को खोल भी नहीं सकेंगे। "मोना लिसा" का चित्र बहुत दिनों से देखा था, उस पर आलोचनायें भी पढ़ी थीं, उस पर एक बार पंतजी ने एक कविता भी सुनाई थी। वह रहस्य पूर्ण चित्र आज मेरे सामने अपने मूल रूप में था--- किन्तु क्या उसकी उस रहस्यावृत्त मुस्कान का अर्थ आज भी लगा सका!

यों यहाँ सभी चित्र खुले हुए हैं---अधिकांश तैलचित्र हैं। किन्तु मोना लिसा के चित्र को शीशे के फ्रेम में पाया। मार्गदर्शक ने बताया कि एक बार किसी दुष्ट ने उस चित्र पर कुछ दाग लगा दिया था। बड़ी मुश्किल से उस दाग को हटाया जा सका; किन्तु सोचा गया कि इसे और

भी सुरक्षित रूप में रखा जाय। मोनालिसा का यह चित्र कोई बड़ा भी नहीं है।

कुछ उन्नीसवीं सदी के फ्रेंच चित्रकारों के चित्र ने मुझे काफी प्रभावित किया। वे अद्‌भुत लोग थे। प्रकृति का सही चित्रण करने के लिए वे जंगलों में चले गये और वहाँ ऐसे-ऐसे प्राकृतिक दृश्यों और जीव-जन्तुओं का चित्रण किया, जिनसे आँखें हटाना मुश्किल पड़ जाता था।

रोरिक के चित्रों के रंग से मैं बहुत ही प्रभावित था। किन्तु यहाँ के रंगों के उभार ने मुझे रोरिक को भी भुला दिया।

लुव्र में मूर्तियां और चित्रों के संग्रह के अतिरिक्त आभूषणों बर्तनों और कसीदों का भी बहुत ही सुन्दर संग्रह है।

जब मैं लुव्र में घूम रहा था, दो व्यक्तियों की याद बार-बार आती थी। एक राय कृष्णदास जी की और दूसरे अपने उपेन्द्र महारथी की। राय कृष्णदास जी भारत-कला-भवन के संग्रह-कार्य में लगे हुए हैं। यदि एक बार वह इस संग्रहालय को देख जाते, तो उन्हें काफी उत्साह मिलता—यों तो उनका उत्साह इस बुढ़ापे में भी अदम्य है। क्या उत्तर-प्रदेश की सरकार उन्हें यूरोप के भिन्न-भिन्न संग्रहालयों को देखने के लिए नहीं भेज सकती? यों ही यदि महारथी आकर लुव्र, इंगलैण्ड और यूरोप के चित्रों को देख जाता, तो उसकी तूली कुछ और कमाल करती। न-जाने क्या बात है, अपने देश के चित्रों में जीवन का मुझे अभाव दीखता है। उनमें रेखायें इतनी होती हैं और वे इतनी बारीक होती हैं कि उनसे जीवन उभरता नहीं, ढँप-सा जाता है। उन चित्रों को देख कर आँखों को तृप्ति मिले और हृदय को शान्ति—किन्तु, हमारे देश में आज जिस ज्वलंत जीवन और उसके उभार और निखार की आवश्यकता है, उसके लिए हमारी चित्रकला में कुछ नवीनता आनी चाहिये!

लुव्र से लेकर कन्कॉर्ड तक वह बगीचा चला गया है। उसी बगीचे की सैर करते, उन मूर्तियों को देख कर उनके कलाकारों की स्मृति में सर झुकाते

और इस वाटिका के सौन्दर्य से अपनी आँखों को सफल करते कन्कॉर्ड तक पहुँच जाइये ! कला आप देख चुके और क्रान्ति के इस चौरस्ते पर आइये। किन्तु, यह सोचिये कि इसे क्रान्तिकारियों ने क्रान्ति के मैदान के रूप निर्माण किया या कराया था। नहीं, लुई १५ वें ने १७४२ में इसका बनवाना शुरू किया। इसका निर्माण प्रसिद्ध कलाकार ग्रबील की तैयार की गई रूपरेखा पर प्रारम्भ हुआ था, सोचा गया था कि पेरिस के मध्य में एक ऐसा भव्य स्थान बनाया जाय, जहाँ बड़े से बड़े महोत्सव के अवसर पर अधिक से अधिक लोग इकट्ठे हो सकें। बीच में लुई पन्द्रहवें की एक विशाल मूर्ति बनाई गई थी। किन्तु किसने कल्पना की थी कि एक राजा द्वारा तैयार किया गया यह भव्य-दिव्य स्थान एक दिन एक राजा के ही रक्त से रंजित होगी ! १७९२ में जब फ्रांस की क्रान्ति हुई, उत्तेजित जनता ने सबसे पहले तो उस मूर्ति को तोड़-फोड़ कर नष्ट कर दिया। फिर उसी जगह फाँसी का तख्ता खड़ा कर लुई सोलहवें, उसकी रानी मेरी अन्टोनेट, औरलियन्स के ड्यूक और राजपक्ष के छः हजार लोगों को गिलोटिन के के घाट उतार दिया ! यही नहीं, इस स्थान का नाम बदल कर प्लेसदल रेवोलूशन—"क्रान्ति की भूमि" कर दिया !

अब इस स्थान पर, ठीक मध्य भाग में एक ऊँचा स्तम्भ है, जिसे क्लियोपेट्रा की सूई या 'ओबलिस्क' कहते हैं। मिश्र के राजा मुहम्मद अली ने यह स्तम्भ फ्रांस को उपहार में भेजा था। यह स्तम्भ ३४ सदियाँ देख चुका है। इस स्थान पर इसे खड़ा कराने और सजाने का श्रेय लुवा को प्राप्त है।

स्तम्भ के सामने बुरबन का महल है और इस विशाल प्रांगण में कला की कितनी ही सुन्दर निधियाँ हैं। स्तम्भ के उत्तर-दक्षिण दो फव्वारे हैं। फव्वारों की रचना में भी कमाल किया गया है। जल-परियों, देव-शिशुओं, राजहंसों और मछलियों की मूर्तियाँ इसका शृंगार करती हैं।

इस प्रांगण के चारों ओर, गोलाकार में, आठ ऊँचे चौतरे हैं,

जिन पर आठ मूर्तियाँ फ्रांस के आठ नगरों की प्रतिनिधित्व करती हैं! ये मूर्तियाँ देवियों की हैं, जिनके चारों ओर देवशिशुओं के चित्र हैं।

सारे प्रांगण में रोशनी का ऐसा प्रबन्ध है कि संध्या होते ही इसकी शोभा और बढ़ जाती है!

मैं बहुत देर तक भाव-मुग्ध बना इस स्थान को देखता रहा। फ्रांस! तुम भी अजीब देश हो—एक ही रेखा में तुम्हारे यहाँ कला भी है और क्रान्ति भी है!

किन्तु कला और क्रान्ति तक ही रुक मत जाइये! आगे बढ़िये और देखिये यहीं से वह पथ गया है जिसे फ्रांस के लोग बड़े गर्व से 'स्वर्ग का पथ' कहते हैं—"शाँ ज़िलैज़ो!" उनकी दृष्टि में 'शाँ ज़िलैज़ो' संसार का सुन्दरतम पथ है। दोनों ओर पेड़ों की पंक्तियाँ—पाँच कतारों में। चार कतारों के बाद दोनों ओर पतली सड़कें और पाँचवीं कतार के बाद वह प्रशस्त पथ, जहाँ एक साथ चार-पाँच मोटरें जातीं और चार-पाँच मोटरें आती हैं? पेड़ों की कतारों के बाद फूलों की रंगीन क्यारियाँ! दिन में ये रंग-बिरंगे फूल आँखें तृप्त करते हैं। शाम को रंग-बिरंगी रोशनियाँ आखों को चकाचौंध में डालती हैं! इस स्वर्ग-पथ के छोर पर विजय-तोरण है, जिसे नेपोलियन ने बनवाया था। स्थापत्य कला के आचार्य शालग्रिन ने इसको साकार किया। बहुत ही विशाल है यह तोरण—ऊँचाई है ४९ मीटर और चौड़ाई ४५ मीटर। ऊपर की मूर्त्तियाँ फ्रांसिसी सेना के विजय अभियानों को प्रगट करती हैं और सबसे तो प्रभावशाली हैं इसके चार प्राचीर-चित्र—जिसे फ्रांस के तीन महान कलाकारों ने तैयार किया था—एक में सेना का प्रस्थान दिखाया गया है, एक में विजय; एक में प्रतिरोध और एक में शान्ति!

इस विजय तोरण के नीचे एक अज्ञात सैनिक की लाश दफ़नाई गई, जिसपर प्रतिदिन 'स्मृति-दीपक' जलाये जाते हैं।

आज इतनी अधिक चीजें देखी हैं और इतनी शानदार और ख़ूबसूरत चीज़ें देखी हैं कि उन सब का विस्तृत वर्णन क्या इस डायरी में लिखना संभव है? वह विशाल भवन जिसके नीचे नेपोलियन की लाश एलबा टापू से लाकर रखी गई, वह मिलिटरी स्कूल जहाँ नेपोलियन की शिक्षा-दीक्षा हुई और अभी पिछली लड़ाई में जहाँ जर्मनों से दो-दो हाथ हो गई,—देखिये, उसकी दीवारों पर अभी भी गोलियोंके दाग हैं। वह सीन नदी के उस पार 'सीलो भवन' जो १८७८ से अंतर्राष्ट्रीय-प्रदर्शनी के लिए बनाया गया और फिर जहाँ १९३७ की अंतर्राष्ट्रीय प्रदर्शनी हुई और यह 'इफेल-टावर' जो इस्पात की संसार में सबसे ऊँची कृति है, मैडेलिन का वह मन्दिर जो आकार-प्रकार में पूरा ग्रीक है और सबसे बढ़कर 'प्लेस दल' ओपेरा, जो संसार में सबसे अधिक जीवनमय भवन समझा जाता है; जिसके भवन के बाहर ही आप कविता, संगीत, नाटक आदि की सुन्दर प्रस्तर प्रतिमायें देखेंगे। और, जहाँ फ्राँस की कला सदियों से पालन-पोषण और परिवर्द्धन पाती रही है। ओपेरा के बाद 'थियेटर फ्रैंकिस' की झलक आँखों में घूमती है, जहाँ फ्राँस के बड़े-बड़े कलाकारों की मूर्तियाँ हो आज-तक नहीं स्थापित हैं और जहाँ उत्तमोत्तम नाटक ही नहीं खेले जाते, बल्कि जो फ्राँसिसी नाटक-कला का एक म्यूज़ियम भी है।

और फिर वह 'नौत्रदाँ' जिसे विक्टर ह्यूगो ने अपने एक उपन्यास में अमर कर दिया है। 'नौत्रदाँ' को आधुनिक संसार के सात आश्चर्यों में गिना जाता है। यह एक गिरजाघर है। ११८३ में इसकी शुरुआत की गई थी और दो सौ वर्षों में यह तैयार हुआ। इसी के एक गुम्बद पर एक घड़ी लगाई गई है, जो फ्राँस की सबसे बड़ी घड़ी समझी जाती है। इसी के अन्दर एक सुरक्षित स्थान पर वह पोशाक रखी गई है, जिसे पहनकर नेपोलियन गद्दी पर बैठा था। महात्मा ईसा को क्रूस पर चढ़ाकर जो लोहे की काँटियां ठोकी गई थीं, उसमें से एक काँटी भी यहाँ रखी गई है। और ईसा के सर पर जो काँटों का ताज रखा गया था, उसके भी कुछ टुकड़े

यहाँ रखे गये हैं। 'नोत्रदाँ' के आँगन में वह सुप्रसिद्ध स्थान 'पार्विस' है, जहाँ से कहा जाता है, फ्राँस की सभी सड़कें निकली हैं। काँसे का एक मील-पत्थर बनाकर वहाँ रख दिया गया है जो मील नंबर शून्य का सूचक है।

पेरिसवालों को अपनी एक और चीज़ पर घमंड है। वह है—लुक्ज़ेम्बुर्ग वाटिका। रंग-बिरंगी फूलों की क्यारियों और जहाँ-तहाँ स्थापित सुन्दर प्रतिमाओं के कारण यह वाटिका संसार की सबसे सुन्दर और मनोरम वाटिका कही जाती है।

पेरिस का नैश-विहार अभी नहीं। अभी उसका वर्णन देकर अपनी नींद हराम नहीं करूँगा। अब उसे कल की डायरी में।

पेरिस

२१–५–५१

पेरिस का नैश-बिहार ! कैसा तमाशा, जब सारी दुनिया सोती है, पेरिस जागती है। उस दिन ग्यारह बजे रात में पहुँच ही पाया था, लंदन खुराटे भर रहा है। यहाँ कल दो बजे रात को लौटा, तो यारों ने कहा, अजी अभी कहाँ चले; चार बजे भोर के पहले क्या नैश-बिहार को छोड़ कर जाया जाता है ? यों तो सुना, सात बजे भोर तक सैलानी लोग इसके मजे लूटते रहते हैं !

टौमस कुक ने इसके लिये टिकट का प्रबंध कर ही दिया था। रात में सबेरे खा पीकर होटल से उस स्थान पर पहुँचा जहाँ सैलानियों का डीपो है। वहाँ देखा, "हमीं एक मरीज़े मुहब्बत नहीं हैं !" सैलानियों का एक पूरा दल है, जिसमें अमेरिकनों की तादाद बड़ी है। कुछ परिचित सूरतें भी दिखाई दीं, जिन्होंने हमारे साथ ही दिन में पेरिस के दृश्य देखे थे। कुछ महिलाएँ भी थीं। अमेरिकनों के बारे में उस दिन एक अँगरेज ने बड़ी घृणा से कहा था—दे आर ओवरपेड, ओवर फेड ऐंड ओवर सेक्सड। ख़ूब पैसे, ख़ूब खाना और ख़ूब मौज। पेरिस में पैसे बहा रहे हैं, शराब बहा रहे हैं, मवाद बहा रहे हैं !

लेकिन होते हैं ये अमेरिकन बड़े फक्कड़ ! अँगरेजों की तरह चुप्पी साधे नहीं रहते ! तुरत घुलमिल जाते और फिर साथियों की तरह व्यवहार करने लगते—हँसते-हँसाते, कनखियाँ चलाते, गुनगुनाते और यदि आप चाहिये, तो मिलजुल कर नाच भी लें।

मस्तों की इस टोली को ले कर हम सबसे पहले एक मस्जिद में पहुँचे। पेरिस में मस्जिद। क्या आश्चर्य की बात नहीं ? और उसे नैश-



पेरिस का एक प्रमुख मार्ग

विहार का श्री गणेश स्थान क्यों बनाया गया। पता चला, इस मस्जिद का नया भवन मोरक्को के सुल्तान ने बनवाया था। मस्जिद में कुछ हब्शी-किस्म के लोग। हम लोग इधर-उधर घूमे। फिर एक सज्जन दिखाई पड़े, जिनका ध्यान मेरी ओर आकृष्ट हुआ। मैं शेरवानी पहने था। उन्होंने निकट आ कर पूछा—पाकिस्तान? मैंने कहा, नहीं इण्डिया। यह सज्जन बड़े मुल्ला साहब थे। मुल्ला साहब ने हमें काफी पिलाई। हमारे स्वागत सत्कार के पैसे कम्पनी ही खर्च कर रही थी हमसे जो फीस ली गई थी, उसमें सारे खर्च शामिल थे।

निस्सन्देह इस मस्जिद से ही रूमानी कैफियत तारी हुई। उसके बाद हम लोग छोटे-बड़े आधे दर्जन नैश-विहारों में गये। हर जगह नाच-गान का समाँ। बोतलें खुल रही हैं, प्यालियाँ उछल रही हैं। सिगरेट के धुयें से दम घुटा जा रहा है। लोगों की ठसाठस भीड़, चारो ओर दर्शकों की कत्तारें और बीच में नृत्य! नृत्य—रति-रानियाँ; अपने सारे अंगों का प्रदर्शन अनेक भावभंगिमा में कर रहीं!

तेवरिन—यह पेरिस के नैश-विहारों का एक प्रमुख स्थान है। भवन म घुसे नहीं कि आँखें चौंधिया गईं। नृत्य के रंगमंच से सटे टेबुलों की कत्तार पर कतारें। टेबुल के ऊपर बालटियाँ रखी हुईं। बालटियों में बर्फ के पानी में बोतलें रखी हुईं। हाँ कंठ में आग का घूँट ही डालना है, तो पहले उसे बुझा लो। किन्तु, यह बुझाने की क्रिया है या आग को और भड़काने की क्रिया। टेबुलों के चारो ओर देवियों और देवताओं का झुंड। उधर रंग-मंच पर सौन्दर्य का नग्न प्रदर्शन हो रहा है, इधर प्यालियों की छीना झपटी जारी है! लगभग एक दर्जन लड़कियाँ और उतने ही युवक—तरह-तरह के नृत्य का अवतरण कर रहे। नग्न वासना के प्रदर्शन में कहीं कोई कोर कसर नहीं! रंग-बिरंगी रोशनी और संगीत की नीची-ऊँची उठने और गिरने वाली ध्वनि वासना के समुद्र में जैसे ज्वार-भाटा ला देती। मैं सिर्फ रंग-मंच नहीं देख रहा; "हम देखने वालों की नज़र देख रहे

हैं !" वह 'देखने वाले' ही तो नहीं थे; "देखने वालियों" की संख्या दो में एक थी ही ! पेरिस में एक से किसी की तृप्ति नहीं होती शायद !

इन नैश-विहारों में लोग सिर्फ देखने ही नहीं जाते; वहाँ अपने मन के अरमान निकालने के भी मौके होते हैं। नाचने वाली लड़की हँसती-हँसती आती और किसी दर्शक के होठों को चूम जाती है ! देखिये, वह लड़की उस अध बयस अमेरिकन को चूम गई, उसके होठों पर लड़की के होठों की लाली किस तरह चमक रही है। उसके साथी तालियाँ पीट रहे हैं। वह रूमाल निकाल रहा है कि लड़की फिर आती है और उसे घसीट कर बीच में ले जाती और उससे लिपट कर नाचने लगती है। बुड्ढऊ भी मजा अनुभव कर रहे हैं—ताथेई ताथेई नाच रहे हैं। हँसी का हिल्लोल उठ रहा है और बगल का यह नौजवान रह-रह कर उठ खड़ा होता है कि यह सौभाग्य मुझे क्यों नहीं मिला !

और, यह समाँ देख कर हमारे साथ आये इस दम्पति का दिल भी कसमसा उठा। वे दोनों भी खड़े हुए और नाचने लगे। अरे ताक धिना-धिन ! कहिये, इस वातावरण को छोड़ कर कौन सोने का सोच सकता है ?

पेरिस कला की पुरी, कान्ति की पुरी, वासना की पुरी ! और, आज चलते चलाते हमें उस स्थान को भी देख ही लेना था, जहाँ इन तीनों का सम्मिलन हुआ था। मेरा मतलब है वारसाई के राजमहल से।

वस वही टामस कुक की बस। वे ही कुछ परिचित और कुछ अपरिचित चेहरे। रास्ते में पुरानी पेरिस की कुछ स्मृतियाँ। कभी यहीं बेस्टाइल था—कल्पना करते ही रोमांच हो आया। पेरिस से निकलने पर भी बंगलों और बगीचों की कतारें। और, जब वारसाई का राजमहल दीख पड़ा, पुराने इतिहास के कितने पन्ने मूर्त्तिमान हो कर आँखों के सामने झूमने लगे।

बेचारा लुई चौदहवाँ !—उसने सोचा होगा, चलो पेरिस के कोलाहलों से दूर, बहुत दूर एक रमणीक स्थान पर एक अति सुन्दर प्रासाद बना कर जिन्दगी के सभी साध्य-असाध्य सुख लूटें । और, उसकी फैशनेबुल और खूबसूरत रानी—जो उसकी वासनाओं की आग में सदा घी डालती रही और जो स्वयं एक अग्निकुंड बन गई जिसमें लुई को स्वाहा हो जाना पड़ा । प्रासाद के आंगन में वह लुई की मूर्त्ति है, जिसे फ्रांस के दो महान कलाकारों—पेतिती और कारतेलिये ने तैयार किया था ! इस मूर्त्ति ने वह दिन भी देखा होगा, जब पेरिस की जनता राजा-रानी को इस राज-भवन से निकाल कर पेरिस की ओर ले चली—बलि के बकरों की तरह ! इस मूर्त्ति के ठीक सामने वह बालकनी है, जिस पर खड़े होकर राजा-रानी ने उस उत्तेजित भीड़ को समझाने की कोशिश की थी । कहते हैं; भीड़ कुछ शान्त भी हो चली थी और वह लौटने जा रही थी; किन्तु, कुछ आगबबूलों के भड़काने पर वह फिर लौटी और राजा-रानी को बालकनी से घसीट कर नीचे लाई, उसे एक गाड़ी पर चढ़ाया और दोनों को पेरिस ले गई ! पेरिस उन दिनों भूखों मर रही थी; लोग रोटियों के बिना तड़प रहे थे; रानी को घसीटते हुए पेरिस ले जाते समय औरतें चिल्लाती थीं—हम रोटी पकानेवाली को लिये जा रहे हैं, अब पेरिस में रोटी की कमी नहीं रहेगी !

राजप्रासाद में पहुँचते ही वैभव-विलास की चकाचौंध से आँखें चौंधियाँ जाती हैं । चारो ओर सोना मखमल और रंगीनियों की भरमार है । हर घर की दीवारें और छतें बड़े-बड़े कलाकारों के चित्रों से सुसज्जित हैं । हमने वह कमरा देखा, जिसके बारे में कहा जाता है, यह संसार का सबसे सुन्दर कमरा है और उसके बाद वह हाल देखा जिसमें २८ जनवरी १९१९ को उस शान्ति-पत्र पर हस्ताक्षर हुए जो प्रथम विश्वयुद्ध की की समाप्ति का सूचक था ।

इन कमरों, हालों और बालकनियों के बीच घूमते हुए आदमी भाव-

नाओं में बह जाता है। मैं प्रायः ही बाहर आकर शून्य की ओर देखने लगता; लगता, जैसे जो कुछ हम देख रहे हैं, सभी शून्य मात्र है! वे कहाँ गये, जो इनके रचयिता थे, उपभोक्ता थे? हम कहाँ से यहाँ आ टपके और हम भी कहाँ चले जायेंगे और तो भी ईंट-पत्थर का ढेर मानवता पर मुस्कुराता ही रहेगा।

प्रासाद से नीचे आकर हम उससे लगे बगीचे को देखने गये। बगीचे और प्रासाद के बीच एक आंगन है जहाँ कई हौज हैं। एक हौज में बहुत-से फव्वारे लगे हैं। कहा गया, ये फव्वारे फ्रांस की प्रसिद्ध नदियों का प्रतिनिधित्व करते हैं, जितनी नदियाँ, उतने फव्वारे! कन्कड में नगरों का प्रतिनिधित्व देखा था, यहाँ नदियों का प्रतिनिधित्व देख रहा हूँ! ये फ्रांसीसी—इनकी कल्पनाशक्ति कितनी उर्वर है!

आज ही पेरिस छोड़ देना था; इसीलिये कुछ सौदे-सुलफे भी कर लेने थे। हमें पहले से ही कह दिया गया था कि पेरिस ठगहारों का शहर है—यहाँ अपरिचितों को मूँड़ने में कोई कोर कसर नहीं की जाती! दाम वैसे ही किये जाते हैं, जैसे अपने यहाँ काबुली करते हैं। अतः सावधानी रखनी थी। गोयराला को पकड़ा और उन्होंने ही सौदे करा दिये। मैंने जित्तिन के लिए कुछ टाइयाँ, प्रभा के लिए मोती की एक माला, बच्चों के लिए रेशमी कपड़े और देवेन्द्र के लिए रूमाल और सेंट खरीदे? दुलहिन के लिए स्वीटज़रलैंड में ही घड़ी खरीद चुका था।

गाड़ी रात में जानेवाली थी। सोचा, दिन में 'कन्कड' और 'स्वर्ग-पथ' का मजा ले चुका हूँ, चलते-चलते संध्या के समय का मज़ा भी लूट लूँ। किन्तु दोपहर के बाद अजीब टप-टप होने लगी और जब उसकी अवहेलना करके कन्कड पहुँचा, तब तो खुल कर वर्षा होने लगी। एक बरामदे में खड़ा होकर अपलक नेत्रों से उन मूर्त्तियों को देखने लगा जिन्होंने दो शताब्दियों से कितने ही अजीबोग़रीब दृश्य देखे होंगे। जब उस स्थान की ओर ध्यान जाता, जहाँ राजा-रानी की गर्दनें गिलोटिन से

काटी गई थीं, तो लगता, अभी-अभी वहाँ से एक चीख़ निकली है और वर्षा के पानी की जगह वहाँ ख़ून की एक पतली धार बह रही है ! ऐसी कल्पना क्या अधिक देर तक बर्दाश्त की जा सकती थी ? भींगते हुए हम 'स्वर्ग-पथ' की ओर चले। रंग-बिरंगी रोशनियों से जगमग वह विशाल पथ, उसके बग़ल के पेड़, फूलों की कुंजें और शरीर को स्पर्श करते हुए निकल जानेवाले घांवरों की सुगन्ध—रिमझिम के रूमानी वातावरण में जैसे पंख लग गये हों। शैलानियों के लिए तो यह स्थान संध्या को सच-मुच स्वर्ग बन जाता है !

फिर, पैवालिन होटल, बिल चुकाया, कुछ तस्वीरें ख़रीदीं, स्टेशन आये और अब वापस जा रहा हूँ—अपने घोंसले की ओर !

८ : घोंसले की ओर

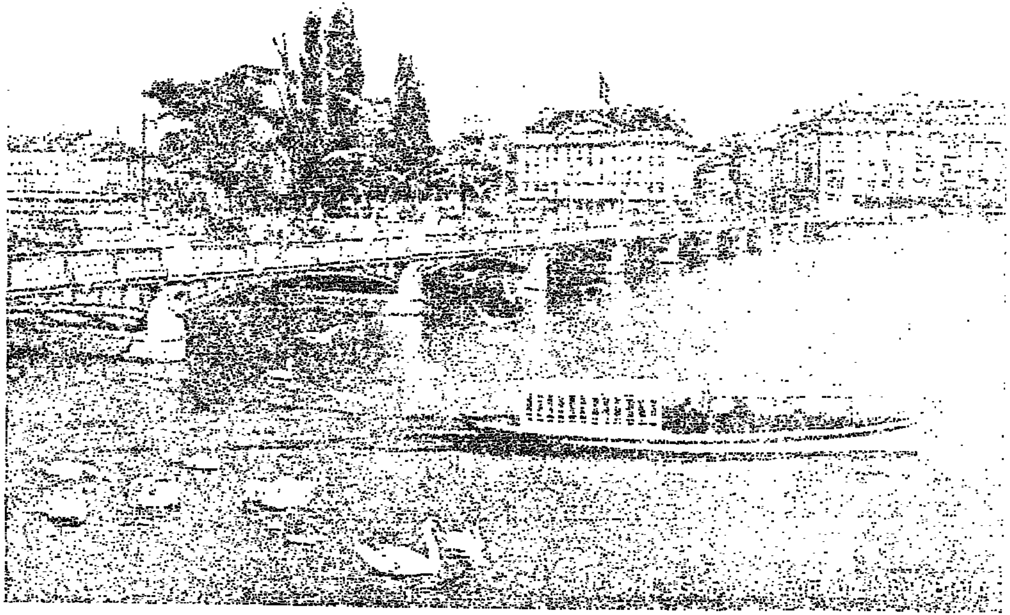
१-६-५१

जेनेवा-लूज़ॉन

भोर-भोर तुम्हें देखने के बाद क्या अब कुछ देखना रह गया जेनेव ! इंगलैंड में पुरुष का पराक्रम देखा; फ्रांस में कला की कोमल भावनायें साकार हुई, लेकिन स्वीज़रलैंड—तुम तो प्रकृति की वह सुन्दर गोद हो जहाँ पहुँच कर बूढ़ा मानव फिर एक बार बच्चा हो जाता है ! और जेनेव—स्वीज़रलैंड की शृंगार भूमि ! प्रातः काल की सुनहली धूप में, झील के किनारे खड़ा होकर जब तुम्हारी ओर देखा, लगा, अभी-अभी कोई सद्यस्नाता सुन्दरी इस झील से नहा कर किनारे पर खड़ी, आईना लिए, बालों में कंघी कर रही और सारे वातावरण में एक खुसबू बिखरा रही है ! जेनेव–सुन्दरी, तुम्हारा रंगीन आँचल उड़ रहा है, मैं अतृप्त नेत्रों से देख रहा हूँ ।

जब भोर में स्टेशन से उतरा, पाया एक झंझट में अनायास ही फँस गया हूँ । स्वीज़रलैंड में पन्द्रह दिनों तक रहने का विसा तो बनवा लिया था, किन्तु उसके अन्दर ही फ्रांस चला गया और अब पुराने विसा के बल पर फिर यहाँ उतर गया हूँ । नियमानुसार इसमें गलती हो गई थी, फिर आने के लिए नया विसा चाहिये था । पर अफसर से हमने खुल कर सारी बातें कह दीं, अपनी गैर जानकारी की दुहाई दी और बताया कि हमें तो सिर्फ एक दिन रहना है, रात में ही हमें ज़ूरिक से हवाई जहाज पर रवाना हो जाना है, तो उसने इजाज़त दे दी ।

स्टेशन पर ही शौचादि से निवृत्त हो लिया—बस, पैसे चाहिये, गर्म पानी है; बाथरूम है, साबुन है, तौलिया है, बालों में लगाने का क्रीम है ! फिर स्टेशन पर ही सारे सामान रख कर शहर की ओर निकला ।



जिनेवा की एक झलक

सूत्र वही टामस कुक का—उसी ने टैक्सी ठीक कर दी; हम जेनेवा देख कर लूज़ान जाने की तैयारी में हैं।

हाँ, तो जेनेव—स्वीज़रलैंड की शृंगार भूमि। पृष्ठभूमि में वह माउन्ट ब्लैंक—आल्प्स अपनी सारी गरिमा के साथ यहाँ मूर्तिमान खड़ा है। उजली जटाजूट; धूसर पृथुल शरीर। भोर की किरणें उसकी बरफीली चोटियों को अब भी जहाँ-तहाँ रंगीन बना रहीं। और, जैसे उस रंगीनी को मिटा देने के लिए बादल के धुएँ—कालिमा की सेना—धावे पर धावे बोल रहे हैं।

ऊपर ही मत देखा कीजिये, ज़रा नजरें नीचे आवें! यह झील, अरे झील, झील, झील। जिधर देखिये, उधर ही झील। कितनी बड़ी झील है यह। पानी, कैसा साफ, नीला और उस पर तरंगें! और ये तरंगें क्या उस टापू को डुबोना चाहती हैं जो अपने मध्य में उस महापुरुष की हड्डियाँ अब भी छुपाये है जिसके विचारों ने एक समय इस तरंगों से भी अधिक सारे यूरप को झकझोर दिया था! यह टापू रूसो-टापू कहलाता है, और यहीं से वह पेड़ों की जो सुरम्य कुंजें दिखाई पड़ती हैं न, उसीके अन्दर सुप्रसिद्ध कलाकार प्रादिये की बनाई रूसो की वह प्रतिमा है जिसके दर्शन करने को दर्शकों के झुंड जमा हुआ करते हैं! रूसो को नमस्कार, इस बड़भागी टापू को नमस्कार!

इस मनोरम झील की तीन ओर बस्तियाँ। ऐसी साफ, ऐसी सुन्दर कि लगे, अभी इस झील से यह पुरी ऊपर उठी है। पहाड़ी पर नीचे से ऊपर तक क्रमबद्ध बनी अट्टालिकायें—मानो, अट्टालिकाओं के कंगूरों से नई अट्टालिकायें फूट निकली हों। प्रकृति सुन्दर है, तो पुरुष उसे सजा क्यों न दे? ये ऊँचे, उजले, चमकते, शानदार घर, जिनपर, जहाँ-तहाँ रंग-बिरंगी पताकायें लहरा रहीं? क्या कोई उत्सव का दिन है। जेनेवा में उत्सव का क्या पूछना? अब तो यह अन्तर्राष्ट्रीय तीर्थ हो चला है न? प्रायः ही विश्व-सम्मेलनों की यहाँ धूम रहती है? शायद वैसा ही कोई

सम्मेलन हो रहा होगा? रोज का पुल—झंडों-पताकाओं से सजा यह तो पूरा दुलहा बन रहा है इस समय। और इन रंगीन पताकाओं की झील में पड़नेवाली परिछाइयाँ! ऊपर रंगीनी, नीचे रंगीनी। इन रंगीनियों के बीच वे जुड़े हुए हंसों की पाँतें! हाँ, पानी इतना साफ है कि हंस की परिछाईं ऐसी लगती है मानो उसके कलेजे से सटी उसकी अर्द्धांगिनी उसके नीचे तैर रही हो! कैसी अद्भुत, अनुपम!

हमारी टैक्सी झील के किनारे-किनारे की सड़क पर घूम रही है। थोड़ी दूर जाने पर ड्राइवर ने टैक्सी को एक बगीचे में मोड़ दिया। कैसा सुन्दर बगीचा! हरे-हरे पेड़, एक की डाल दूसरे की डाल का आलिंगन कर रही। नीचे कहीं ज़मीन भी आप नहीं देख पायेंगे, या तो हरी-हरी डालियाँ, या हरी-हरी घास या रंग-बिरंगे फूल। और बगीचे के बीच गुलाब की ये क्यारियाँ—कलिकाओं से लदीं। अभी ये कितनी खूबसूरत लग रही हैं फिर जिस समय ये खिल पड़ेंगी? क्यारियों के मध्य में एक छोटा-सा हौज जिसके बीच में फव्वारे से बूँदें झड़ रही हैं। पानी में रंगीन मछलियाँ तैर रही हैं। दर्पणोपम जल जहाँ-तहाँ छोटे गोल-गोल पुरइन के पत्ते-से। क्या ये पुरइन के पत्ते हैं? आकार-प्रकार तो वही। उधर वह संगमरमर की मूर्ति—कोई युवती, जिसकी आँखें तो इन दृश्यों से टँकीं, किन्तु जिसका मन कहीं अन्यत्र टँगा है। मूर्ति अत्यन्त सुन्दर है, किन्तु इस वातावरण में ऐसी उदास भावभंगिमा क्यों? और वह काँसे की मूर्ति—एक बच्चा फूले गाल से वंशी बजा रहा! ओ काँसे के साँवरे बच्चे, तुम वंशी बजाते रहो और ओ संगमरमर की देवी, तुम उदास देखती रहो! तुम्हारे स्रष्टा को यही पसंद था, तो तुम्हारे लिए दूसरा चारा क्या है?

शहर की भी एक झलक ले ली जाय। पहाड़ी स्थान, नीची-ऊँची सड़कें। गिरजाघर, विश्वविद्यालय, ओपेरा-घर, म्यूज़ियम, पुस्तकालय, टाउनहाल, समाधियाँ—जिनमें कालविन की समाधि को कैसे भुलाया जा

सके ? जेनेवा का कैथेड्रल बहुत पुराना है, बारहवीं सदी का ! जेनेवा का म्यूजियम भी बहुत प्रसिद्ध है और जब रूसी गिरजाघर के निकट पहुँचा, सोने के कँगूरोंवाली उस खूबसूरत छोटी-सी इमारत को छोड़ने की इच्छा नहीं होती थी !

किन्तु समय कम, देखना बहुत। फिर घूम कर झील के किनारे आये और उस भाग को देखने चले, जो प्रथम विश्वयुद्ध के समय से ही अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति का केन्द्र बन गया है। देखिये, दूर से ही उस विशाल अट्टालिका पर किसका नाम चमक रहा है ?—उडरो विल्सन। उडरो विल्सन, दार्शनिक राजनीतिज्ञ ! किन्तु क्या राजनीतिज्ञों ने उस दार्शनिक के स्वप्न को साकार होने दिया ? पर इसमें शक नहीं कि अपनी शान्ति की कोशिशों के लिए जेनेवा ऐसे शान्त-सुन्दर स्थान को चुन कर उसने बड़ी सूझ-बूझ का परिचय दिया था। पहले राष्ट्रसंघ; अब संयुक्त राष्ट्र—बोतल बदल गई है, शराब वही है। झील के किनारे हरी-भरी झाड़ियों के बीच उसका शानदार भवन। भवन के भीतर घुसने का न साधन है, न समय। मोटरों का ताँता उसके दरवाज़े पर लगा है, निश्चय ही किसी अन्तर्राष्ट्रीय प्रश्न पर विचार हो रहा है वहाँ ?

भवनों को देखते-देखते तो आँखें चकरा गई हैं, चलो उस कुंज में। वह कोई पिता अपने बच्चे को झूला झुला रहा है ; बच्चा कितना स्वस्थ, प्रसन्न ! काश, अपने देश में ऐसे बच्चे दिखाई पड़ते ! शरीर में धूल, आँखों में कीचड़, बालों में जूएँ—अपने देश के वे बच्चे और ये साफ सुथरे, स्वस्थ-सुन्दर बच्चे ! किन्तु, कहाँ-कहाँ, किस-किस बात पर आँसू गिराये जायँ। देखिये, उस कुंज में वह एक जोड़ी—चलें, हम ज़रा उनसे कुछ पूछें तो ? आप कहाँ से ? मैं मास्को से आता हूँ। हमने सर से पैर तक अच्छी तरह देखा, उन्हें और उनकी पत्नी को भी, क्योंकि ज़िन्दगी में यह पहली बार किसी रूसी के सम्मुख खड़ा होने का मौका मिला था ! दो-चार बातें—फिर वे झील की तरंगें गिनने लगे, हम स्टेशन की

ओर भागे ! यहाँ कोई खुल कर बातें नहीं करता—हृदय खुला रहे, तब तो !

फिर झील के किनारे-किनारे जा रहा हूँ। ये रेस्तोराँ—रंगीन छत-रियों के नीचे रंगीन पोशाकें—झकझक, झलमल ! यह, यह तो साड़ी मालूम पड़ती है। हाँ, साड़ी ही तो है, और यह भारतीय सज्जन ? मैं हूँ डाक्टर मित्रा ! "और मेरा नैहर पटना ही है, बसंतबसु को आप जानते ही होंगे। आप उन्हें मेरा नमस्कार कह दीजियेगा !" दोनों को नमस्कार कर हम जेनेवा को भी नमस्कार कर रहे हैं—गाड़ी खुल चुकी है ! लूज़ान के लिए !

अब लूज़ान-झील पर हूँ। सामने झील लहरा रही है। जिनेवा से ही यह झील शुरू होती है और इसमें अगिनबोटें भी चलती हैं। अभी-अभी एक अगिनबोट सामने की उस पहाड़ी की तरफ गई है। पकड़ने की इच्छा थी, ज़रा झील की सैर कर लूँ—किन्तु जब तक घाट पर पहुँचूँ, वह खुल गई और धुआँ उड़ाती उस पहाड़ी की ओर जा रही है जिसकी चोटी पर धुआँ-धुआँ सा उड़ रहा है !

तो सामने झील लहरा रही है—हाँ, लहरा रही है, देखिये न सामने लहर ही लहर तो है। और उन लहरों को चीरती हुई वह अगिन बोट तो दूर निकल गई है; किन्तु आस-पास कितनी नावें दौड़ रही हैं। रंग-बिरंगे गंदोले, मानो चिड़ियाँ रंगीन पंखों को फैलाये लहरों पर चक्कर काट रहीं। झील के उस पार पहाड़ियाँ। पहाड़ियों पर बर्फ की धारियाँ—मानो शिव-शंकर धारीवाल की धारीदार कम्बल ओढ़ कर बैठे हों। चोटियों के ऊपर बादल उड़ रहे; कभी चोटियों को ढँक देते। कभी चमका देते। पहाड़ियों की कई पातें—मानों, स्वर्ग की सीढ़ियाँ हों। तलेटियों में हरे-भरे वृक्ष—नीली साड़ी में हरी किनारी।

कितनी बड़ी झील है यह। दाहिने-बायें, जहाँ तक नज़र जाती है, झील ही झील।

झील के इस किनारे को कितना सुन्दर बना रखा गया है। कहीं एक तिनका भी बे ठिकाने दिखाई पड़ता है ! पेड़ों की कुंज बना दी गई है। रंग-बिरंगे फूल लगा दिये गये हैं। कुंजों में बेंचें रख दी गई हैं। देखिये, उस बेन्च पर एक जोड़ी किस तरह सट कर बैठी है ! जैसे पंडुक के जोड़े हों, इस तरह सटे जा रहे हैं मानो एक-दूसरे में समा जाना चाहते हों। और वह बेचारी—अकेली ही कुछ लिखे जा रही है। क्या लिख रही है—कोई कविता, कोई प्रेम-पत्र ! हाँ, प्रेम-पत्र लिखने का इससे बढ़ कर कौन-सा समय और स्थान हो सकता है ! और वह नौजवान—लकड़ी का फ्रेम खड़ा कर कन्वास पर कूची चलाये जा रहा है ! चलिये, निकट से देखें, कौन-सा चित्र बना रहा है यह ? वह दम्पती आ गई है या यह युवती ! नहीं, यह लैंडस्केप है—पेड़ हैं, झील है, सामने की पहाड़ी है ! अरे भाई, बग़ल में कहीं इस प्रेमिका को भी साकार कर दो न !

वह एक बुढ़िया-दादी आई ! सिर हिल रही है, किन्तु पैरों में कैसी चपलता ? और, आँखों की चमक भी नहीं गई है। इधर-उधर देखती हैं, बेंच पर बैठ जाती हैं, हाथ में ऊन और काँटे, होंठों पर बुदबुदाहट और आँखें रह-रह कर उसे दूर की पहाड़ी पर ! और, वह एक युवती और आ रही है—आगे-आगे बच्चे की गाड़ी है। जैसी युवती, वैसा बच्चा, वैसी गाड़ी ! हाथ गाड़ी को ठेल रहे हैं, आँखें जैसे दुनिया को ठेलना चाहती हैं—हटो तुम; अब मैं हूँ और मेरा यह बच्चा ! रह-रह कर बच्चे की ओर देखती है, बच्चा विहँस पड़ता है, हाथ उछालने लगता है !

पेड़ों पर चिड़ियें चहक रही हैं—बीच-बीच में, लगता है, कोई सीटी बजा रहा हो ! झोंका गुनगुना रहे हैं। हाँ, इस वातावरण में पत्थर से भी पयस्विनी फूट सकती है !

लो, यह धूप आई ! अब ज़रा झील की ओर देखिये। हर लहर जैसे बिजली के तरंग बन गई—वे चमक रही हैं, उछल रही हैं, उफ़, रंगों का कैसा चाकचिक्य ! और उस पहाड़ी को देखिये—भोला बाबा

जैसे अचानक मुस्कुरा पड़े, अरे, अब तो वह अट्टहास कर रहे हैं। इधर, बहुत देर से, फ्रेम पर कन्वास चढ़ाये, हाथों में कूचियाँ लिये जो दर्जनों भावुक चित्रकार किनारे पर खड़े थे, उनमें सनसनी-सी फैल गई। आँखें इस अलौकिक दृश्य पर और हाथ की कूचियाँ कन्वास पर ताबड़तोड़ दौड़ रही हैं! इनमें कुछ युवतियाँ भी हैं—उनका गुलाबी चेहरा एक उत्तेजना से जवाकुसुम बन रहा है!

यह लूज़ान है! प्रकृति का सौन्दर्य देखा, तो थोड़ा मानव सौन्दर्य का भी निकट से निरीक्षण कर लो।

बेलेरिव—स्नान-तट! इस झील के ही किनारे, यहाँ से कुछ दूर पर। ऊँचा चौतरा—पौदों और फूलों से हरा भरा, रंगीन। चौतरे पर ही आफिस; टिकट लीजिये और नीचे जाइये! हर चीज़ का दाम—दाम दीजिये, फिर सबके लिए सब स्थान पर प्रवेश सुलभ। नीचे सामने नीली झील की झिलमिल तरंगें तट से अठखेलियाँ कर रहीं और उन तरंगों से अठखेलियाँ कर रहीं मानव-पुष्प की सुकुमार कलियाँ। किन्तु, इन्हें आप सुकुमार कहेंगे? हम ओवरकोट पहन कर भी काँप रहे हैं और ये खुले बदन इन तरंगों से लड़ रही हैं। युवतियाँ हैं, युवक हैं। युवक और युवतियों के बीच हमारे देश की तरह यहाँ ऊँची दीवारें नहीं हैं—गंगा-किनारे भी ज़नाना-घाट अलग; मर्दाना घाट अलग! युवतियाँ और युवक एक साथ नहा रहे हैं, तैर रहे हैं, उछल रहे हैं, कूद रहे हैं। कहीं-कहीं आँखमिचौनियाँ भी हो रही हैं; वह लड़की भागी जा रही है, वह युवक उसे खदेड़ रहा है, लड़की पानी में कूदी, नौजवान भी कूदा, ग़ोते पर ग़ोते; फिर एक दूसरे से लिपटे, हँसते-खिलखिलाते बाहर आये।

तट की रेत पर यहाँ-वहाँ गुलाब खिल रहे। ये अधनंगी लड़कियाँ—सिर्फ कमर और छाती के कुछ हिस्से पर झीने वस्त्र। झीने वस्त्र, जो ढँकते नहीं और उभारते हैं! कितना सुडौल शरीर है इनका—अंग-अंग कसे, कसे अंगों में जैसे जवानी कुसमसा रही हो। पानी से भिगो कर अब धूप

में सुखा रही हैं—जवानी पर की तलवार पर पानी चढ़ा रही हैं ! सुनहले बाल बिखरे हैं। गोल-गोल बाहें, पुष्ट-पुष्ट जांघें। लगता है, मोम की पुतलियाँ ढाल कर सूखने को रख दी गई हों ! उफ़, मनु की संतति कितनी सुन्दर होती है !

२-६-५१
ज़्यूरिख़—कराची

थोड़ी देर हड़-हड़; दो-चार धचके; फिर वही उड़ान। बी० ओ० ए० सी का हवाई जहाज। सारी बातें पुरानी—फर्क सिर्फ यह कि आया था अरमान लेकर, लौट रहा हूँ एक अजीब उदासी लेकर।

एक तो, इतना कम समय रहा कि मन-भर देख नहीं सका। पूरी यात्रा पैरों में पंख बाँधकर हुई। यूरोप के कुछ देशों को नहीं देखने का मलाल तो रह ही गया। आचार्य नरेन्द्रदेव जी ने कहा था, यूगोस्लाविया अवश्य देख लीजियेगा। वह भी नहीं हो सका। सोचा था, एक-दो दिन रोम में ठहर कर देख लूँगा उसे, वह भी नहीं हो पाया। हवाई जहाज का ऐसा सिलसिला हुआ कि यदि इस हवाई जहाज को छोड़ता, तो चार दिनों की प्रतीक्षा करनी पड़ती!

कल लूज़ान से ज़्यूरिख़ पहुँचा।

रास्ते में झील के किनारे अँगूरों की कुंजें। यहीं के लाल अंगूरों से फ्रांस की लाल शराब बनती है। गाड़ी में एक सज्जन मिले, जो स्वीज़रलैंड के अर्थ-विभाग में काम करते हैं। उन्हीं से पता चला, स्वीज़रलैंड के लोग अपने देश को स्वीज़रलैंड नहीं कहते—वहाँ की तीन भाषाओं में तीन नाम—स्विस, स्विट्ज और स्वीज़। स्वीट्ज़लैंड नाम तो अंगरेजों ने दिया है। ज़्यूरिख़ पहचाना-सा शहर लगा। बी० ओ० ए० सी० के आफिस में गया। बड़ी शिष्टता का व्यवहार। सामानों को लेकर झंझट मालूम होती थी। जब लंदन से चलने लगा, हमारा सामान कुछ अधिक था। अतः उसका अतिरिक्त भाड़ा देना पड़ा। बड़ा महँगा पड़ा। इसलिए मैंने कुछ चीजें बर्न से ही पार्सल करके भेज दी थीं। ओझा ने तो बहुत-सी चीजें फेंक दी थीं।

किन्तु, यहाँ पता चला, सामान कम ही है। ओझा को अफसोस हुआ, मैंने इत्मीनान की सांस ली।

ज़ूरिख से रोम। रोम सोया हुआ था, बत्तियाँ बुझा के। हमारी आँखों में भी खुमार। दो नींद के माते की भेंट हुई। अन्तर्गत में आकांक्षा की—तुम्हें देख नहीं सका। आँखों की झपकियाँ कह रही थीं—छोड़ो मोह ममता, सोओ।

सोये ही सोये भूमध्य सागर पार कर लिया। एकाध बार नींद टूटी, तो नीचे देखा। सब शून्य। न वे सुन्दर टापू, न बादलों के दल, न सागर का जल और तरंगें! साँय-साँय करता हुआ हमारा हवाई रथ बढ़ा जा रहा है।

भोर में हम काहिरा पहुँचे। एक घटना हो गई। हमारे साथ नार्वे के एक सज्जन आ रहे थे जो संयुक्तराष्ट्र की स्वास्थ्य-संस्था में हैं। आप पाकिस्तान जा रहे थे। जब मैं हवाई जहाज़ पर बैठा-बैठा कुछ लिख रहा था, देखा, मेरे सामने के एक सज्जन भी मेरी ही तरह कुछ लिखे जा रहे हैं। हवाई जहाज पर लिखने में बड़ा मजा आता है। हम दोनों लिखक्कड़ों में आँखें-आँखें कुछ बातें हुईं और हम मित्र-से बन गये। पता चला, यह सज्जन अपनी बीबी के लिए यात्रा-वर्णन लिखते जा रहे हैं और जहाँ जहाज ठहरता है, वहाँ से ही डाक से भेज देते हैं। व्यवस्था तो कोई बुरी नहीं। बेचारे की नई शादी हुई है—कोई सूत्र तो बनाये रखना ही चाहिये।

काहिरा के रूमानी वातावरण में आपको फोटो लेने की सूझी। वह नहीं जानते थे, हवाई अड्डों पर फोटो लेना मना है। नतीजा यह हुआ कि आपका कैमरा ही जब्त कर लिया गया और कहा गया, करांची में ही वह उन्हें लौटाया जा सकेगा।

काहिरा से हमारा नया रास्ता हुआ—बेहरिंग से नहीं, हम बसरा होकर करांची जायँगे। अच्छा ही लगा, नये देश देखेंगे। किन्तु यह क्या? काहिरा से बसरा तक सिवा बालुका-राशि के क्या कुछ देखने की

चीज़ है ? आकाश भी शून्य-शून्य—बालू की गरमी जैसे बादलों को भी चाट गई हो। हाँ, काहिरा से थोड़ी दूर आगे बढ़ने पर रेगिस्तान में एक लकीर सी दिखाई पड़ने लगी; लोगों ने बताया यही स्वेज नहर है ! भूनी हुई बालुका-राशि में हरे जल का यह सोता—और ज़रा ध्यान से देखिये, इस जल की नीली लकीर में कागज की नावें-सी तैरती नज़र आती हैं। ये जहाज़ हैं। थोड़ी-थोड़ी दूर पर कई दिखाई पड़ते हैं।

स्वेज़-नहर ! मनुष्य के पराक्रम का ही एक कीर्त्ति-स्तम्भ नहीं, मनुष्य की लालसा-पिपासा का भी एक स्मृति-चिन्ह ! जो जहाज इसमें आते-जाते रहे हैं, उनके द्वारा एशिया का कितना धन यूरोप गया ! यूरोप में जो विभव देख आया हूँ, उसका स्रोत क्या यह स्वेज भी नहीं रहा है ? मनमें गुस्सा हुआ ! किन्तु जो स्वेज ऐसा नहर खोद सके क्या उसे यह अधिकार नहीं मिल जाता है सब कुछ करने के लिए। हम चिल्लाया करें, किन्तु उनकी लूट-खसोट तब तक नहीं रोक सकेंगे, जब तक वही पराक्रम हममें नहीं आ जाय ! हममें पौरुष जगा है, दस्यु भागते जा रहे हैं। एशिया जग रहा है यह नहर भी शोषण का नहीं, पारस्परिक आदान-प्रदान का जरिया बन कर रहेगी !

शाम होते-होते हम बसरा पहुँचे। चारों ओर बालू-बालू देखते आँखें पथरा-सी गई थीं। अतः जब वहाँ के हवाई अड्डे पर एक सुन्दर बगीचा पाया, तो आँखों को बहुत तृप्ति मिली। बगीचे के सहन में ही हम बैठे। हरी दूब पर छतरियाँ लगीं—बिजली के पंखे हवा कर रहे। बाहर अब भी हवा की जगह लू चल रही और यहाँ यह शीतल-मंद (और सुगंध भी) बयार। मानव क्या नहीं कर सकता ?

बसरा से जब चले, जब तक देख सकते थे, बालू-ही-बालू दिखाई पड़ा।

यह कराँची। जब हम हवाई जहाज से उतर कर हवाई अड्डे पर गये, देखा, जिन्ना टोपियों की भरमार है। क्या कोई खास बात है ? हाँ, खास

बात। दो तीन सज्जन उनमें ऐसे थे, जिनका रूप-रंग मंगोलियन काट का। पता चला, वे लोग चीन से आये हैं—मुसलमान हैं। चीन की सरकार ने उन्हें भेजा है पाकिस्तान के मुसलमानों में भाई-चारा स्थापित करने को। एक बार च्यांगकाइशेक भारत आये थे, भारत से दोस्ती कायम करने को। पंडित नेहरू और मैडम च्यांगकाइशेक को लेकर तरह-तरह की बातें सुनी गईं। १९४२ के बाद जब गाँधी जी जेल में गये, च्यांगकाइशेक ने मित्र राष्ट्रों से इस पर अपना विरोध भी प्रगट किया था। अब भारत स्वतंत्र है, च्यांगकाइशेक का सितारा डूब चुका है! चीन में नई सरकार है। वह नई सरकार संसार-भर से दोस्ती करने के प्रयत्न में है। भारत उसका दोस्त बन चुका है। पाकिस्तानसे भी वह अपनी दोस्ती क्यों न बढ़ाये। और, उस दोस्ती के लिए मुसलमान प्रतिनिधियों को भेजना क्या उचित नहीं था? पाकिस्तान भारत की तरह अपने को धर्म-निरपेक्ष राज्य तो नहीं मानता। अतः उससे दोस्ती के लिए उसी के धर्म के प्रतिनिधियों को भेजना मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अवश्य ही सूझ-बूझ की बात है!

३-४ जून, ५१
दिल्ली

३ । ६; भोर हो चुकी है । नीचे फिर रेगिस्तान ही रेगिस्तान । उफ़, मिश्र से लेकर राजस्थान तक की भूमि पर यह कैसा दैवी अभिशाप ! यह विशाल भूक्षेत्र क्या सदा ऐसा ही रहा है ? क्या यह सदा ऐसा ही रहेगा ? विज्ञान क्या संहार ही करता रहेगा ? जिस दिन यह विस्तृत भूभाग हरा-भरा बन जायगा, मानवता की सबसे बड़ी विजय वह होगी !

अब जहाँ-तहाँ हरियाली और हरियाली के बीच-बीच में बस्तियाँ । भारत की वे ही उजड़ी, उबड़ी, दरिद्र बस्तियाँ ! फूस, खपड़ैल-चींटी से रेंगते हुए पशु और नंग-धड़ंग मानव संतान !

पाँच-छः सप्ताह तक जो देखा, वह सपना था न ? मातृभूमि, तू कितनी प्यारी लगती है ? तेरे लिए क्या-क्या कष्ट न उठाये ? बार-बार जेल; जेल जीवन के वे दिन । किन्तु, हम तो तब भी जीवित हैं—तुझे स्वतंत्र देख रहे हैं । किन्तु जो तुझपर बलिदान हो गये ? उनके सामने हमारा बलिदान कितना तुच्छ ? इतने सारे बलिदान किस लिए ? तेरे किस सौन्दर्य ने हमें मोहित किया, अभिभूत किया ? तेरा रूखा-सूखा अंचल, तेरी सिकुड़ी-सहमी सन्तान ! यह अंचल अब हरीतिमा से, रंगीनी से चमक उठेगा ? तेरे बेटे, तेरी बेटियाँ कब सौन्दर्य और शौर्य से मंडित होंगे ?

वह अब कुछ पक्के मकान झलकने लगे और देखिये, वह है हमारा राष्ट्रीय हवाई अड्डा—पलाम ! सलाम ओ हमारी राजधानी दिल्ली !

हवाई अड्डे पर चीजों की जाँच । उपहार के लिए कुछ चीज़ें लाये, उसपर भी टैक्स । ओझा कुड़बुड़ा रहे हैं; बात भी ऐसी है । हम कोई

व्यापारी तो हैं नहीं? और, जो व्यापारी हैं, वे उनकी आँखों में धूल झोंकते ही हैं। शराफत इस देश में पाप है न? लंदन में सिर्फ इतना पूछा गया कि व्यापार के लिए कोई चीज़ तो नहीं? और हमने ना कहा, तो उन्होंने उसे तुरत स्वीकार कर लिया। बक्सों का ताला हमने खोल रखा था, ढक्कन उठाकर सिर्फ झांकलिया, बस! यहाँ तो एक-एक चीजें उधेड़ी जा रही हैं, यह जानते हुए भी कि हम कौन हैं, क्यों गये थे। भारत को अपने नागरिकों पर भी विश्वास नहीं। सब बेईमान हैं, चोर हैं, यहीं से हमारा पारस्परिक व्यवहार शुरू होता है न?

पलाम से दिल्ली शहर की ओर—बी० ओ० ए० सी० का दिल्ली आफिस। वहाँ से टैक्सी करके हम वेस्टर्न कोर्ट की ओर बढ़े। किन्तु, अरे, यहाँ तो रास्ता ही रुका हुआ है। बात क्या है? अपने शहर के श्री नारायण महथा जी दिखाई पड़े। उन्होंने बताया, सोशलिस्ट पार्टी का एक जुलूस निकल रहा है। जुलूस बहुत बड़ा है—गाँधीजी की मृत्यु के बाद दिल्ली में इतना बड़ा जुलूस नहीं देखा गया। सवारियों के लिए रास्ता बंद है। किन्तु चिन्ता की बात नहीं, इसी कोठी में श्यामनन्दन मिश्र रहते हैं? टैक्सी को वहीं से विदा किया; सामान श्यामनन्दन के घर पर रख दिया और बड़ी देर तक जुलूस देखता रहा। जुलूस इतना बड़ा कि लगभग एक घंटे तक उसकी कतार नहीं टूटी!

स्नान, भोजन, यहीं पर। तब वेस्टर्न कोर्ट। अवधेश्वर मिले, मथुरा मिले। जाते समय मथुरा नहीं थे; उस बार उसकी कसर पूरी की। जब तक दिल्ली नहीं छोड़ी प्रायः साथ ही लगे रहे। यह जुलूस किसान-मार्च का था। शाम को सभा होने वाली थी। जयप्रकाश जी यहीं हैं, उन्हें फोन किया। उनसे मिलने गये और उनके साथ ही शाम को सभा में पहुँचे। सभा में बिहार के काफी साथियों को पाया। बड़ी प्रसन्नता हुई यह अनुभव कि किस अच्छे मौके पर यहाँ पहुँच गया हूँ। तय हुआ, कल बिहार के साथियों के ही साथ पटना जाऊँगा!

४, ६; शाम की गाड़ी से चल देना है और इतने लोगों से मिलना है। क्या यह सम्भव है! लेकिन श्रद्धेय राजेन्द्र बाबू से बिना मिले कैसे जा सकूँगा? भाई चक्रधर को फोन किया, शाम को ४–५.५ पर बुलाहट हुई है।

दिन भर इधर-उधर दौड़ता रहा। ब्रिटिश इन्फोरमेशन ऑफिस में जाकर उन लोगों से भेंट की। बड़ी ही शिष्टता से मिले, यात्रा का हाल-चाल पूछा, पटना तक जाने का राह खर्च आदि दिये। कल के जुलूस का बड़ा प्रभाव देखा उन पर। उन्हें यह तो मालूम ही था कि मैं सोशलिस्ट पार्टी से सम्बन्ध रखता हूँ—अतः, अपनी प्रतिक्रिया बताने से भला कैसे चूकते? कितने होशियार हैं ये लोग—तभी तो इतने दिनों तक हम पर राज किया और अब, जब राज चला गया तो ऐसी दोस्ती गाढ़ी करना चाहते हैं कि इस देश से फायदा उठाते रहें। भोंड़ी राजनीति को इन्होंने सूक्ष्म कला बना दिया है!

जब राजभवन में पहुँचा, देखा मेरी प्रतीक्षा हो रही है। शीघ्र ही मैं दाखिल किया गया और अब मैं राजेन्द्र बाबू के सामने हूँ। उसी प्रेम से मिले और यात्रा का विवरण पूछने लगे! पाँच ही मिनट का तो समय मिला और इतनी-सी बातें करनी हैं! मैं जल्दी-जल्दी संक्षेप में कहना चाह रहा हूँ और वह खोद-खोद कर पूछ रहे हैं। अपनी घड़ी देखी पाँच मिनट तो पूरे हो चुके; उस कक्ष की घड़ी की ओर नज़र उठाई। श्रद्धेय बाबू ताड़ गये। हँस कर बताया, मैं आज का आख़िरी मुलाकाती हूँ, अतः निश्चिन्तता से बातें कर सकता हूँ। फिर तो बड़ी देर तक बातें हुईं। बहुत दिन हुए, बाबू विलायत गये थे, यूरोप की भी यात्रा की थी। उनके प्रश्नों से ऐसा लगता था; मानो पुरानी बातों से नई बातों का मिलान कर रहे हों। साधारण अँगरेज़ों की कार्यपटुता, समय-परता और ईमानदारी के वे भी कायल थे और जब पेरिस के टैक्सी ड्राइवरों की बात आई, हँस कर बोले—इहे दिल्ली के ताँगावालन के ऐसन, नया लोग के मूँडिये लेस!

लंदन के हिन्दी-केन्द्र की स्थापना पर उन्होंने प्रसन्नता प्रगट की और उसकी वृद्धि और विकास के लिए शुभकांक्षा भी। उसके लिए कुछ उचित सुझाव भी दिये।

टंडन जी दिल्ली में ही हैं, यह जानकर उनसे मिला—वही वात्सल्य, वही निष्कपट स्नेह! जब तक गन्ने का रस एक ग्लास नहीं पिलाया, हटने नहीं दिया। हिन्दी-केन्द्र की स्थापना पर उन्हें भी प्रसन्नता हुई और उसके सम्बन्ध में अपनी सहायता का भी आश्वासन दिया!

मित्रों की राय थी, मैं दो-चार दिन दिल्ली ठहरूँ। किन्तु, जैसे पटना पुकार रहा हो, बेनीपुर पुकार रहा हो। फिर दैनिक "जनता" में विलम्ब हो रहा है, यह भी चिन्ता। जयप्रकाश जी ने मिलने के समय सबसे पहले यही पूछा—आप "जनता" कब से निकाल रहे हैं। अतः शाम को जनता-एक्सप्रेस से सभी साथियों के साथ रवाना!

पैरों में पंख बाँधकर!—हाँ, पिछले छः सप्ताह पैरों में पंख बँधे रहे। यहाँ से वहाँ, वहाँ से यहाँ। जैसे उड़ रहे हों—फुर्र-फुर्र। कहीं विश्राम नहीं, कहीं आराम नहीं! नया आकाश, नई दुनिया। नये-नये दृश्य; नये-नये अनुभव। लगता रहा, जैसे किसी अद्भुत स्थान में बैठकर कोई अद्भुत सिनेमा देख रहा होऊँ—तीव्रतम वेग से रील पर रील बदल रहे हों; एक को देखने से तृप्ति भी नहीं हुई कि दूसरी रील शुरू हो गई—सोचने-समझने तक का मौक़ा नहीं। बस, देखे जाइये, देखे जाइये!

किन्तु अब जमीन पर हूँ—अपनी चिर-परिचित ज़मीन पर! वही काली मिट्टी, वे ही काले मकान, वे ही काले लोग! ये सब अपने हैं, इसलिये प्यारे हैं; इन्हीं के बीच रहना है, अतः उस सुख-स्वप्न को भुला ही देना होगा! थर्ड क्लास के इस डब्बे में एक पर एक लोग ठसाठस भरते जा रहे हैं! इधर सामानों का रेलपेल; उधर बीड़ी के धुएँ का

अम्बार । जितने लोग, उतनी बात ! हर आदमी बोल रहा है, जैसे बोलना हमारे ही हिस्से पड़ा है और जानें फिर कल बोलने का मौक़ा मिले या नहीं ?

उफ़, हमें अपने देश को बनाना है, एक नया देश बनाना है, उसमें एक नया समाज बनाना है। एक ऐसा समाज, जिसका हर पहलू सुखी हो, सम्पन्न हो, सबल हो, सुसभ्य ! उसी समाज का सपना कल दिल्ली में उन हज़ारों आदमियों की आँखों में देखा, जो दूर-दूर से पैदल चल कर उस जुलूस में शामिल होने आये थे। मेरे पैरों में पंख बँधे थे, उनकी कल्पना में पंख लगे थे। पैरों के पंख झड़ सकते हैं, कल्पना के पंख न झड़े हैं, न झाड़े जा सकते हैं ! वह नया समाज बन कर रहेगा, बन कर रहेगा !


Reuterphoto